आत्मविश्वासी बनो !

लेखक

गन्धर्व

भारती भाषा प्रकाशन, दिल्ली-३२

प्रकाशक
नारायणदत्त सहगल एण्ड सन्ज, दिल्ली

प्रमुख वितरक :
भारती भाषा प्रकाशन
५१८/६ बी, विश्वास नगर
शाहदरा, दिल्ली-३२

तृतीय संस्करण · १९७५

मूल्य : १२ रुपये

मुद्रक
हरिहर प्रेस
चावडी बाजार, दिल्ली

देश के समुदाए को,
जिसके विश्वास, निष्ठा और
सहयोग पर भारत का
भविष्य निर्भर है ।

विषय सूची

प्राक्कथन

आत्मविश्वास महान शक्ति है। अपने पर अटल विश्वास वह दैवो बल है, जो पहाड़ों को भी पथ देने पर बाध्य कर देता है। आधुनिक मनोविज्ञान के विशेषज्ञों का कथन है कि आत्म-विश्वास का अवलम्बन लेकर अलौकिक पराक्रम का परिचय दिया जा सकता है और दुःसाध्य कार्यों को भा साध्य बनाया जा सकता है। जोवन में सफलता के लिए तो आत्मविश्वास महा-मंत्र का स्थान रखता है।

प्रस्तुत पुस्तक में उसी शक्ति को महिमा बतलाई गई है, और उन सिद्धांतो पर प्रकाश डाला गया है, जिन्हें यदि अपना मार्ग-दर्शक बनाया जाए, तो कोई भी व्यक्ति, चाहे वह कितना हो दीन, हीन और दरिद्र क्यों न हो, आत्मविश्वासी वन सकता है, और हारे हुए विश्वास को भी पुनर्जीवित कर सकता है।

इस विशुद्ध वैज्ञानिक और व्यावहारिक विवेचन को मैंने अतीत और वर्तमान काल के महापुरुषों और अन्य सफल व्यक्तियों की जीवन सम्बन्धी घटनाओं के उल्लेख तथा अगणित वाह्य उदा-हरणों के अतिरिक्त स्वयं अपने देश और समाज की नित्य गति-विधियों के विवरण में सरलबोध और रोचक वनाने का भरसक प्रयत्न किया है। सामाजिक उदाहरण भी उसी प्रकार सत्य पर आधारित हैं, जिस तरह कि राजनीतिक क्षेत्र और वाह्य दुनिया की एतिहासिक घटनाएँ। परन्तु उनका उल्लेख करते समय

सम्बद्ध व्यक्तियों के नाम न 'लेकर एक सज्जन को जानता हूँ' अथवा 'एक मित्र हैं' आदि वाक्यों का सहारा लिया गया है। कारण हमारे समाज मे अभी तक अपने को प्रकट करने मे सकोच अनुभव किया जाता है, और बहुधा लोग अपनी अनुभूतियों में दूसरो को भागीदार बनाना पसन्द नही करते।

कुछ भी हो, मैंने पुस्तक को रोचक, सरल और उपयोगी बनाने में कोई कसर उठा नही रखी, और इस प्रयास में कहाँ तक सफल हुआ हूँ, इसका निर्णय आप पाठकों पर छोडता हूँ। इतनी बात अवश्य पूरे विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि इस पुस्तक मे प्रस्तुत मनोवैज्ञानिक समस्याओ में ऐसी कोई भी जटिलता नही है, जो साधारण साक्षर व्यक्तियो की समझ से बाहर हो। इसलिए यह पुस्तक गूढ़ मनोविज्ञान की न हो कर व्यावहारिक जीवन से सम्बन्धित साधारण जानकारी की पुस्तक है, जिसका अध्ययन प्रत्येक व्यक्ति के लिए नितांत रोचक, ज्ञानवर्द्धक और लाभदायक सिद्ध होगा।

भारत एक जनतंत्रीय राष्ट्र है, और जनतत्र की रक्षा और विकास के लिए व्यक्तिगत सुधार और उन्नति परमावश्यक हैं। सच तो यह है, कि जनतत्र का आधार ही व्यक्ति के उत्कर्ष पर है। यदि व्यक्ति आगे बढ़ता है, तो जनतंत्र का कुछ अर्थ भी है, अन्यथा नही। इस लिए एक लेखक के नाते यह मेरी प्रबल इच्छा है कि स्वतंत्र भारत का प्रत्येक नागरिक अपनी वास्तविकता से परिचित हो, तथा अपने बाहुबल पर विश्वास करते हुए स्वयं अपने पैरो पर खडे होने का उद्योग करे। इस पुस्तक के अध्ययन से यदि एक भी भारतीय अपने पर भरोसा करके अपने वर्तमान और भविष्य को उज्जवल बनाने पर कटिबद्ध हो जाए, तो मैं समझूंगा कि मेरा परिश्रम व्यर्थ नही गया।

—गंदर्व

वह शक्ति जो पहाड़ों को उखाड़ फैंकती है!

एक शक्ति है, जो पहाड़ों को उखाड़ फेंकती है। उसका नाम है आत्मविश्वास। अपने पर पूर्ण विश्वास वह महामत्र है, जिस की सहायता से अजेय दुर्ग जीते जा सकते है, दुर्गम जंगलों और मरुभूमियों को पार किया जा सकता है, और दुर्लभ गडे धन का पता लगाया जा सकता है।

जो मनुष्य जीवन क्षेत्र में इस विश्वास के साथ प्रवेश करता है कि सफलता उसकी है, और विजय-वैभव उसका जन्मसिद्ध अधिकार है, वह सफल हो कर ही रहता है। कोई कठिनाई, कोई विषमता उसके मार्ग मे वाधक नही हो सकती। आत्म-विश्वास के बल-बूते पर वह हर मुश्किल पर काबू पाता है, और अपने अभीष्ट लक्ष्य पर पहुँच कर ही दम लेता है! उसके सब स्वप्न—सुहावने स्वप्न—यथार्थ में परिणत हो कर ही रहते हैं।

"मैं इंगलैंड का प्रधानमंत्री बनना चाहता हूँ" लार्ड मलवर्न के पूछने पर इस महत्वाकांक्षा की अभिव्यक्ति जिस नवयुवक ने की, उसका जन्म एक मध्यम वर्गीय यहूदी परिवार में हुआ था। वह किसी उच्च विश्वविद्यालय मे पदवी-प्राप्त नही था। उसके सहपाठी उसे केवल इस लिए घृणा की दृष्टि से देखते थे कि वह उनके निकट विदेशी और यहूदी था।

जब वह जीवन क्षेत्र में प्रविष्ट हुआ, तो पहले ही पग पर उसने ठोकर खाई। वह व्यापार में असफल होकर देनदार हो गया। उसने राजनीति में स्थान बनाना चाहा, तो पग-पग पर उसका विरोध किया गया। वह पहली बार ससत्सदस्य बनने में केवल इस लिए असफल रहा कि डेढ सौ वर्ष पूर्व के इंगलैंड में किसी यहूदी को इस सम्मान का पात्र नही समझा जाता था। परन्तु इन विफलताओ से उसके दृढ़ कदम नही डगमगाए। वह पूर्ववत इंगलैंड का प्रधान मत्री बनने का स्वप्न देखता रहा।

लार्ड मल्वर्न ने उसे समझाया कि वह अपने इन अपरिपक्व विचारों का परित्याग कर दे। परन्तु वह न तो अपने स्वप्न को अविचार समझता था और न उसे त्यागने को ही तैयार हुआ। उसे अपने पर असीम विश्वास था। वह समझता था कि इंगलैंड का गौरव और उसका प्रधानमत्री पद पर आसीन होना—इन दोनों बातो में अटूट सम्बन्ध है इसलिए वह संघर्ष के मार्ग से विमुख नही हुआ। और अंततोगत्वा, घोर विरोध के बावजूद, वह संसत्सदस्य बनने में सफल हो ही गया। परन्तु विरोधीगण उसे नीचा दिखाने की कुचेष्टाओ मे सलग्न रहे। जब वह पहली बार संसद में बोलने के लिए खड़ा हुआ, तो उसके भाषण में बार-बार विघ्न डाला गया। उसे विरक्त करने के लिए उस पर व्यंग-बाण चलाए गए। आखिर उसे विवश होकर मौन होना पड़ा। परन्तु फिर भी उसने साहस नही हारा, पराजय स्वीकार नही की। उसने विपक्षियों को सम्बोधित कर कहा—"अब तो मैं बैठ जाता हूँ। परन्तु वह समय आएगा जब आप मेरा भाषण सुनने पर बाध्य होंगे।" और इतिहास साक्षी है कि वह समय आकर रहा। वही विदेशी और 'लुटेरा यहूदी', इंगलैंड के सामंतों और सर्वसाधारण को यह विश्वास दिलाने में सफल हो गया कि वह सच्चा देशभक्त है, और प्रधानमत्री-पद का भारी बोझ

उठाने के योग्य उससे बढ़ कर और कोई राजनीतिज्ञ नही है। उस आत्मविश्वासी राजपुरुष का नाम था बैंझमन् डिज्राइली।

डिज्राइली इगलैंड का प्रधान मंत्री बन कर रहा। और उसे विदेशी और लुटेरा कहकर अपमानित करने वाली अंग्रेज जाति उस का नेतृत्व स्वीकार करने पर बाध्य हुई। यह सब क्यो हुआ ? केवल इस लिए कि डिज्राइली आत्मविश्वासी था। उस के जीवन में निराशा के क्षण भी आए। उसे कई वार पराजय का मुंह भी देखना पड़ा। उसके विरोधियों ने उसके विरुद्ध जातीय पक्षांधता का अस्त्र भी प्रयुक्त किया। परन्तु वेंजमन् ने इन कठिनायो को लेशमात्र भी महत्व न दिया।

वह हताश न हुआ, बल्कि हर सफलता पर वह नई उमंग, नए उत्साह और नए सकल्प के साथ सफलता-लक्ष्य तक पहुँचने के प्रयास में जुटा रहा। उसे अपने बाहुबल पर भरोसा था। उस का अटल विश्वास था कि स्रष्टा ने उसे इगलंड का प्रधान मन्त्री पद ग्रहण करने के लिए ही ससार मे भेजा है। इस आत्मविश्वास ने सदैव उसका साथ दिया, उसका साहस बढाया और उसके कर्मोत्साह और सहनशीलता की वृद्धि की। इसलिए वह अपने जीवन लक्ष्य तक पहूंचने में सफल हुआ।

आप भी अपने गण्तव्य पर पहुँच सकते है। आपका स्वप्न भी वास्तव का रूप धारण कर सकता है। आप भी महानता, प्रसिद्धि और धन-वैभव प्राप्त कर सकते है। वशर्ते कि बैंजमन् की तरह आपको भी अपने पर पूर्ण विश्वास हो, और आप भी स्वय को महत्ता का अधिकारी समझते हो। किसी निर्धन कृपक के परिवार मे जन्म लेने के वावजूद आपको देश का राष्ट्रपति अथवा प्रधान मत्री बनने की उत्कठा ने व्याकुल कर रखा हो, और किसी स्वीकृत विश्वविद्यालय से पदवी-प्राप्त न होने के वावजूद आप केवल व्यक्तिगत अध्ययन से ज्ञान व साहित्य के

जगत मे सूर्य सदृश चमकने का सकल्प किए हों । वेंजमन् की तरह आपको भी यकीन हो कि कोई कठिनाई आपको अपने ध्येय तक पहूँचने से रोक नही सकती, और यह कि शत्रु भी अतत: आप का नेतृत्व और श्रेष्ठता स्वीकार करने पर वाध्य हो जाएँगे।

वास्तविकता यह है कि आत्मविश्वास मनुष्य को अमूल्य सम्पत्ति है। इस पूजी को साथ लेकर जो मनुष्य ससार रूपी वाजार में अपना स्थान वनाने के लिए निकलता है, उसे कोई विचलित नही कर सकता, उसे कोई पराभूत नहीं कर सकता। उसे सफलता के मन्दिर मे प्रवेश करने से कोई नही रोक सकता। वस्तुत: आत्मा मे अद्भुत शक्ति है । आत्मविश्वास मात्र से जीवन में शक्ति-स्फूर्ति का सचार होता है। आत्मविश्वास के चमत्कार से व्यक्तित्व चमक उठता है और मनुष्य मे विलक्षण क्षमता का प्रादुर्भाव होता है। आत्मविश्वासी पुरुष राज-सत्ता प्राप्त करना चाहे तो स्वर्ण-मुकुट उसके चरणो मे भेंट किया जाता है, और देश व राष्ट्र के नेतृत्व की बागडोर उसके हाथ में थाम दी जाती है। यदि वह धनोपलब्धि का अभिलाशी हो, तो मणि-मुक्ता उस पर निछावर किए जाते हैं । और यदि वह ज्ञान-विज्ञान का आराधक हो, तो उसे विश्व के विद्या-परिषद में आसन दिया जाता है । लिंकन्, लेनिन, स्टालिन्, सनयात सेन' मुस्तफा कमाल, हिटलर, मसोलिनी, माओत्सि तुग, नासिर, टीटो, सुकार्नो, होचीमिन्ह, लार्ड वीयर ब्रुक और रॉक फेलर—इन में से किसी के पास भी न तो धन था और न उत्तम कुल की प्रतिष्ठा ही। ये किसी स्वीकृत विश्व-विद्यालय के सनातक भी नही थे। इनमें एक कारीगर का वेटा था, तो दूसरा किसी गरीव किसान या मजदूर का सपूत। किसी एक की परिस्थियाँ भी अनुकूल नही थी । यदि आप इन

जीवनियों का अध्ययल करे, तो आप पर प्रकट होगा कि आरम्भ में इन में से किसी की भी अवस्था आप से बेहतर नहीं थी। यदि आप किसी किसान या मजदूर के बेटे हैं, तो इनके माता-पिता के माथे पर भी कुलीनता का तिलक नही लगा था। आप उच्च शिक्षा प्राप्त नही कर सके, तो इन्हे भी उच्च शिक्षा प्राप्ति की सुविधाये नही मिली थी। आप की तरह इन्हे भी बालावस्था मे पाठशाला को तिलांजली देनी पड़ी थी। परन्तु इन सब बातो के बावजूद वे सफल होकर रहे, क्योकि उन्हें अपने पर, अपनी योग्यता और सकल्प-शक्ति पर, अटल विश्वास था। वे जानते थे कि वे अपने प्रयत्नों से कठिनाइओ पर काबू पा सकते है, अपना मार्ग बना सकते है,और अपने लक्ष्य तक पहुँच सकते है।

वे स्वयं को किसी से हीनतर नही समझते थे। वे केवल बातों के ही धनी नही थे, बल्कि जिस सिद्धांत, विचार या आदर्श के प्रति उन्हे निष्ठा थी, उसे कार्य रूप में परिणत करने का प्रयास भी वे करते थे। इस लिए वे अपने साथियों से बाजी ले गए। फिर आप क्यो इस महान शक्ति स्रोत से काम न ले? आप भी स्वयँ को उच्चतम पद का अधिकारी क्यों न समझे, और अपने बाहुबल के चमत्कार पर विश्वास करते हुए कर्म मार्ग पर अग्रसर होकर सर्वोच्च पद क्यों प्राप्त न करे?

आत्मयिश्वास और सफलता में कारण कार्य का सम्बन्ध है। आत्मवाश्विास के बिना सफलता की कल्पना भी नही की जा सकती। यह विश्वास कि मैं कर सकता हूँ, पहाड़ो को पथ देने पर बाध्य कर देता है। और यह निश्चय कि सफलना मेरा जन्म-सिद्ध अधिकार है, दुनिया की कोई शक्ति मुझे उससे वचित नही रख सकती, मानव का उत्थान करता है, उसे गति और कर्मशीलता प्रदान करता है, निभर्य बनाता है, और उसके हृदय में आशा-दीप को सदा प्रज्जवलित रखता है। इस प्रकार उसकी

सफलता की सम्भावनाएँ उज्जवल ही नही होतीं, वल्कि सफलता अवश्यम्भावी हो जाती है.

आत्मविश्वासी पुरुप जव किसी कार्य को हाथ लगाता अथवा किसी अभियान का प्रारम्भ करता है, तो वह अपने मन व मस्तिष्क को असफलता सम्वंधी मिथ्या धारणाओं का वसेरा नही वनाता। वह स्वय को सदैव विजयी ही देखता है। सफलता और महत्ता के सिवा उसे और किसी भी वात से रुचि नही होती।

दिसम्वर, ५० में अमरीका की आठवी सेना कोरिया के रणक्षेत्र मे विपदग्रस्त थी। हिमपात और शीत की अविकता से सेनानियों का साहस टूट चुका था। वे पीछे हटने की योजनाएँ वनाने मे संलग्न थे। इसी वीच अमरीका की फ़ौज के नए सेनाधपति जनरल रिजवे व्रिगेट चौकी का निरीक्षण करने के लिए आए। सेनाधिकारियों ने उनका स्वागत करने के पश्चात तुरन्त ही वह योजना उनके सामने प्रस्तुत कर दी, जो संगठित रूप से पीछे हटने के निमित्त वनाई गई थी। परन्तु जनरल रिजवे ने उस पर एक दृष्टि डालने तक का कष्ट न किया, और कठोर स्वर मे कहा, "मुझे पीछे हटने की योजनाओ से कोई दिलचस्पी नही है। हा अगर आगे वढ़ने का कोई नक्शा हो, तो मैं उसपर विचार कर सकता हूँ। मैं आप लोगो की हर तरह सहायता करने को तैयार हूँ। लेकिन इस वात को अच्छी तरह समझ लीजिए कि मुझे केवल एक ही वात से दिलचस्पी है, और वह है शत्रु पर आक्रमण और अग्रयान !" जनरल रिजवे के इन शब्दों ने और उसके पीछे जो आत्मविश्वास क्रियाशील था, उसने सजीवनी का काम किया। सेनानायकों का उत्साह पुनर्जीवित हो उठा और कुछ ही सप्ताहों मे ये समाचार आने लगे कि आठवी फौज पुनः अग्रयान कर रही है।

जीवन सग्राम मे भी विजय उन्ही के भाग्य मे होती है, जो हथि-

यारडाल देने की बजाए दो-दो हाथ करने पर तत्पर रहते हैं, जो कठिनाइयों और विपत्तियों से विचलित नही होते, जो पराजय की योजनाएँ नही बनाते जिनका आदर्श और लक्ष्य विजय और केवल विजय होता है। जो आँधी और तूफान मे 'बढे चलो' का नारा लगाते है जो विरोधियों का जमघट देख कर पलायन-मार्ग नही ढूढ़ते, जिनका लक्ष्य हर अवस्था मे और हर मूल्य पर सफलता है, वह सफल होकर ही रहते है।

जिस मनुष्य को अपनी योग्यता पर भरोसा होता है, वह किसी के अवलम्बन, किसी के पक्ष-समर्थन अथवा किसी के सहयोग की अपेक्षा विरले ही करते है। वह अकेला दलों पर भारी होता है। वह प्रतिस्पर्द्धा से नही डरता, वलिक उसे अपने लिए हितकर समझता है। इसलिए नही कि उसे कठिनाइयों की सृष्टि करने की सनक सवार रहती है, वलिक इसलिए कि प्रतियोगिता मे उसे अपनी योग्यता का प्रदर्शन करने का अधिक अवसर मिलता है।

तेल-वाहक जहाजों के वहुत बडे व्यापारी सुक्रात ओइंसस् का नाम विश्व-विख्यात है। उसने मध्यपूर्व से अन्य देशों को तेल पहुँचाने के व्यवसाए पर अधिकार कर लिया, और अमरीका और यूरोप की अनेक कम्पनियों को आर्थिक हानि सहन करने पर वाध्य कर दिया। ओईसस् किसी धनवान व्यापारी के घर मे पैदा नही हुआ था। समरना के एक अज्ञात और गरीब घराने में उसका जन्म हुआ। उसका वाप समरना की गलियो मे देशीय दस्तकारी की चीजे वेचा करता था, और माँ धनिको के घरों मे वर्तन माँझा करती थी। परन्तु ओईसस् आज करोड़पति है। उसने तेल-वाहक जहाजो के व्यापार मे इतनी अधिक उन्नति की है कि यूरोप की उन कम्पनियो को भी मैदान छोड़ देना पड़ा है जिन का सरक्षण कुछ वड़े राष्ट्रों की सरकारे करती है।

ब्रिटेन के प्रसिद्ध पत्रकार, लेखक, आलोचक और रातीतिज्ञ सर व्युरली वैवस्टर उन लोगो मे से हैं, जो अपने भाग्य के स्वयं निर्माता होते है। मि० वैवस्टर कैनेडा मे पैदा हुए थे। प्रथम महायुद्ध के वाद वह लंडन में भाग्यपरीक्षा करना चाहते थे। वह पत्रकार वनने के इच्छुक थे। और उनका मत था कि जिन लोगों को अपने वाहुवल पर विश्वास हो, जो स्वय अपना मार्ग प्रशस्त करने पर उद्यत हो, उनके लिए ब्रिटेन के पत्रकारिता-जगत में अपने भविष्य को उज्ज्वल वनाने के अवसर दुर्लभ नहीं हैं। अत: मि० वैक्स्टर ने समाचारपत्रों के प्रसिद्ध प्रकाशक लार्ड वीवर ब्रुक से समुद्री तार द्वारा अनुरोध किया कि उन्हें काम करने का मौका दिया जाए। उत्तर मे लार्ड वीवर ब्रुक ने लिखा —"तुम अपनी जिम्मेदारी पर आ सकते हो।" निस्सदेह जवाव उत्साह वर्द्धक नही था। कैनेडा से अपनी जिम्मेदारी पर लडन पहुँचना, जव कि नौकरी की जमानत भी नहीं दी गई थी, कठिनाइयों और संकटो को आमत्रित करने के समान था। परन्तु मि० वैक्स्टर को विश्वास था कि वह ऐसी सब मुश्किलो पर कावू पा लेगे। इस लिए उन्होने लंडन की यात्रा करने में विलम्ब न किया।

उन्हे पहले पहल एक समाचार पत्र मे संवाददाता के पद पर काम करने का अवसर दिया गया। परन्तु दस वर्ष वाद वह एक ऐसे दैनिक पत्र के प्रधान सम्पादक वन गए जिसकी प्रकाशन संख्या वीस लाख से भी अधिक थी। उसके वाद वह संसत्सदस्य भी वने, सर की उपाधी भी उन्होंने प्राप्त की, और देश के प्रमुख राजनीतिज्ञों में उनकी गणना होने लगी। कहा जाता है कि ब्रिटेन के दो प्रधान मत्री—मि० चैम्वरलेन और मि० एटली—कठिन समय मे उनसे परामर्श किया करते थे। मि० चर्चिल भी उनकी मत्रणा को आदर और सम्मान की दृष्टि से देखते थे।

मि० वैक्स्टर की यह ईर्ष्या-योग्य सफलता उनके आत्म

विश्वास की देन है। यदि उन्हे अपने आत्मबल और योग्यता पर विश्वास न होता, अर्थात उन्हे यह यकीन न होता कि वह लडन जाकर न केवल नौकरी ही प्राप्त कर सकेंगे, बल्कि मान-प्रतिष्ठा और धन-समृद्धि प्राप्ति में भी सफल होगे, तो वह शायद ही अपनी जन्मभूमि को छोडने पर तैयार होते, और शायद कैनाडा मे ही अपने ढब के किसी काम के लिए प्रयत्न करते।

आत्मविश्वास वस्तुत मनुष्य को दृढता-धैर्य की मूर्ति बना देता है। जिस ममुष्य को अपनी स्थिति और विचारो की सत्यता का विश्वास होता है, और जो समझता है कि वह कठिन काम को भी पूरा कर दिखाने का सामर्थ्य रखता है, वह अपने मंतव्य की सत्यता को सिद्ध करने के लिए बडे से बड़ा खतरा मोल लेने से भी नही डरता। उसे न तो मिथ्या धारणाओ के प्रेत भयभीत कर सकते हैं और न शकाओ के भूत डरा सकते है। उसके मार्ग में मुसीबतों के हिमालय खडे हों, तो भी वह कदम पीछे नही हटाता, बल्कि पहाडो को भी पथ देने पर बाध्य कर देता है। जब वह किसी अज्ञात भूखड का पता लगाने पर कटिबद्ध होता है, तो वह महासागर के असीम विस्तार को देख कर सदेह और शका के सागर मे डुब्कियाँ नही खाता, बल्कि कोलम्ब्रस की तरह प्रति दिन यही सोचता है—आज भी लक्ष्य की ओर बढे। हार और असफलता की तो वह कल्पना भी नही करता। और यदि किसी समय उसे असफलता का मुँह देखना पड़ जाए, तो भी वह साहस नही हारता, निराश नही होता, निष्क्रय हो कर बैठ जाने पर तैयार नहीं होता। वह उस समय तक सघर्ष जारी रखता है, जब तक कि अभीष्ट वस्तु को प्राप्त नहीं कर लेता।

आज हम जिन आविष्कारो और ईजादो से लाभन्वित हो रहे है, वे सब उन वैज्ञानिकों और आविष्कारको की देन है,

जिन्हे आने पर और अपने आविष्कारों की सत्यता पर अटल विश्वास था। उन्हे अपनी सोच की सचाई का यकीन न होता, तो वे उसे कार्य रूप में सिद्ध करने की सिरदर्दी कभी मोल न लेते। और यदि वे अनुसधान के कठिन मार्ग पर चलते हुए अविश्वास के भ्रमजाल मे उलझ जाते, तो शायद ही अपने लक्ष्य तक पहुँच पाते, और शायद ही मनुष्य मात्र के हितचिन्तक और देश व जाति के उपकारक कहलाने का सौभाग्य प्राप्त करते।

वैज्ञानिक, आविष्कारक और पर्यटक कष्टो की ज्वाला में क्यो कूदते है? प्राण जैसी प्रिय वस्तु को जोखिम में क्यो डालते हैं? भोग-विलास के जीवन पर दु ख और विपत्ति के जीने को प्राथमिकता क्यो देते है? केवल इसलिए कि उन्हे अपने अपूर्व विचार अथवा धारणा की सत्यता पर पूर्ण विश्वास होता है। और वे उसकी सचाई को साबित किए बिना चैन से नही बैठ सकते।

प्रथम महायुद्ध के समय ब्रिटिश वायुसेना के अधिकारी यह देखकर अत्यन्त चिंतित हो उठे कि बहुधा विमान उड़ान करते-करते सहसा चक्कर खाकर धरती की ओर गिरना शुरू कर देते है, और जब वैज्ञानिक उन पर काबू पाने की चेष्टा करते, तो उसका परिणाम प्रायः विनाश के रूप मे निकलता। आखिर सरकार ने इस चिंताजनक परिस्थिति का हल निकालने के लिए तरुण वैज्ञानिक फ्रैड्रिकलिडेमन् को नियुक्त किया। इसी वैज्ञानिक को बाद मे उसकी सेवाओ के पुरस्कार स्वरूप लार्ड चिरोल की उपाधी दी गई।

लिडेमन् ने गहन चिंतन के बाद यह निष्कर्ष निकाला कि जिस समय वायुयान चक्कर खा कर नीचे की ओर गिरना शुरू करे, तो वैज्ञानिक को स्वाभाविक प्रवृत्ति के अनुसार क्रिया नही करनी चाहिए। अर्थात यदि विमान का अगला भाग धरती की

ओर हो गया हो, तो वैज्ञानिक को उसे ऊपर उठाने मे शक्ति व्यय करने की वजाए विमान को पूर्ण वेग से नीचे ले जाने की चेष्टा करनी चाहिए। इससे विमान नीचे गिरने के स्थान पर सीधा सामने की ओर वढना शुरू कर देगा। लिडेमन ने इस सिद्धांत का आविष्कार तो कर लिया परन्तु अब उसका व्यावहारिक परीक्षण कैसे किया जाय ? बिना परीक्षण विमान चालकों को उसे मान्यता देने पर बाध्य नही किया जा सकता था। प्रकट मे यह बड़ा ही विचित्र सिद्धांत था। जो विमान पहले ही धरती की ओर गिर रहा हो, उसे और नीचे ले जाने से वह विनाश से कैसे बच सकता है, इस अनूठे सिद्धात को कौन स्वीकार करता ? आखिर मि० लिडेमन् ने स्वयं विमान चलाने का प्रशिक्षण लेने का प्रस्ताव किया, ताकि अपने सिद्धात की सत्यता का प्रत्यक्ष प्रमाण दे सके। और जब कुछ महीनों के बाद वह विमान चलाना सीख गए, तो उन्होने अपने अनोखे विचार को कार्यन्वित करने का बीडा उठाया।

देखते ही देखते वह विमान को १८ हजार फुट की ऊँचाई पर ले गये। फिर तुरन्त ही विमान ने चक्कर खाकर नीचे गिरना शुरू कर दिया। तभी मि० लिडेमन ने उसकी गति ओर भी तीव्र कर दी। लगा कि बस अब क्षण भर मे विमान धरती से टकरा कर नष्ट हो जायगा। परन्तु लोग यह देख कर चकित रह गए कि विमान ने एकाएक सीधा होकर आगे की ओर उड़ना शुरु कर दिया। इस प्रकार मि० लिडेमन की सिद्धांत की यथार्थता सिद्ध हो गई। परन्तु उस वीर पुरुष ने विमान को धरती पर उतारने की बजाए फिर एक बार आकाशोन्मुख कर दिया। ऊचाई पर पहुँच कर विमान ने फिर चक्कर खाया, और लिडेमन ने पुनः अपनी योजना के अनुसार कार्य कर उसे दूसरी बार भी सकट से बचा लिया। उनके

बाद जब वह विमान को सकुशल धरती पर ले आए तो मैदान में उपस्थित जनो ने करतल-ध्वनि से उनका स्वागत किया। लोगों ने पूछा कि आपने एक बार सफलता प्राप्त कर लेने के बाद फिर दूसरी बार खतरा क्यों मोल लिया, तो लिंडेमन ने उत्तर दिया "मैंने सोचा कि मुमकिन है कोई यह कहे कि पहली बार विमान शायद संयोग से बच निकला, इसलिए परीक्षण को दुहराना आवश्यक था।"

मि० लिंडेमन की तरह अन्य वैज्ञानिक और आविष्कार भी अपनी स्थापना की पुष्टि के लिए प्राणों की बाज़ी लगाने में संकोच नही करते। उनका 'पथदर्शक तारा' उनका आत्मविश्वास होता है। उस की सहायता से वे आश्चर्यजनक कार्य सम्पन्न करते हैं, और अपनी रचनाओं को पूर्णता के स्तर पर पहुँचाने में सफलता प्राप्त करते है।

वैज्ञानिकों और आविष्कारको की तरह राजनीतिज्ञ भी अपने देश की स्वतन्त्रता और मान प्रतिष्ठा के लिए संकट के समय केवल इस लिए छाती तान कर खडे हो जाते है कि उन्हें अपने आदर्श के न्यायोचित होने का विश्वास होता है। उन्हें अपनी इस योग्यता पर भरोसा है कि इस समय केवल वही हैं, जो देश की नाव को सुरक्षा-तट तक ले जा सकते है।

राजनीतिक नेताओं का आत्मविश्वास केवल उन्ही का अंतिम श्वास तक लडने की प्ररणा नही देता, बल्कि समूचे राष्ट्र को आत्मविश्वासी बना कर उसे शत्रु का मुँह मोड़ देने के लिए तत्पर कर देता है। तनिक द्वितीय महायुद्ध के प्रारम्भिक दिनों की कल्पना कीजिए। हिटलर की विजयी सेनाएँ सर्वत्र अग्रयान कर रही थी। जर्मन वायुसेना के विध्वसक विमान इंग्लैंड का चिन्ह तक मिटा देने के लिए भीषण बम-वर्षा कर रहे थे। ऐसे नाजुक समय पर असीम सकल्प शक्ति के मालिक चर्चिल ने

इंगलैंड का नेतृत्व-भार संभाला। उस इगलेंड का, जो युद्ध के लिए बिल्कुल तैयार नही था, जिसके पास आवश्यक युद्ध-सामग्री नही थी, आर न प्रतिरक्षा के लिए प्रर्याप्त साधन ही थे। उस इगलैंड के कितने ही लोग इतने हतोत्साहित हो चुके थे कि अन्य देशो मे जाकर वसने की योजनाएँ वनाने लगे थे।

समय का मर्म जानने वाले चर्चिल ने देश को वर्षो पहले सचेत होने और प्रतिरक्षा-बल की वृद्धि करने की मंत्ररणा दी थी। परन्तु उस समय उसकी किसी ने न सुनी, और उसे 'युद्ध-पिपासु' कह कर मौन रहने पर वाध्य कर दिया गया। परन्तु अब जव कि इगलैंड पर विपत्ति के वादल छा गए, तव उससे देश को इस महान संकट से निकालने का अनरोध किया गया, मि० चर्चिल को पहले से विश्वास था कि केवल वह ही इंगलैंड को अपमानजनक पराजय से बचा सकते है। इस लिए वह तुरन्त कार्य-क्षेत्र में कूद पड़े। वह इस दृढ-संकल्प के साथ जनता के सामने लेडो उपस्थित हुए कि वह अपने गौरवशाली द्वीप की रक्षा करेंगे, चाहे उन्हें इसका कितना ही भारी मूल्य क्यो न चुकाना पड़े। ' हम समुद्रतट पर लडेगे। हवाई अड्डो पर शत्रु से लोहा लेगे। पहाडो, मैदानो, खेतो और गलियों में दुश्मन से दो दो हाथ करेंगे। हम कभी हथियार नहीं डालेगे हम कभी हार नहीं मानेंगे।" चर्चिल के इन उत्साहवर्द्धक शब्दो ने ब्रिटिश जाति के मृत प्राय: शरीर मे मानो नए जीवन और नई आशा का सचार कर दिया। वे मि० चर्चिल के नेतृत्व में जर्मन शत्रु को मुँह तोड जवाव देने के दृढ सकल्प के साथ उठ खड़े हुए।

मि० चर्चिल ने अपने मनोवैज्ञानिक अभियान' को केवल उत्साहवर्द्धक शब्दो तक ही सीमित नही रखा, बल्कि उन्होने देश को एक नया नारा ओर एक निशान भी प्रदान किया। उनके कहने पर ही (V) अर्थात 'विजय' को राष्ट्रीय प्रतीक

बना लिया गया, ताकि जनता के मन व मस्तिष्क पर विजय की छाप पूर्ण रूप से अंकित हो जाए।

"विजय—हर कीमत पर विजय—हर प्रकार की कठिनाइयाँ और विपत्तियो के बावजूद विजय"—मि० चर्चिल के इस अटल और अजेय विश्वास ने इगलैंड के हर स्त्री-पुरुष, बाल, वृद्ध, युवा पर जादू सा कर दिया। उसके बाद इगलैंड की पराजय का प्रश्न ही नही उठता था आखिर वह दिन भी आया जब हिटलर की आसुरी शक्ति को मि० चर्चिल के नैतिक बल के आगे हथियार डालने पडे।

वर्तमान युग का एक राजनीतिक चमत्कार भारत की स्वतन्त्रता-प्रप्ति भी कुछ दिव्य व्यक्तियो के आत्मविश्वास का सुपरिणाम है। इनमे महात्मागाधी का नाम सर्वोपरि है। जिस समय गांधीजी ने राष्ट्रीय आन्दोलन के क्षेत्र मे पदार्पण किया, तब भारत के राजनीतिक नेता ब्रिटिश साम्राराज्य की वदना करने को ही अपना परम सौभाग्य समझते थे। गांधीजी के प्रभाव से राष्ट्रीय आन्दोलन ने वास्तविक रूप धारण किया। वह कुछ प्रमुख व्यक्तियो की 'भाषण प्रतियोगिता' की स्थिति से विकसित होकर सम्पूर्ण देश की बहुसख्यक जनता का जनतन्त्रात्मक स्वातन्त्र्य-सग्राम बन गया। परन्तु उस सग्राम के लिये गाधीजी ने देश को जो अस्त्र दिये, वे जितने अनूठे थे, उतने ही भारतीयो जैसी दीर्घकाल मे नि शस्त्र चली आ रही जनता के लिये उपयुक्त भी। सत्य, अहिंसा और सत्याग्रह के शांतिपूर्ण हथियारो से ब्रिटेन जैसी प्रचड शक्ति को भारत छोड़ने पर बाध्य किया जा सकता है, इस बात पर प्रारम्भ मे बहुत कम लोगों ने विश्वास किया। परन्तु उस 'लगोटी वाले बाबा' को अपने सिद्धान्तो और साधनो की शुद्धता और उपयोगिता पर अटल

विश्वास था। उसी के वल पर वह अन्य अनेक लोगों को अपना समर्थक और अनुयायी बनाने में सफल हुए। परिणामत: देश के कोने-कोने में जागृति की लहर दौड़ गई। और अन्तत. १९४७ ई० में ब्रिटिश शासन को विवश होकर भारत पर से अपनी प्रभु-सत्ता हटानी पड़ी, यद्यपि जाते-जाते भी वह भारत पर एक अंतिम प्रहार करता गया, और शतियो से अखड चले आ रहे इस देश को दो भागो मे विभाजित कर 'पाकिस्तान' नाम का एक स्थायी शत्रु भारत की छाती पर विठा गया।

परन्तु यहाँ देखने की वात केवल यह है कि यह तथाकथित 'पाकिस्तान' भी केवल एक व्यक्ति की सूझ और आत्म वल का ही परिणाम है। व्यक्ति का नाम था मुहम्मद अली जिनाह। "भारत नाम के महाद्वीप मे एक नहीं, वल्कि दो राष्ट्र है, जिन्हें अलग-अलग स्वतन्त्र देश क मिलने चाहिएँ—"जिनाह की इस स्थापना पर भारतीय नेता ही नही, वल्कि प्रारम्भ मे स्वयं ब्रिटिश सरकार भी चकित रह गई। काग्रेस के प्रमुख नेता, जिनमें केवल गाँधीजी ही अन्त तक अपने वचन पर दृढ रहे, देश विभाजन को गाय के टुकडे करने के समान वतलाते थे। परन्तु उस 'आत्मविश्वास की मूर्ति' जिनाह ने समूचे जगत को सम्बोधित कर कहा कि 'सबसे पहले जो व्यक्ति छतरी लेकर निकला होगा उस पर लोग हँसे होगे। परन्तु अब सभी लोग धूप अथवा वर्षा में छतरी लेकर चलते है, और देखने वालो को इस पर कुछ भी अचंभा नही होता।" उसका आशय यह था कि आज आप पाकिस्तान के अयुक्त और असगत होने की लाख दलीलें दे, पर यह निश्चित है कि यह 'अद्भुत देश, जिसके दो खडो के वीच डेढ हजार मील का परराष्ट्रीय क्षेत्र होगा, और नागरिको मे धर्म के सिवा और कोई भी वात सामान्य नही होगी, अस्तित्व में आएगा अवश्य। कहते हैं कि अंग्रेजों ने जिनाह को छोट

कर स्वयं मुस्लिम लीग के और किसी भी बड़े नेता को इस योजना के व्यवहार्य होने का विश्वास नही था। वे इस मांग को केवल सौदेबाजी का एक उपयोगी साधन समझते थे। परन्तु आज वही 'अकल्पनीय' देश ठोस यथार्थ के रूप में हमारे सामने विद्यमान है। और भले ही हम धर्मनिर्पेक्षता के भ्रम में पड़े रहें, पर यह तथ्य है कि अखडित भारत के मुसलमानो ने एक पृथक राष्ट्र और अभारतीय जाति होने की धारणा को अपने आचार-विचार और व्यवहार से पुष्ट और प्रमाणित कर दिया है। एक व्यक्ति के आत्मविश्वास का इतना व्यापक प्रभाव इतिहास में विरले ही दृष्टिगत होता है।

निःसदेह वास्तविक महत्ता और जीवन का सुख-आनन्द भी उन्ही लोगो के लिए है, जो सघर्ष कर सकते हैं। चेष्टा और अध्यवसाय से दासपुत्रों को मत्री, कृपको के बेटो को मुकुटधारी राजा, और सेवको की सतान को राष्ट्रों के भाग्य-निर्माता बनते देखा गया है। अविरत परिश्रम और प्रयत्न से वे लोग भी प्रसिद्धि और अमरता को प्राप्त कर सकते है, जो किसी स्वीकृत विश्व-विद्यालय से शिक्षा-सम्पन्न नही होते। परन्तु कोई व्यक्ति तब तक संघर्ष के लिए उद्यत नही होता, जब तक कि उसे इस बात का विश्वास न हो कि जिस अभियान मे वह भाग लेने जा रहा है, उसमे वह विजयी हो सकता है, और जिस महान और कठिन कार्य को पूरा करने का वह संकल्प कर रहा है उसे सम्पन्न करने की योग्यता भी वह रखता है। आप उन महापुरुषो की जीवनियों का अध्ययन करे, जिन्होने प्रतिकूल परिस्थितियो में जन्म लेने और पालितपोषित होने के बावजूद सफलता की देवी के साक्षात दर्शन किए, तो आपको ज्ञात होगा कि वे अपनी मनो कामना की सिद्धि मे केवल इसलिए सफल हुए कि वे आत्म विश्वासी थे। उन्हे उनके आत्मविश्वास ने ही संघर्ष के लिए

प्रेरित किया और आत्मविश्वास ने ही ऐसे क्षणो में उनका साहस बनाए रखा, जब उनकी सफलता की सम्भावनाएँ मंद पड़ गई। इसलिए आत्मविश्वास और सफलता को एक ही बात के दो पक्ष मानना गलत नही है।

एमर्सन कहते है कि विजय के भागी केवल वही लोग होते है, जिन्हे अपनी विजय का पूर्ण विश्वास होता है। एक मनोविज्ञान-विशेषज्ञ का कथन है कि आत्मविश्वास वह शक्ति है जो असम्भव को सम्भव बना देती है। एक प्रसिद्ध डाक्टर लिखते है "आत्मविश्वास से ऐसे घाव भी भर जाते है, जो किसी भी मरहम से अच्छे नही हो सकते।" इसमे सदेह नही कि दुनिया में कुछ लोग केवल इसलिए सफल नही होते कि उन्हें अपनी सफलता का विश्वास नही होता, और वे अपने बाहुबल पर भरोसा नही करते। वे तीक्ष्ण बुद्धि वाले होने पर भी अपनी बौद्धिक शक्तियों से केवल इसलिए काम नही ले सकते कि वे अपने को इसका अधिकारी ही नही समझते कि अपनी प्रतिभा के चमत्कार दिखाकर उन्नति करे आत्मविश्वास के अभाव से उन्हें अपना भविष्य बनाने का अवसर नही मिलता।

आप बड़े-बड़े कारखानों और कार्यालयो मे ऐसे व्यक्तियो को मामूली वेतन पर काम करते हुए देख सकते है, जो छात्रावस्था मे बड़े होशियार और तेज माने जाते थे। परन्तु वे नही चमक सके और उन्नति के सोपान पर नही चढ सके, क्योकि उन्होने कभी बुद्धिमत्ता से समुचित काम नही लिया। वे चायखाने मे बैठकर कारखाने की शीघ्रकालिक प्रगति के उत्कृष्ट सुझाव प्रस्तुत कर सकते है, परन्तु उन्हे कहिए कि यही सुझाव अपने कारखाने के व्यवस्थापक के सामने पेश करे, तो वे झट से उत्तर देगे—"हमारे व्यवस्थापक के सामने ऐसे सुझाव पेश करना सूरज को चिराग दिखाने के समान है"—या वे 'छोटा मुँह बड़ी

वात' की लोकोक्ति का हवाला देकर अपने को सही सावित करने की कोशिश करेंगे। वे स्वय सूर्य होते हुए भी अपने को दीपक समझते है, तो फिर उनकी दरिद्रता और कष्टों का प्रतिकार कैसे हो सकता है? कुछ आश्चर्य नही कि ऐसे लोग तुच्छ वेतन पर सारा जीवन व्यतीत कर देते है।

मेरे एक घनिष्ट मित्र एक राज्य विधान-सभा के सदस्य है। वह कुछ दिनों तक ससदीय सचिव भी रह चुके है। एक दिन वातों-वातों में आपने रहस्दोद्‌घाटन किया कि राज्य मत्री-मडल के एक प्रमुख सदस्य उनके समर्थन और योगदान से ही मत्री-पद प्राप्त करने मे सफल हुए है। इस पर मै यह कहे बिना न रह सका कि जव आप इतना प्रभाव और इतनी प्रतिष्टा रखते हैं कि दूसरों को मंत्री-पद दिला सकते है, तो फिर आपने स्वयं ही मंत्री वनने को इच्छा क्यों नही की, और ससदीय सचिव वने रहने पर ही सतोप क्यों कर लिया। सुन कर आपने अपनी तुच्छता का विवरण सुनाना शुरू कर दिया। मैं और मन्त्री-पद! यह मुह और मसूर की दाल! अजी साहव, इसकी तो मैं कल्पना भी नहीं कर सकता!' यह था उनके उत्तर का सार परन्तु अभी इस वार्तालाप को छः मास भी नही वीते थे कि एक दिन वह मेरे कुछ कहे विना ही कहने लगे—"आप ठीक कहते थे। मैं चाहता तो मंत्री वन सकता था। लेकिन मुझे अपनी योग्यता पर भरोसा न था। मुझे जरा भी विश्वास होता, तो शायद मैं उस मित्र से कुछ वेहतर ही मन्त्री सिद्ध होता, जिसे मन्त्री वनवाने के लिए मैने रात-दिन एक कर दिया। अफसोस! मैंने अपनी योग्यता पर विश्वास न किया। इस चूक पर मै आजीवन पछताता रहूँगा।" मेरे इस मित्र की तरह अधिकतर लोग केवल इसलिए असफल रहते है, और वाद मे पश्चाताप करते है कि उन्हे अपने पर विश्वास नही होता।

थामसग्रे अपनी विख्यात कविता मे उन मोतियों के भाग्य पर खेद प्रकट करता है, जो अपनी चमक-दमक दिखाए विना ही समुद्र के गर्भ मे पड़े रहते है, और उन फूलों के नसीव पर आँसू वहाता है, जो विना खिले ही मुरझा जाते हैं। कवि पोप भी ग्रे के स्वर मे स्वर मिला कर उन फूलो की दशा पर शोक व्यक्त करता है, जो जंगल मे खिलते है। अपना सौंदर्य और सुगधि जगल को ही अर्पित कर देते है। इसी प्रकार की भावनाओ की अभिव्यक्ति अनेक भारतीय कवियों की रचनाओ मे भी मिलती है। 'हसरत उन गुँचो पै है, जो विन खिले मुरझा गए' उर्दू कविता की एक प्रसिद्ध पंक्ति है।

जीवन मे इससे वढकर दु.ख की बात और क्या हो सकती है कि मोती अपनी चमक-दमक दिखाए विना ही लुप्त हो जाएँ, और फूल अपनी महक से किसी का मन प्रफुल्लित किए विना ही धूल मे मिल जाएँ। परन्तु इनसे भी ज्यादा दुखदायी और दयनीय स्थिति उन लोगों की है, जो सब कुछ करने की क्षमता रखते हुए भी अपने पर विश्वास नही करते। इसलिए अपनी योग्यता से न तो स्वयं लाभ उठाते है और न मानवता की कुछ सेवा ही करते है। ये दीन-हीन और दु खी लोग, जिनके चेहरे धूल से आवृत है, और जिन्हे तन ढाँपने के लिए कपड़े का एक टुकड़ा तक नसीब नही, जो वर्षो की दौड-धूप के बाद भी सुख शान्ति का मुँह नही देख सके, ये लोग सब जन्मसिद्ध क्षुद्र नही हैं। इनमे वीसियो दिव्य आत्माएँ भी है। परन्तु दरिद्रता और दुर्गती इनका पीछा नही छोड़ती। कारण वे अपनी वास्तविकता से परिचित नही है, वे स्वय को पहचान भी कैसे सकते है, जबकि उन्हें अपनी आत्मा पर भरोसा ही नही है, जबकि वे अपने बाहु-बल से काम लेने के लिए तैयार ही नही है।

भारत के प्रशसित खाद्य-मत्री स्वर्गीय श्री रफ़ीएहमद किद

वाई, जिन्होने अन्न-नियत्रण समाप्त कर गली-गली मे अनाज बिकवाया था, एक महान नेता और कुशल प्रशासक ही नही, बल्कि कई अन्य दृष्टियों से भी एक असाधारण व्यक्ति थे। उनके देहांत पर पडित नेहरू ने उन्हे निम्न शब्दो में श्रद्धांजली अर्पित की थी—"श्री किदवाई न तो जन्म से नेता थे, और न नेतृत्व उन पर ठूँसा गया। वह अपनी व्यक्तिगत साधना और सघर्ष से नेता बने" श्री किदवाई के जीवन-वृत का अध्ययन करने से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि उनकी पूँजी उनका आत्मविश्वास था। श्री किदवाई के आत्मविश्वास का इससे बढ़ कर प्रमाण और क्या होगा कि जिन दिनों में पहले-पहल पं० नेहरू ने प्रधान मंत्री-पद के भारी बोझ से अवकाश लेने की इच्छा प्रकट की, और इस पर भारत भर में चिन्ता व्याप्त हो गई, तब श्री किदनाई ने एक सार्वजनिक सभा मे भापण करते हुये कहा कि "अगर पं० नेहरू थक गये हैं और आराम करना चाहते है तो इस पर परेशान होने की क्या जरूरत है। मैं उनके स्थान पर प्रधान मंत्री-पद सभालने के लिए तैयार हू।" और श्री किदवाई के इस दावे पर समूचे भारत मे किसी एक व्यक्ति ने भी, यहाँ तक कि उनके विरोधियो ने भी, न तो प्रतिवाद कया और न इसे आत्मश्लाधा अथवा असत्य पर ही आधारित वतलाया। इससे स्पष्ट है कि भारत का विचारशील समुदाए उन्हें वस्तुतः इस सम्मान का अधिकारी और इस महान् दायित्व-भार को सहन करने के योग्य समझता था। स्पष्ट है कि श्री किदवाई की महत्ता का रहस्य उनके आत्मविश्वास मे था। और पं० नेहरू ने उनकी महानता को श्रंद्धाजली अर्पित कर वास्तव में आत्म-विश्वास के महत्व को ही स्वीकार किया।

आज के जनतत्रीय युग में नेतृत्व किसी पर शायद ही कभी ठूँसा जाता हो। साधारणत. सभी नेतागण अपने अविश्रांत

परिश्रम और निरन्तर संघर्ष के बाद ही राजनीतिक क्षितिज पर उदित होते है। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की पुण्य स्मृति भारत-वासियों के हृदय से कभी मिट नही सकती। वास्तव मे भारत को स्वतंत्रता दिलाने का श्रेय यदि किसी एक व्यक्ति को दिया जा सकता है, तो वह नेताजी बोस ही थे। उन्ही के द्वारा सगठित आज़ाद हिन्द फ़ौज ने भारत की तत्कालीन सशस्त्र वाहिनियों में भी देशभक्ति की भावना को उत्तेजित किया, जिसके फलस्वरूप उनमे ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध उठ खड़े होने की शक्ति का प्रादुर्भाव हुआ। पहले नौसेना ने, और उसके बाद वायुसेना और स्थल सेना ने भी विदेशी शासकों की भारत-विरोधी आज्ञाओ का पालन करने से इन्कार कर दिया। परिणामतः तत्कालीन ब्रिटिश प्रधान मंत्री एटली को विवश होकर घोषणा करनी पड़ी कि भारती सेनाएँ अब हमारे प्रति निष्ठ नही रही है। और हमारे लिए यह सम्भव नही कि हम भारत पर अपना आधिपत्य जमाए रखने के लिए एक नए युद्ध मे उलझ जाएँ। इसलिए हम भारत को स्वतत्रता प्रदान करने का निश्चय कर चुके है। परन्तु यह परिस्थिति जिस महान व्यक्ति के कर्मयोग से उत्पन्न हुई, उसे भारतवासियों ने स्वयं अपना नेता नही बनाया था। वह नेता बना, तो अपनी निजी वीरता, सघर्ष और बलिदान से। बर्मा के मोर्चे पर जब वह एक बार अपने कुछ साथियो सहित ब्रिटिश विमानो की बम-वर्षा मे घिर गए, एक खाई मे पड़े-पडे जनरल शाहनवाज ने उनसे अनुरोध किया कि उन्हे तुरन्त ही किसी अधिक सुरक्षित स्थान पर पहुँच जाना चाहिए, क्योकि ब्रिटिश बम बहुत निकट ही फट रहे थे। इस पर नेताजी ने हँस कर उत्तर दिया—"वह गोलो जो मेरा काम तमाम कर सकती है, अभी किसी ब्रिटिश कारखाने मे तैयार ही नहीं हुई।" और इतिहास साक्षी है कि नेताजी को ब्रिटिश सेनाओ के हाथो

कभी एक मामूली घाव भी नही लगा। वह वीरगति को प्राप्त हुए, तो रणक्षेत्र मे शत्रु की गोली वर्षा मे नही, बल्कि विमान दुर्घटना मे आग मे जलकर। नेताजी यह सब कार्य कैसे कर पाए ? कलकत्ते मे अपने मकान के गिर्द कड़े पहरे से निकल भागने से लेकर फार्मूसा मे दुर्घटनाग्रस्त होने तक उनका जीवन वृत असाधारण साहस और अकलपनीय उत्साह की कहानी मालूम पड़ती है। इस साहस और उत्साह की प्रेरणा उन्हें कहाँ से मिलती थी ? कहने की आवश्यकता नहीकि यह सब उनके आत्मविश्वास के वरदान थे—इस विश्वास के साथ कि भारत की स्वतंत्रता-प्राप्ती उन्ही के हाथो बदी है। अब चाहे प्रकट में वह इस साधना मे सफल न हुए हो, परन्तु जैसा कि हमने ऊपर लिखा, भारत के स्वतन्त्र होने मे निर्णयात्मक हाथ वास्तव में उन्हीं का था। कुछ आश्चर्य नही कि भारत की समस्त नेतागीरी मे केवल सुभाष ही अपने साथियो के दिए हुए नाम—नेताजी—से प्रसिद्ध हैं।

हिलारी और तेनसिंह नोरके के नामों से कौन परिचित नही है ? इन दो वीर पुरुषो ने हिमालय मे एवरेस्ट की अजेय चोटी पर पाँव रखने का सौभाग्य प्राप्त किया है। हिलारी को तो फिर भी महत्वाकाक्षी बनने की सभी सुविधाएँ प्राप्त थी, क्योंकि वह एक समुन्नत देश का सम्पन्न नागरिक है। परन्तु दारजिलिंग-निवासी गरीब नेपाली तेनसिंह को किस शक्ति ने इतना साहस प्रदान किया कि वह किशोरावस्था से ही इस महान सफलता का स्वप्न देखता आ रहा था ? यह उसका आत्म-विश्वास ही था कि निर्धन परिवार में जन्म लेने और प्रायः निराक्षर रहने पर भी वह सर्वदा एवरेस्ट की चोटी पर चढ़ने का स्वप्न देखता रहा। और इस स्वप्न को यथार्थ में परिणत करने के लिए उसने ऐवरेस्ट विजय के प्रायः हर अभियान मे भाग

लिया। एक मामूली शेरपा के पद से आरम्भ करके वह एक महान पर्वतारोही बन गया, और एवरेस्ट-विजेता कहलाया।

स्वेज नहर के झगडे मे मिस्र पर ब्रिटेन और फ्रांस के संयुक्त आक्रमण के समय प्रधान नासिर को किस शक्ति ने दृढ़ और अविचलित रखा ? मिस्र के पास एक साथ विश्व के इन दो शक्तिशाली राष्ट्रों का मुकाबला करने के लिए कुछ भी नही था। फिर भी नासिर यही कहते रहे कि मिस्र कभी हथियार नही डालेगा, और ब्रिटेन को मिस्र के रेगिस्तानों मे एक-एक कण के लिए अपना रक्त बहाना पडेगा। नासिर का यह आत्मविश्वास ही था, जिसके बल-बूते पर वह एक पिछड़ी और निर्बल जाति को ब्रिटेन जैसे शत्रु के मुकाबले पर दृढ रख सके और अंततः उसे मिस्र से भागने पर बाध्य करने मे सफल हुए।

युगोस्लाविया जैसे छोटे देश के प्रधान मार्शल टीटो रूसी अधिनायक स्टालिन के साथ अपने मत-भेद में किस शक्ति के सहारे डटे रहे ? स्टालिन चाहता, तो एक दिन मे युगोस्लाविया की ईंट से ईंट बजा देता। लेकिन उसे कभी मौखिक निन्दा से अधिक कदम बढाने का साहस न हुआ। क्यो ? केवल इसलिए कि टीटो को अपने मत की सत्यता और अपने आत्मबल पर पूर्ण विश्वास था। इस आत्मविश्वास के बल पर टीटो ने कभी हार स्वीकार न की, और स्टालिन जैसा क्रूर अधिनायक मरते दम तक उसका बाल बांका न कर सका।

इन्डोनेशिया में प्राय ही दाएँ या बाएँ पक्ष वाले तत्वो की ओर से सशस्त्र विद्रोह होते रहते है। एक बार प्रधान सुकार्नो जापान मे थे, कि विद्रोह बहुत प्रचड रूप धारण कर गया। आप से शीघ्रातिशीघ्र स्वदेश पहुँचने का अनुरोध किया गया। तो आपने हँसकर उत्तर दिया कि क्या मैं इस आये दिन के उपद्रव के कारण अपने भ्रमण का कार्यक्रम ही बदल दूं ? सुकार्नो

ने जापान मे बैठे-बैठे ही अपने मंत्रियो को आवश्यक कार्यवाही के सम्बन्ध में उपयुक्त निर्देश दिये, और अपने नियत समय पर ही राजधानी में लौटे। सुकार्नो को अपने पर इतना विश्वास है कि वह सोच भी नही सकते कि इन्डोनेशिया उनके विना जीवित रह सकता है।

यही वात हमारे प्रिय प्रधान मंत्री पं० नेहरु के लिये भी सत्य थी। आप भी अक्सर कहते रहते थे कि आप प्रधान मंत्री-पद पर रहे, या न रहें, परन्तु देश के लिए आपका महत्व वरावर वना रहेगा। एक वार अपने एक विदेशी पत्रकार के साथ वार्ता करते हुए हँसी मे कहा था, "आप जानते है, मैं वड़ा आत्मश्लाघी हूँ। मैं समझता हूँ कि देश को मेरी जरूरत वरावर वनी रहेगी" यह आत्मविश्वास यों ही उत्पन्न नही हो जाता; इसके पीछे वड़ी वास्तविकता होती है। नेहरूजी ने अपने आत्मविश्वास से केवल स्वयं को ही दृढ नही रखा, वल्कि वह सम्पूर्ण देश को प्रगति-मार्ग पर सदृढ़ वनाने मे सफल हुए हैं। यह आप की ही महानता है कि भारत को आज समूचे विश्व में सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। ये वड़ी-वड़ी योजनाएँ, ये देशोन्नति और जन-प्रगति के महान अभियान सव आप की ही देन है। और आप इन महान कल्पनाओ को कार्यान्वित करने का साहस और शक्ति अपने आत्मविश्वास से उपलब्ध करते है। देश आपका कितना ऋणी है, इस वात के मूल्यांकन का अभी समय नही आया, लेकिन इतिहास साक्षी रहेगा कि जैसे सुभाष के विना अभी वहुत वर्षो तक स्वतंत्रता-प्राप्ति एक स्वप्न ही रहती, उसी तरह नेहरूजी के विना इतना अल्प समय मे उस का दृढ़ीकरण भी अकल्पनीय था।

तो फिर जव यह परिस्थिति है, अर्थात् जव हम अपने व्यक्तिगत अध्यवसाय और संघर्ष से राष्ट्रों के नेता, विख्यात वैज्ञानिक,

सफल आविष्कारक और योग्य व्यापारी बन सकते हैं, तो पिछड़े पर और हीनता पर संतोष कर लेना मूर्खता नही तो और क्या है ? क्या आपका यह कर्त्तव्य नही कि 'अविश्वास' के कारावास से बाहर निकले ? अपने पर विश्वास करे, अपनी बौद्धिक योग्यता से काम ले, और जीवन-संघर्प मे पुरुषोचित ढग से भाग लेकर अपना उचित अंश उपलब्ध करे ? यदि आपने आज तक इस समस्या पर विचार नही किया, यदि आज तक आप यह अनुणव ही नहीं कर सके कि आप भी एक महान व्यक्ति है, और अपने भीतर के महान पुरुष को जगा कर अर्थात् अपनी सम्पूर्ण योग्यता से काम लेकर वह सब कुछ प्राप्त कर सकते है, जिसके आप अभिलाषी है, तो अपने को पीड़ित अत्याचारित समझने और अपनी दुर्दशा पर अश्रु पात करने की आवश्वकता नही। क्योंकि आप अब भी अपनी बिगड़ी बना सकते है, और आत्मविश्वासी बनकर अपनी भूलो और त्रुटियो का परिशोध करके सफलता के रंगमहल मे प्रवेश कर सकते है। आवश्यकता केवल इतनी है कि आप अपने को हीन और तुच्छ न समझे, अपने विचार ऊँचे रखे, सदैव आशावादी रहे, कठिनाइयो का दृढ़ता से मुकाबिला करे और अपनी दुर्बलताओ को दूर करने पर तत्पर रहे। उदाहरण के लिए यदि आपको बचपन मे ही स्कूल छोड़ने पर बाध्य होना पड़ा था, तो इस कारण घबराने और निराश होने की कोई जरूरत नही है। बेंजमन् डिज्राइली की तरह आप भी निजी अध्ययन से विद्धवान बन सकते है। आप नाम मात्र के चदे से किसी अच्छी पुस्तकालय का सदस्य बनकर ज्ञान-विज्ञान और कला-संस्कृति से सम्बन्धित उत्तम पुस्तक पढ सकते है। आप जिस युग में रह रहे हैं, इसमें निजी शिक्षालयों का प्राचुर्य है। प्रत्येक उल्लेखनीय नगर-उपनगर मे ऐसी बीसियों सस्थाये है, जहाँ मामूली शुल्क पर हर प्रकार वैज्ञानिक प्रावि-

धिक अथवा सांस्कृतिक विषयों की शिक्षा दी जाती है। ऐसी ही सुविधाएँ आज घर बैठे डाक द्वारा भी प्राप्त की जा सकती है। कहने का तात्पर्य यह है कि अपनी अवस्था मे सुधार करके तथा अपनी मदद आप करके उन्नति करने के जितने उत्तम अवसर वर्तमान युग मे प्राप्य है, इतने अतीत में कभी नही थे।

आज के जनतंत्रीय युग मे समुन्नत देशों का शासन-सूत्र जिन लोगो के हाथ में है, उनमे अधिकांश का प्रारम्भिक जीवन और परिस्थितियाँ आप से बेहतर नही थी। आज के बड़े-बड़े उद्योगपतियो, लेखको और कलाविदो की जीवनियो का अध्ययन करने पर यह देखकर आश्चर्य होता है। कि इनमे से बहुत कम प्रचलित अर्थो में उच्च शिक्षा पाए हुए है। इसलिए मैं कहता हूँ कि अपनी विवशता की कहानियाँ घड़ने और स्वयं को आत्म-तुच्छता के भ्रमजाल मे डालने की बजाए अपने जीवन के पुनः निर्माण का सकल्प कीजिए। अपने पर विश्वास कीजिए, अपना लक्ष्य स्पष्टतः निर्धारित कीजिए और उस तक पहुँचने के लिए जिस मार्ग पर चलना उचित है, उस पर चलने की योग्यता प्राप्त कीजिए। और जब आप अनुभव करे कि आप अपने लक्ष्य तक पहुँचने के लिए तैयार हो चुके है, और आपने स्वय को उन सब साधनों से युक्त कर लिए है, जिनकी मार्ग मे आवश्यकता होगी, तो फिर आप यात्रारम्भ में एक क्षण का भी विलम्ब न कीजिए

याद रखिए, अकर्मण्यत, आलस्य और विलास की ये परियाँ जो मार्ग मे आपको मिलती हैं; जो थोड़ा रुकने और विश्राम करने का परामर्श देती है; अपने यौवन और सौंदर्य से आपका मन बहलाने का प्रस्ताव करती है, ये सुख की नीद सुलाने वाली परियाँ आपकी हितचिंतक नही हैं। ये इससे पहले कितने ही पथिकों को इसी वासना जाल में फँसाकर विनष्ट कर चुकी हैं।

इसलिए इनकी मीठी-मीठी बातों मे न आइये, बल्कि इनकी ओर आँख उठाकर भी न देखिए।—और ये झूठी शंकाओं के दैत्य, जिनके पाँव धरती पर और सिर आकाश में है, जिनके, आतंक से आपके हाथ-पैर शिथिल हो रहे है और जिनकी डरावनी आवाज बार-बार आपके कानों में गूँज कर आपके प्राण उडा रही है—ठहरो, आगे न बढ़ो, वरना तुम्हारी हड्डियाँ तक सुर्मा कर दी जाएगी !—इन कल्पित आवाजों से डरने और आतंकित होने की कोई जरूरत नही है, क्योंकि इनका अस्तित्व केवल तभी तक है, जब तक कि आप अपने पर भरोसा नही करते, और अकारण ही भयभीत होने पर आमादा है। इनसे निपटने का सही तरीका यह है कि इन्हे मृत समझिए, और कदम आगे ही बढाते जाइए। यदि आपने दृढता से कदम बढाया तो आप पर शीघ्र ही यह भेद खुल जायेगा कि दुनियाँ की कोई शक्ति आपका रास्ता रोकने का साहस नही कर सकती।

"मै प्रधान मंत्री बन के रहूँगा," "मै प्रधान-मंत्री-पद का बोझ उठाने को तैयार हूँ," मै आखिर दम तक लड़ूँगा," विजय हमारी है," "स्वतत्रता मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है," "भारत आजाद हो कर रहेगा," "मेरा वध करने वाली गोली अभी तैयार ही नही हुई"—ये ऐतिहासिक वाक्य जिन व्यक्तियो के मूँह से निकले उनमे से अधिकतर गरीब घरानों मे पैदा हुए। उनका बचपन दरिद्रता मे व्यतीत हुआ। उन्होने अपने जीवन में बड़े कष्ट सहे। माता पिता को साधनहीनता के कारण सामान्य शिक्षा से भी वंचित रहे। परन्तु इन सब कठिनाइयों के बावजूद वे ख्याति, उपाधि और धन-ऐश्वर्य प्राप्त करने में सफल हुए। कारण उन्हें अपने आत्म-बल और बाहुबल पर भरोसा था, और अपने लक्ष्य के सही होने का विश्वास था।

फिर आप क्यों आत्मविश्वास के महत्व को स्वीकार न करे ? आप क्यों इस उपाय से काम लेकर अपनी बिगड़ी न बनाएँ ? अपने लिए कोई उच्च लक्ष्य निर्धारित क्यो न करें ? श्रेष्ठ राजनीतिज्ञ, उत्तम कोटि के लेखक, व्यापारी या उद्योगपति बनने का स्वप्न क्यो न देखे। आप भी "मैं सफलता के उच्च शिखर पर पहुँच कर रहूँगा" या मैं बौद्धिक जगत में नाम पैदा करके रहूँगा" जैसे संकल्प-वाक्यों से अपने अंत: करण में स्फूर्ति का संचार क्यो न करे, और अपनी तथाकथित वर्तमान हीनता, असहायता और विवशता पर संतोष क्यों कर लें ? इसलिए कि आप किशोरावस्था में इस तथ्य से परिचित न हो सके कि आप वास्तव में हीन, असहाय और विवश नही हैं, और यह कि केवल आत्मविश्वास के बल-बूते पर बड़े-से-बड़ा पद प्राप्त कर सकते हैं। यदि इस सवाल का जवाब 'हाँ' में है, तो अब भी बीते दिनों की गलतियो को दूर करने पर तत्पर हो जाइए। आज से सही अर्थों में जीवित रहने का संकल्प कर लीजिए। डा० नॉर्मन पील कहते है कि इन्सान सही मानों में जिन्दा रहना तभी से शुरू करता है, जबकि वह अपनी वास्तविकता से परिचित हो जाता है।

यह परिवर्तन जीवन में किसी भी स्थल पर हो सकता है। और उसी समय से सार्थक और उपयोगी जीवन का प्रारम्भ होता है। डा० पील का विचार है कि लोग, जो हमे चलते-फिरते दिखाई देते हैं, यद्यपि सभी प्रकट मे जीवित है, परन्तु वास्तव में इनमे अधिकतर अधूरे, अधमरे या अर्द्धजीवित ही होते हैं। सही अर्थो मे जीवित केवल वही होते हैं, जो जीवन के उद्देश्य और प्रयोजन को समझते है, और अपनी वास्तविकता को पह-चान कर अपने कर्त्तव्य का पालन करते है। इसलिए आप जीवन के बहुमूल्य क्षणो का अपव्यय न कीजिए, और अभी से पूर्ण

जीवन व्यतीत करने का निश्चय कर लीजिये। वेद का सुन्दर वाक्य है : उद्यानं ते पुरुष नावयानम् अथर्ववेद—अर्थात पुरुष ! तुझे ऊपर उठना है, न कि नीचे गिरना। मनुष्य को निरंतर ऊपर उठना चाहिए, उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होना चाहिए। इसी मे जीवन की सार्थकता है।

अपनी वास्तविकता को पहचानिए !

आत्मविश्वास वहुत कुछ निर्भर करता है आत्मज्ञान पर। जो लोग अपनी वास्तविकता से परिचित और अपनी योग्यता के जानकार नहीं होते, वे कठिनाई से ही अपने व्यक्तित्व को प्रकट करने, कोई महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न करने, उच्च पद प्राप्त करने, नेतृत्व सभालने अथवा दरिद्रता का अंत करके 'हजारो में एक वनने की चेप्टा करते है। चूंकि वे अपनी निर्माणात्मक क्षमताओ से परिचित नही होते, इस लिए वे स्वय को भाग्यहीन समझ वैटते है, और पैत्रिक सम्पत्ति अथवा सयोग से मिले धन पर ही संतोष कर वैठ जाते हैं। वे कल्पना भी नही कर सकते कि अपनी योग्यता से यथोचित काम लेकर, एक मामूली कलर्क किसी कार्यालय का प्रधान व्यवस्थापक और एक साधारण नागरिक किसी देश का राप्ट्रपति या प्रधानमत्री वन सकता है। उनका जीवन-दर्शन सम्भवत. यह होता है कि गरीव लड़के व्यक्तिगत चेप्टा से धनवान नही वन सकते। एक साधारण नागरिक को राप्ट्रपति वनने का स्वप्न देखने का कोई अधिकार नही। और विद्या रूपी सागर से श्रेष्ठता के मोती प्राप्त करने का अधिकार भी केवल उन्ही लोगों को है, जो विश्वविद्यालयो से पदवी-प्राप्त हों। ऐसे लोग 'ज्यो के ज्यो' के सिद्धांत के समर्थक होते हैं और उसे असंशोधनीय समझते है। यह विचारों की तुच्छता, दृप्टि

की क्षूद्रता और हीनभावना आत्मविश्वास के लिए घातक विप के समान है। यह अनभिज्ञता मनु की संतान को अपना उचित अधिकार सिद्ध करने पर तत्पर नही होने देती। इस लिए आत्म-परिचय को आत्मविश्वास का पहला कदम कहना अनुचित नही है।

'अपने को पहचानिए'—प्राचीन यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिक सुक्रात का यह सक्षिप्त वाक्य सब युगो की सचाइयों का सार है। मनुष्य व्यक्तिगत उत्कर्ष और निजा शक्ति का इच्छुक हो, देश और राष्ट्र की स्वतंत्रता और प्रतिष्ठा के लिए कोई मार्मिक कार्य करना चाहता हो, या मनुष्य मात्र के कल्याणार्थ किसी नए अविष्कार को पूर्णता के स्तर तक पहुँचाने के लिए प्रयत्न-शीला हो, वह अपने लक्ष्य की प्राप्ति मे तभी सफल हो सकता है, जबकि वह अपनी वास्तविकता से परिचित हो, क्योकि इस परिचय अथवा आत्मज्ञान के बिना वह अपनी योग्यता और सामर्थ्य पर कभी विश्वास नही कर सकता। और इस विश्वास के बिना वह किसी काम को सम्पन्न करने के लिए सिर-धड की बाजी नही लगा सकता।

मुसलमानो की धार्मिक किताब 'कुरान' मे आया है कि मनुष्य की सृष्टि के समय कुछ सहृदय फरिश्तो ने उसे अपनी ओर से 'सतोप' का उपहार देना चाहा। परन्तु सृष्टिकर्त्ता ने इस सुझाव को स्वीकार न किया और कहा कि मनुष्य को सतोप का उप-हर देने का अर्थ उसका अहित करना है, क्योंकि इससे वह संतोषी बन जाएगा, और अपनी रचनात्मक शक्तियों से काम नही लेगा। दूसरे शब्दो मे वह स्वय को उस पद का अधिकारी सिद्ध नही कर सकेगा, जो उसे दिया जा रहा है (इस्लाम धर्म के अनुसार परमेश्वर ने मनुष्य को धरती पर अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया है) परन्तु विधाता की इस सावधानी के बावजूद

अधिकतर लोग अपने को पहचानने की कोशिश नही करते, और अपनी शरीरिक एवं मानसिक शक्तियों से काम नही लेते।

विलियम जेम्स का यह कथन गलत नहीं है कि मनुष्य साधारणतः अपनी शक्ति के एक तुच्छ अंग से ही काम लेता है, और शेष बड़ा अंश उपयोग में नही लाता। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक फ्राइड का कहना है कि औसत आदमी अपनी बौद्धिक शक्ति के केवल पाँचवे अंश को ही उपयोग मे लाता है। स्मरण रखिए कि यहाँ औसत आदमी से अभिप्राय यूरोप के समुन्नत देशों का औसत आदमी है, जोकि साधारणतः साक्षर और अपेक्ष्या अधिक समझदार होता है। जब यूरोप के लोगो की यह दशा है, तो आसानी से अनुमान लगाया जा सकता है कि एशियायी देशों के लोग, जिनमे दुर्भाग्य से भारतवासी भी सम्मिलित हैं, और जो अज्ञानता संकीर्णहृदयता और विचारशून्यता मे अपना सानी नही रखते, अपनी वास्तविक बौद्धिक शक्ति के कितने अंश से काम लेते होगे।

दरअसल हम लोग लकीर के फ़कीर हैं। हम उस मार्ग से जरा भी हटना पसन्द नही करते, जो हमारे पूर्वजों ने अपने लिए निर्धारित किया था। फिर हम में से जो लोग सुधार और नवीकरण के समर्थक हैं, वे भी अपना मार्ग स्वयं नही बनाते, बल्कि दाएँ-बाएँ देखते है, और जहाँ भी उन्हें कुछ प्रकाश दिखाई पड़ता है, उसी को 'सत्यप्रकाश' समझ लेते हैं, चाहे वह विध्वंस की ज्वाला ही क्यों न हो। इन परिस्थितियो में बौद्धिक शक्ति को समुचित उपयोग मे लाने का प्रश्न ही कहाँ उठता है?

तनिक विचार कीजिये, यदि मनुष्य अपने मस्तिष्क के केवल २० प्रतिशत भाग से काम लेकर आदिकला के अंधकारमय युग को सभ्यता और संस्कृति के वर्तमान युग में परिणत कर सकता है, बड़े-बड़े प्रशंसनीय आविष्कार कर सकता है, घास-पात के

झोपड़ों को गगनचुम्बी राजप्रसाद में वदल सकता है, पैदल चलने के कष्ट से बचने और समय बचाने के लिए द्रुतगामी मोटरें और हवा से बातें करने वाले विमान निर्मित कर सकता है; जंगली फल-फूलो पर गुजारा करने की वजाए तरह-तरह के स्वादिष्ट भोजन बनाने की कला विकसित कर सकता है, तो उस समय उसकी प्रगति की क्या स्थिति होती, जब वह २० प्रतिशत की बजाए ४० या ५० प्रतिशत बौद्धिक शक्ति से काम लेने पर तैयार हो जाएगा।

इस समस्या पर तनिक गम्भीरता से विचार कीजिए। यदि हम व्यक्तिगत रूप से अपनी ८० प्रतिशत बौद्धिक शक्ति का अपव्यय न करें, बल्कि इस वड़े अंश में से कुछ और शक्ति अपनी दशा सुधारने अर्थात कुछ सीखने और आगे वढने में लगाएँ; अपनी दरिद्रता, साधनहीनता, अल्पज्ञान पर सन्तोष न करते हुए उनसे मुक्तिलाभ के लिए सचेष्ट हों, अपनी वास्तविकता से परिचित होकर बाहुबल पर विश्वास करने के अभ्यस्त हो जाएँ, और इस आत्मविश्वास के वल पर महानता के शिखर को छू लेने का प्रयास करें, तो हमारा यह प्रयास कितनी शीघ्रता से सफल हो सकता है।

एक पत्रकार ने प्रसिद्ध मनोविज्ञान-विशेषज्ञ डा० विल्वर्ड ऐलन से प्रश्न किया कि क्या कारण है कि अधिकतर लोग अधूरा जीवन व्यतीत करते है ? उत्तर मे डा० ऐलन ने कहा—"इसका जवाब बड़ा सरल है। हम मे से अधिकतर लोग अपनी योग्यताओ को प्रकाशित होने का मौका नही देते। हम महान कार्य कर सकते है। परन्तु हम अपने इस सामर्थ्य से परिचित नही होते। हमारे शरीर के भीतर महान शक्तियां निहित है। परन्तु हम उनसे काम नही लेते, जिससे उन्हे उन मशीनों की तरह जंग लग जाता है, जो उपयोग में न लाई जा रही हों। आप इसे अति-

इयाक्ति न समझें। हमें शारीरिक इन्द्रियाँ इसीलिए दी गई है कि हम उनसे काम ले। परन्तु सँसार मे अधिकतर लोग उनसे काम लेना पाप तुल्य सनझते है। मेरा अभिप्राय आलसी लोगों से है। वहुत से लोग वौद्धिक शक्ति से काम नही लेते, चिन्नत-मनन नही करते, दूसरो के विचारो पर गुजारा करते है, अथवा सुनी-सुनाई वातों से काम चला लेते है। यही कारण है कि वे जीवन के वास्तविक सुखों और पुरस्कारों से वँचित रहते है।"

वस्तुत: हममें से अधिकतर लोगों को जीवनानन्द इसलिए अनुभव नही होता ; हम प्रतियोगता-परीक्षा में इसलिए नही वैठते, अपने समवयस्कों से आगे वढ़ने का साहस इसलिए नही करते अपने विचारों की अभिव्यक्ति मे इसलिए सकोच करते हैं, और आत्मवल पर इसलिए भरोसा नही करते क्योंकि हम अपने भीतर के महान पुरुष को नही पहचानते, अपनी वौद्धिक शक्ति से काम नही लेते और सोच-विचार की आदत नही डालते। उर्दू के प्रसिद्ध कवि डा० इकवाल ने क्या खूव कहा है—

अपनी असलीयत से हो आगाह
ऐ गाफ़िल कि तू।
क़तरा है, लेकिन मिसाले वहरे
वेपायाँ भी है।

इसे कवि की सूक्ष्म कल्पना न समझे। यह मानव-रूपी क़तरा (वूँद) वास्तव में 'वहरे वेपायाँ' (असीम सागर) है। मनुष्य वस्तुत: असीम शक्ति और अपरिमित वल-निधि का स्वामी है। उसे 'कालशिरोमणि' कहा गया है। वह निर्माण और रचना का निर्णायक है।

एक अँग्रेज साहित्यकार ने इस 'दुर्वल जीव'—के सम्वन्घ में लिखा है—नक्षत्र लुप्त हो जायंगे, सूर्य का प्रकाश मद पड़ जाएगा। परन्तु मनुष्य की आत्मा सदा तेजवान रहेगी। उस

तक काल का हाथी कभी न पहुँच सकेगा। यह गीता के उपदेश के बिल्कुल अनुकूल है। मनुशास्त्र में आया है—यमो वैवस्वतो देवों मस्तवैषहृदिस्थित. अर्थात, पुरुष! तेरे हृदय में सर्वान्तार्यामी सर्वनियामक आत्मदेव का वास है।

कवियो और दार्शनिकों के अलावा वैज्ञानिक भी मानवी आत्मा के गुण गाते है, और उसे अविनाशी, शाश्वत और सृष्टि का स्वामी स्वीकार करते है। डा० कैरल लिखते है। मनुष्य की सृष्टि पहाड़ो, दरियाओं और समुद्रों के मापदंड से हुई। अर्थात जिस शक्ति की वाहिकाएँ ये प्राकृतिक रचनाएँ है, वही शक्ति इस 'मिट्टी केपुतले' मे है। परन्तु यह शक्ति विशुद्ध शरीरिक नहीं है। मनुष्य की एक और दूनिया भी है, और वह उसके अंत.करण की दुनिया है। आत्मा, बुद्धि और मन की यह दुनिया काल और देश के प्रतिबंधों से मुक्त है। यदि इस आन्तरिक जगत मे मनुष्य की आत्मा शुद्ध-पवित्र, सकल्प दृढ़ और सुस्थिल तथा अभिलापा प्रवल और अगाध हो, तो वह वाह्य जगत को भी अपने अधीन कर सकता है।

यदि आप अपने अत.करण की एक झलक देख ले; विधाता ने वुद्धि और विवेक के रूप जो विधि आपको प्रदान की है, उसका पता लगा ले तो फिर आप गरीबी, वेवसी और माँगे-ताँगे की समझ पर सँतोप नही कर सकते। यदि आप एक वार अपनी हकीक़त को जान ले, तो फिर आप किसी के पीछे चलने पर राजी नही हो सकते। मानवी महिमा के ज्ञाता एमर्सन कहते है। विद्यारूपी आकाश में जो तारे चमक रहे हैं, उनके प्रकाश से ज्यादा तेजवान मनुष्य के अपने मस्तिक और विवेक की ज्योति है। मनुप्य को इसके दर्शन करने का प्रयत्न करना चाहिए। आधुनिक युग के इस विचारक का यह कथन वहुमूल्य और सचाई पर आधारित है।

स्रष्टा ने कोई से दो इन्सानों को एक सा नही बनाया। जो कुछ आप्र है, वह और कोई नही बन सकता। इसलिए अपने भीतर झाँकिए, प्रत्येक समस्या पर स्वतंत्रतापूर्वक विचार कीजिये और अपनी सम्मति की अभिव्यक्ति में कभी संकोच न कीजिए। आपकी सम्मति मूल्यवान है। हो सकता है वह अन्य विचारकों के मत से अधिक महत्वपूर्ण समझी जाए। तनिक उसे प्रकट तो कर देखिए।

दुनिया केवल उन्हीं विचारको, दार्शनिकों, लेखकों, कवियों, वैज्ञानिको और विद्वानों का आदर करती है, तथा उनकी कृति की सराहना करती है, जिनके विचारों और मताभिव्यक्त में नवीनता होती है। अश्वघोष, कालीदास, शैक्स्पीयर, गोयटे, सादी, वर्नार्डशा, गालिव और रवीन्द्रनाथ इसलिए सम्मानित और आदरणीय हैं कि उन्होंने अपने आंतरिक प्रकाश को प्रस्फुटित किया। इममें से कोई भी पुरातन मार्ग पर चलकर सफलता और प्रसिद्धि के मंदिर मे प्रविष्ट नही हुआ। इसलिए अपना साम्मान कोजिए, स्वाभिमानी बनिए। स्वय को असहाय न समझिए, किसी से दव कर न रहिए। छाती तान कर चलिए; किसी की खुशामद न कीजिए। अपने विचारो और सम्मतियों की अभिव्वक्ति मे सकोच न कीजिए। आप एक विशिष्ट व्यक्ति है। आपका व्यक्तित्व सवसे प्रखर, आपकी सम्मति सबसे सुस्थित और आपका विचार सबसे ज्यादा मूल्यवान हो सकते है। जव न्यूनटन ने गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त प्रस्तुत किया, तव ऐसा विचार धर्म-विरोधी तक समझा गया। परन्तु इस कारण न्यूटन ने मत-परिवर्तन नही कर लिया। कॉपरनिकस, ब्रूनो और गलैलियो को पृथ्वी की गतिशीलता और सौर-परिवार सम्बंधी अपनी स्थापना की रक्षा के लिए प्राणों तक को दाँव पर लगाना पढ़ा। इसलिए आपभी इन महापुरुषों की तरह स्वतंत्र विचार-पद्धित

को अपना धर्म बना लीजिए। अवश्य पहले से यह जमानत तो नही दी जा सकती कि आपका हर विचार या सिद्धात किसी नए आविष्कार को भूमिका जरूर ही बनेगा, परन्तु इसकी सम्भावना प्रकट है। इसलिए आप अपने अस्तित्व को दुनिया के सामने पेश तो कोजिए।

जब आप अपनी वास्तविकता से परिचित हो जाएँगे तो फिर आपको अपने पर, अपने बाहुबल पर और दैवी सहायता पर निर्भर करने में कोई कठिनाई अनुभव नही होगी। इसमे संदेह नही कि आप महापुरुषों की कीर्ति और उनके उच्च एव पवित्र विचारों से लाभ उठाएगे। परतु लाभ उठाने का अर्थ स्वयं अपनी विचार-शक्ति का द्वार बन्द कर देना नही है। एक बार जब आपको विश्वास हो जायेगा कि आप अतीत के महानु-भावों की अपेक्षा मानवी जगत की अधिक सेवा कर सकते है, तो आप निःसंकोच होकर घटना-सागर मे कूद पड़ेगे। जब आप अपना सम्मान स्वयं करेंगे। तो आपके सहयोगो और साथी भी आपका सम्मान करेगे। जैसेकि फारसी कवि बुखारी ने एक स्थान पर कहा है—"मुझ जैसा नश्वर मनुष्य भी ऐश्वरीय सृष्टि मे त्रुटि ढूँढता है। परन्तु मै नतमस्तक हो जाता हूँ, जब अपनी कला का चमत्कार देखता हूँ।"

ऐसे ही आत्मज्ञान से आप वह शक्ति प्राप्त करेंगे, जो पहाड़ो को उखाड़ फेंकती है और जिसके बल पर पराक्रमी व्यक्ति किसी देश के शासक, सुयोग्य सेनापति या अपने समय के युगपुरुष बन जाते है। फिर आप किसी निर्धन परिवार में जन्म लेने और प्रारम्भिक जीवन प्रतिकूल वातावरण में बिताने के बावजूद पदैश्वर्य और धन-समृद्धि की प्राप्ति को अपना जन्मसिद्ध अधि-कार समझेंगे। आप अपनी उन त्रुटियों और दुर्बलताओ को दूर करने पर तत्पर हो जाएँगे, जो आपके अपने अभीष्ट लक्ष्य तक

पहुँचने में वाधक है। और तव आप छाती तान कर यह कहते हुए जीवन-संग्राम में कूद पड़ेगे कि अव इस मैदान में विजय-वैभव-महानता और यश-कीर्ति मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है।

मनु का पुत्र जव इस संकल्प और विश्वास के साथ जीवन की रण-भूमि मे प्रवेश करता है, तो सफलतारूपी दुल्हिन वर-माला लिए उसकी प्रतीक्षा करती है, और विजयश्री उसका स्वागत करने को तैयार रहती है। ऐसे मेधावी पुरुप को कोई पराभूत नही कर सकता, उसे अपने गन्तव्य पर पहुँचने से रोक नही सकता।

आप की मनोकामना क्या है ?

अपने को पहचानिए—यह मँतव्य प्राचीन यूनान के दार्श-निक सुक्रात का है। परन्तु आज के 'सुकत' इससे एक कदम और आगे बढ़कर कहते हैं—अपनी मनोकामना और अपनी उत्कँठा को पहचानिए। अर्थात यह मालूम कीजिए कि आप क्या चाहते हैं। प्रकट में यह विस्तार कुछ अनावश्यक सा जाना पडता है, क्योंकि अपने को पहचानने मे अपने मनोरथों को पहचानना भी सम्मिलित है। परन्तु शतियो के अनु-भव ने सिद्ध किया है कि अपनी वास्तवविकता को जानने का दावा करने वाले कुछ लोग केवल इसलिए सफल नही होते कि उन्हे जीवन की लम्बी यात्रा मे कभी यह मालूम ही नही होता कि वे क्या बनना चाहते है, और क्या बन सकते हैं। वे आत्म-विश्वास और आत्मज्ञान के महत्व से तो परिचित होते है, परन्तु अपने निरन्तर सघर्ष और अविश्राँत परिश्रम का फल पाने मे केवल इसलिए वचित रह जाते है कि वे ठीक से निश्चय नही कर पाते कि वे जीवन के किस विभाग में उन्नति करने के लिए पैदा हुए हैं।

असफल व्यक्ति भी स्वयं को उन्नति का पात्र समझता है, और अपनी शारीरिक और मानसिक शक्तियो से यथासम्भव काम भी लेता है। परन्तु दीर्घ कालीन सघर्ष के बाद भी सफलता की देवी के दर्शन नही कर पाता। और यदि कुछ सफलता

मिलती भी है, तो वह उसकी मनोकमना के अनुसार नही होती। इसपर वह बहुत हैरान और निराशा हो जाता है। कभी-कभी तो यह निराशा इतनी बढ़ जाती है कि वह इस सिद्धांत पर ही आस्था गँवा बैठता है कि मनुष्य एक समर्थ और सत्तायुक्त जीव का नाम है, और यह कि वह अपनी आविष्कार-क्षमता से काम लेकर कोई महान कार्य कर सकता है, अथवा अपनी दरिद्रता, विवशता और असहायता को सुख-समृद्धि और सामर्थ्य में परिणत कर सकता है। ऐसे लोगों की मनोवृत्ति पलायनवादी हो जाती है। उनका आत्मविश्वास केवल मौखिक और काल्पनिक ही बन कर रह जाना है। वे कभी तो बड़े उत्साहित और आशापूर्ण दिखाई देते हैं, और कभी नैराश्य और साहसहीनता की मूर्ति बन जाते हैं। ऐसे एक प्रौढ सज्जन से मैं व्यक्तिगत रूप से परिचित हूं। वह जीवन भर ठोकरें खाने के बाद भी उन्नति के स्वप्न देखते रहते है, और बडे विश्वास के साथ कहते है कि वह एक महान व्यक्ति बन कर रहेगे। उनसे कहा जाए कि वह जीवन के पैंतालीसवे वर्ष में इस प्रकार के सुहावने सपने न देखा करे, क्योंकि जब वह पिछले बीस वर्षों में अपनी वित्तीय कठिनाइयों पर काबू नहीं पा सके, और कोई उल्लेखनीय उन्नति नही कर सके, तो अब जबकि वह प्रौढ़ावस्था मे प्रवेश कर चुके है, वह कैसे प्रगति कर सकते हैं। उत्तर स्वरूप वह तुरन्त किसी प्रसिद्ध व्यक्ति का नाम लेते है, जिसने जीवन के अंतिम दिनों मे सफलता और ख्याति प्राप्त की थी। हमारे इन सज्जन का प्रकट उत्साह और साहस प्रशंसनीय हैं, परन्तु कभी-कभी वह भी आत्मग्लानि का अनुभव करने लगते हैं, और तब उनसे साक्षात करने पर यह आभास होता है कि अब इन मे जीवन की शक्ति शेष नही रही, और अब वह शायद ही कभी युद्ध के लिये उद्यत हों।

ऐसे उच्च विचारों वाले साहसी और पराक्रमी पुरुषों का

यह दुःख भरा अंत निश्चय ही खेदजनक है। परन्तु वास्तविकता यह है कि ऐसे लोग न तो जीवन-क्षेत्र मे प्रवेश करते समय यह सोचने का कष्ट करते है कि विधाता ने उन्हे किस विभाग मे सफल होने की योग्यता प्रदान की है, और न व्यवहारिक जीवन मे वर्षो तक ठोकरे खाने के बाद उन्हे यह ज्ञात होता है कि उनकी मनोकामना क्या है। वे घाट-घाट का पानी पीने अर्थात विभिन्न कार्य क्षेत्रो में भाग लेने के बाद भी यह निश्चय नही कर पाते कि वे किस विभाग मे अपने रचनात्मक गुणो का परिचय दे सकते हैं और अपने कर्मोत्साह का प्रदर्शन कर सकते है। ऐसे लोग प्रायः एक साथ कई कलाओ के ज्ञाता होते हैं, और उन पर पर्याप्त अधिकार भी रखते है परन्तु उनसे पूछिये कि इन में से किस कला या कौशल को अपनी मनोकामना के अनुकूल समझते है, और किसमें अपनी योग्यता का पूर्ण प्रदर्शन कर सकते है, तो वे तुरन्त ही कोई उत्तर नही दे सकेगे, जैसे वे अभी तक दुविधा मे हो, और अभी तक यह निश्चय न कर पाए हो कि वे अपनी शक्तियो को किस काम मे लगाकर उन्नति के शिखर पर पहुँच सकते है। यही अनिश्चितता अथवा अस्थिरता उनकी असफलता या आंशिक सफलता का मुख्य कारण है।

इस दुविधा ने असख्य लोगो की जीवन-नौका निराशा के समुद्र मे डुबो दी है, या कम से कम उन्हे अभी तक सफलतारूपी तट पर पहुँचने नही दिया। मेरे परिचित व्यक्तियो मे एक सज्जन पिछले पन्द्रह वर्ष से संघर्ष कर रहे है परन्तु अभी तक कोई उल्लेखनीय उन्नति नही कर पाए। वह उस समय भी बडे बुद्धिमान, परिश्रमी और आदर्शवादी थे, जब वह एक क्लर्क के रूप मे जीवन क्षेत्र में प्रविष्ट हुए, और आज भी बड़े समझदार और विवेकशील व्यक्तियो में गिने जाते हैं, परन्तु आर्थिक विवशताओ ने अभी तक उनका पीछा नही छोडा। उनकी दुर्दशा

का अनुमान इस बात से लगाइए कि वह एक अत्यंत ही लाभ-दायक योजना को केवल इस लिए कार्यान्वित नहीं कर सके कि वह उसके लिए अपेक्षित तीन-चार हजार रुपये की सामान्य रकम का प्रबन्ध करने मे असमर्थ रहे।

इस व्यक्ति ने अपना जीवन बनाने के लिए घोर परिश्रम किया है। मुझे स्मरण है कि जब वह स्कूल में पढ़ता था तो रातो जाग कर अध्ययन मे तल्लीन रहता था। वह गरीब पिता का पुत्र था, इसलिए नियमित रूप से उच्च शिक्षा प्राप्त नही कर सका। परन्तु उसने अपनी व्यतिगत चेष्टा से शैक्षणिक योग्यता प्राप्त की। वह युवावस्था से ही महानता के स्वप्न देखा करता था। वह क्लर्क बने रहने पर सतोष नही कर सकता था। अतएव द्वितीय महायुद्ध मे वह एक अधीनस्थ सेनाधिकारी के रूप में सेना मे भरती हो गया। परन्तु सैन्य जीवन और युद्ध से उसका मन शीघ्र ही ऊब गया। यदि वह इस प्रकार हतोत्साहित न होता, और मनोयोग से अपने कर्त्तव्य का पालन करता रहता, तो उसके लिए सेना मे ही उन्नति के बड़े सुअवसर थे। वह स्वयं बतलाता है कि उसके कुछ साथी आज मेजर और कर्नल बन चुके है। परन्तु उसके मन मे यह धारणा बैठ गई थी कि उसे दुनिया मे कुछ और ही काम करना है। इसलिए युद्ध समाप्त होते ही उसने सैन्य सेवा को अतिम प्रणाम किया, और एक व्यापारिक सस्था से सम्बद्ध हो गया। परन्तु कुछ समय बाद उसने यह सम्बन्ध भी तोड़ दिया और अपनी पूँजी एक ऐसे कारबार में अगा दी, जिसमें यदि सफल हो जाता, तो जीवनपर्यंत सुख का साँस लेता। परन्तु चंचल प्रकृति ने यहाँ भी उसका पिंड न छोड़ा, और मामूली कठिनाइयों से घबरा कर उसने निजी व्यापार को भी तिलांजली दे दी। इसके बाद वह कई संस्थाओं से सम्बद्ध रहा, परन्तु

किसी एक का वन कर न रह सका। परिणाम यह है कि वह अभी तक परेशान है, वह अभी तक अपने परिश्रम का फल नही पा सकता और अपने उस लक्ष्य पर नही पहुँच सका जिस के लिए उसने जीवन के अनेक सुखों और प्रसादों से स्वयं को वंचित रखा है।

यह वृद्धिमान और समझदार व्यक्ति अव भी संभल सकता है, अब भी अपनी दुर्दशा को सम्पन्नता मे परिणत कर सकता है। अव भी उस ध्येय को प्राप्त कर सकता है, जिसके स्वप्न वह देखा करता था, और जिसकी प्राप्ति के लिए वह अव भी वहुत कुछ करने को तैयार है—वशर्ते कि वह मालूम करले कि उसकी रुचि और झुकाव किस विभाग की ओर है, वह किस कार्य क्षेत्र में अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन कर सकता है। मुझे विश्वास है कि यदि वह अव भी किसी एक क्षेत्र से स्थाई रूप से सम्वद्ध हो जाए, और उसमे सफलता-सिद्धी के लिए अपनी सारी शक्ति लगा दे, तो वह अव भी सफल हो मकता है।

यह सच है कि अव उसमें वह पहले जैसा उत्साह शेष नहीं रहा, और वार-वार की असफलताओ के कारण अव उसे अपने पर पहले जैसा विश्वास भी नही रहा। परन्तु यह समस्या विल-कुल ही असाध्या नही है। अपने मनोरथ को ठीक से पहचान कर सही लक्ष्य स्थिर करने के वाद सफलता प्राप्त करने की योजना वना ली जाए, तो कर्मोत्साह पुन. स्थापित हो सकता है।

जीवन मे सफल होने और सार्थक-जीवन यापन करने का सही कार्यक्रम यही है, जिसका निर्देश आज के 'सुक्रात' और आधुनिक युग के अनुभवी विचारक करते है। हमारा कर्तव्य है कि हम किशोरावस्था में ही अपनी मनोकामना को पहचान ले, और अपनी रुचि और झुकाव के अनुसार

अपने लिए उस कार्य-क्षेत्र का निर्वाचित कर, जिसमे हम अपने विशिष्ट व्यक्तित्व और अपनी विशिष्ट विभूतियो का पूरा-पूरा परिचय दे सके। यदि हमारा चुनाव ठीक होगा, तो फिर दुनिया की कोई ताकत हमे सफलता के मदिर मे प्रवेश करने से रोक नही सकेगी। परन्तु इसका यह अर्थ नही कि यदि हम एक वार अल्पवुद्धि अथवा अदूरदर्शिता से गलत मार्ग पर चल निकले, तो उसे छोडकर सही रास्ता अपनाना निन्दनीय समझा जाए, और अपनी गलतियो और त्रुटियों का प्रतिकार न किया जाए। स्रष्टा ने मनुष्य की प्रकृति मे वड़ी लचक रखी है। मनुष्य चाहे, तो जीवन के किसी भी मोड पर अपने आचार-विचार मे परिवर्तन कर सकता है। मनोविज्ञान विशेषज्ञो का कहना है कि मनुष्य जव चाहे अपनी पुरानी आदतो का परित्याग कर नई आदते अपना सकता है। और यह सिद्धांत सत्य पर आधारित है। मैं ऐसे वीसियों व्यक्तियो को जानता हूँ, जिन्होने सामान्य प्रयत्न, वल्कि एक वार के दृढ़ संकल्प से ही किसी ऐसी आदत का सदा के लिए परित्याग कर दिया, जिसमे मुक्ति पाना असम्भव प्रायः समझा जाता था जव केवल इच्छाशक्ति से असम्भव को सम्भव वनाया जा सकता है, तो आदतो का परित्याग और उनके स्थान पर नई आदतो का पोषण दुष्कर क्यो समझा जाए। इस लिए यह कहना गलत नही कि मनुष्य अपने व्यक्तिगत प्रयत्न और धैर्य-दृढता से काम ले कर खोए हुए विश्वास को पुनर्स्थापित कर सकता है, और पुन. आत्म-विश्वास और कर्मशीलता की मूर्ति वन सकता है। कहने का तात्पर्य यह है कि आपको हर हालत मे सफलता का स्वप्न देखने का अधिकार है, वशर्तेकि आप अपने लक्ष्य को जानते हो और अपनी दृष्टि ऊँची रखते हो। उर्दू के किसी अज्ञात कवि ने क्या खूव कहा है—

झुक झुक के देखता हूँ मैं तूवा को अर्श को,
कुछ इस कदर बुलन्द मिली है नजर मुझे।

अर्थात मेरी दृष्टि इतनी ऊँची है कि मुझे आकाश को और स्वर्ग के सुगन्धित पेड़ो को देखने के लिए अपने स्थान से झुकना पड़ता है।

यह उच्च दृष्टि सफल लोगों की विशिष्टता है। इसी से वे आत्मविश्वासी वने, कर्म के लिए उद्यत हुए और सफलता के शिखर पर पहुँचे। परन्तु स्मरण रहे कि उन्होने एक ही वार में अपने गन्तव्य पर पहुँचने की चेष्टा नही की, वल्कि एक-एक पग आगे बढते रहे। और जव वे एक स्थल को पार कर लेते थे, तो दूसरे को पार करने की तैयारी करते थे। आपभी क्रमशः आगे वढिए। सव से पहले अपना एक लक्ष्य निर्धारित कीजिए और विचारिए कि इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए कितनी और कैसी योग्यता अथवा पूँजी की आवश्यकता है और वह कानसा सुगम मार्ग है, जिस पर चलने से आपकी सफलता की सम्भावनाएँ निश्चत हो सकती है। इसके वाद अपेक्षित 'ज्ञान' अथवा 'पूँजी' की उपलब्धि के लिए प्रयत्न कीजिए। असफलता की चिताओं को अपने मस्तिष्क पर अधिकार न करने दीजिए। इस प्रकार जव आप परिस्थितियो को अपने अनुकूल वना लेगे, तो सफलता का राजपथ स्वयमेव प्रशस्त होता जाएगा।

जिला परिपद के एक स्कूल के मैट्रिक पास अध्यापक ने जव अपने एक जानकर को, जो किसी विश्वविद्यालय मे प्रोफेसर थे, नौकरी दिलाने के लिए पत्र लिखा, तो प्रोफेसर साहव ने सहमति प्रकट करते हुए उत्तर दिया—आप साइकल लेकर मोटरों की दौड मे भाग लेना चाहते है। यदि विश्व विद्यालय में आने की इच्छा है, तो पहले मोटर का प्रवन्ध कीजिए। अर्थात स्वाध्याय से अपनी शैक्षणिक योग्यता वढाइए, और तैयारी करके निजी तौर पर

उच्च परीक्षाओं मे वैठिए। इनमे उत्तीर्ण होने के वाद ही यहाँ आने का विचार कीजिए। यह परामर्श वहुत उपयोगी सिद्ध हुआ। अध्यापक महाशय ने कुछ ही वर्षो के अध्ययन से कई पदवियाँ प्राप्त कर ली, और शीघ्र ही एक वड़े कालेज मे प्रोफेसर नियुक्त हो गए।

उनके प्रोफ़ेसर मित्र ने जो परामर्श दिया था, वह निश्चय ही इस योग्य है कि उन्नति के इच्छुक नवयुवक उसे सदैव अपने सामने रखे। यदि आपभी मोटरो की दौड़ मे भाग लेना चाहते हैं, तो सवसे पहले यह मालूम कीजिए कि आपको किस प्रकार के मोटर की जरूरत है। फिर साइकिल को मोटर मे वदलने की व्यवस्था कीजिए। यह केवल सुहावने सपने देखने अथवा भाग्यावलम्वी वने रहने से नही हो सकता। इसके लिए निरंतर संघर्ष करने और क्रमश: आगे वढ़ने की जरूरत है।

अपनी योग्यता और रुचि का सही अनुमान लगाने और एक-एक पग आगे वढने को ज्यादा महत्व इस लिए दिया जाता है कि इस प्रकार उन्नति करने मे साधक को प्रारम्भिक कठिनाइयों का सामना नही करना पडता, सामयिक असफलताओं का मुँह नही देखना पडता, और यदि कभी विफलता होती भी है, तो वह हताश नही होता, अपना आत्मविश्वास नही गवाता। उसे पता होता है कि उसमे ऐसी कठिनाइयो पर कावू पाने की क्षमता है, इसलिए उसका साहस वना रहता है। फिर भी इसमे संदेह नही कि लगातार असफलताएँ वडे से वडे साहसी आशावादी को भी निराशावादी वना देती है, और उसके आत्मविश्वास पर वहुत गहरी चोट लगाती है।

इटली के प्रसिद्ध देश-भक्त मैज़ीनी ने अपने देश की स्वाधीनता के लिए घोर संघर्ष किया। उसे एक मोर्चे पर हार होती

थी, तो वह हताश नहीं होता था, वल्कि दूसरा मोर्चा लगा देता था। मजीनी ने 'तरुण इटली' नामक आन्दोलन की नीव रखी और देशवासिओ को दासता के बधनो से मुक्त होने के लिए आह्वन किया। इस पर 'राज्य सत्ता' उसके लहू की प्यासी हो गई और उसे बंदी बना कर फॉसी के तख़्ते पर चढाने पर तुल गई। तब देशभक्त मैजनी ने अनिच्छा पूर्वक अपने देश से विदा ली, और पड़ोसी देशो से अपने आन्दोलन के पक्ष मे लेखन-प्रकाशन का अभियान जारी रखा। परन्तु 'सत्ता' ने यहाँ भी उनका पीछा न छोड़ा। मैजीनी का एक जीवनी लेखक लिखता है कि शासन के गुर्गे निरंतर उसकी तलाश मे रहते थे। वह एक मकान को छोड़ कर दूसरे मे और एक नगर से भाग कर दूसरे मे शरण लेता था। कभी-कभी मजीनी के किसी मकान को छोडने और पुलिस के वहाँ पहुँचने मे चार-पाँच मिनट का ही अन्तर रह जाता था। अतत. वह लन्डन पहुँचा, जो सदा से राजनीतिक विद्रोहियों का सुरक्षित-रक्षा-स्थान रहा है, और वहाँ वैठ कर उसने अपने आन्दोलन को आगे वढाने के लिए लेख और पुस्तके लिखी। परन्तु उस के यह प्रयत्न सफल न हुए। देशवासियों ने उसकी आवाज पर उचित ध्यान न दिया। जब कभी सफलता की मंजिल निकट आई तब देशवासी पाखडियो और सत्ताधिकारियों के षडयंत्रों का शिकार हो गए। इस प्रकार निरतर असफलताओं के कारण मैजीनी के जीवन मे एक समय ऐसा भी आया, जब उसे इटली के बाह्य जगत मे ही नही, स्वय अपने अंत.करण की दुनिया मे भी अधकार दिखाई देने लगा। वह अपने उन दिनों की मनोदशा का चित्रण करते हुए लिखता है—'बहुधा मै यह अनुभव करता हूं कि कही मैं ही तो पथभ्रष्ट नही, कही मैं ही तो गलती पर नही। जब अपने पराए सभी मेरे विरोधी है, जब मेरे सहयोगी ही मेरी निष्ठा पर सदेह करने लगे है, जब

देशवासी मेरी पुकार पर कान नही धर रहे है, तो क्या यह सम्भव नही कि मेरा चुना हुआ रास्ता ही गलत हो, मेरी आवाज आसमयिक हो और मेरे विचार ही भ्रममूलक हों ?' मैजीनी इस अधकार मे कई मास तक भटकता रहा। इसके बाद जब शकाओ के बादल छँट गए, तो उसपर प्रकट हुआ कि सतमार्ग वही था, जिस पर वह चल रहा था। मजीनी ने अपनी आत्म-कथा मे उन दिनो का हाल बडे विस्तार के साथ लिखा है, जब उनके मन व मस्तिष्क पर निराशा, निरुत्साह और शक का अधकार छाया हुआ था। उसने इस वृत्तात को लिपि बद्ध करने की आवश्यकता इस लिए अनुभव की ताकि आने आ वाले लोग जब इस प्रकार के आन्दोलनो मे भाग ले और सामयिक असफलताओ मे हताश होने लगे, तो मैजीनी की आत्मकथा के इस परिच्छेद से प्रेरणा ग्रहण करे और असफलता के आघात को वीरतापूर्वक सहन कर सके।

मैजीनी एक चरित्रशाली पुरुष था। उसे अपने लक्ष्य और आदर्श से अलौकिक प्रेम था। इतना प्रेम कि जब एक सुन्दरी ने उससे प्रणय निवेदन कर विवाह की इच्छा प्रकट की, तो उसने उत्तर मे कहा कि मेरे पास सिर्फ एक ही दिल है, और उसे मैं अपने देश को समर्पित कर चुका हू। अब मेरे हृदय में किसी और के प्रेम के लिए स्थान नही है। जब ऐसा दृढ़हृदय पुरुष भी असफलताओ से उदासीन हो सकता है, जब उसे भी अपने आदर्श की सत्यता मे सदेह हो सकता है, जब उसका आत्मविश्वास भी विचलित हो सकता है, तो फिर विचार कीजिए कि उन लोगों के निराशा-गर्त मे गिरने की सम्भावना कितनी अधिक है, जो गुण-चरित्र और धैर्य-दृढता मे मैजीनी के पासिग भी नही है ? मैजीनी का लक्ष्य स्पष्ट और उज्ज्वलित था। उसकी महत्वाकाक्षा बड़ी पवित्र और नि स्वार्थ थी। इसके बावजूद वह अवि-

चल न रह सका। तो फिर उन लोगों की दशा दयनीय क्यों न हो, जिनका ध्येय मनुष्य मात्र के कल्याण से ज्यादा अपने स्वार्थ की सिद्धि है। इस तुलना का आशय यह नहीं कि व्यक्तिगत उन्नति की इच्छा या उमकी पूर्ति के लिए प्रयत्न करना प्रशसनीय नहीं है, बल्कि केवल इस तथ्य का स्पष्टी करण उद्दिष्ट है कि पहली भावना दूसरी से अधिक पवित्र और पावन है। इस लिए मनुष्य उसके प्रभावतर्गत अधिक कष्ट सहन कर सकता है। कहने का तत्पर्य यह है कि जव इतना पवित्र और स्पष्ट लक्ष्य रखने वाले व्यक्ति भी असफलता से हतोत्साहित हो सकते है, तो हम साधारण लोगो को उपाय वल के अभाव अथवा असावधानी से अपने मार्ग मे कठिनाइयों के पहाड़ खड़े रहने से सदैव बचना चाहिए।

आप क्या चाहते है—इस का उत्तर अपनी परिस्थिति विशेप और अपनी योग्यता की समीक्षा करके मालूम कीजिए। इस विषय मे आप जितनी ज्यादा सावधानी और समझ-बूझ से काम लेगे, उतनी ही आप को अपने जीवन-निर्माण मे सुविधा होगी। इस प्रकार गहरे सोच-विचार के वाद आप यह स्थिर कर लें कि आप की मनोकामना क्या है, तो उसकी पूर्ति करने वाला लक्ष्य निश्चित कीजिए, और उसकी प्राप्ति के प्रयत्नों मे जुट जाइए।

अधिकतर लोग जीवन की प्रतियोगता मे केवल इस लिए मुँह की खाते है कि वे अपना कोई स्पष्ट और साध्य लक्ष्य निर्धारित नही करते। वे यह नो अनुभव करते है कि उनका वर्तमान कार्य-विभाव उनके स्वभाव और रुचि के अनुकूल नही है, और वे इसमे अधिक उन्नति नही कर सकते। परन्तु वे निश्चित रूप से किसी दूसरे विभाग की ओर भी संकेत नही कर सकते, जो उनके मनोरथों की पूर्ति का साधन वन सकता हो

कुछ लोग नितांत स्पष्ट और निश्चित शब्दों में कहते सुने जाते हैं कि वे किसी प्रांत के मुख्यमंत्री अथवा राज्यपाल बनने जा रहे है। परन्तु इस लक्ष्य को कैसे प्राप्त किया जा सकता है, उसका कोई सतोषजनक उत्तर उनके पास नही होता। सच तो यह है कि वे इस मौलिक प्रश्न पर विचार ही नही करते। फलस्वरूप वे प्रायः कोरे आदर्शवादी ही बने रहते है। डा० पील एक ऐसे नवयुवक के साथ अपनी एक बातचीत का विवरण बतलाते हुए लिखते है कि यह नवयुवक, जिसकी अवस्था प्रायः पचीस वर्ष की थी, और जो अपनी वर्तमान नौकरी से असतुष्ट था, परामर्श के लिए मेरे पास आया। वह जीवन में कोई बड़ा काम करना चाहता था और इस सिलसिले मे मेरे पथप्रदर्शन का प्रार्थी था। उसकी बाते सुनकर मैंने उससे पूछा कि तुम किस कार्य-क्षेत्र को पसन्द करते हो ? बोला, "मै उसका स्पष्टीकरण नही कर सकता, क्योकि मैंने इस प्रश्न पर कभी विचार ही नहीं किया। मैं केवल इतनी बात जानता हू कि मैं अपने वर्तमान काम से तग आ गया हूं।"

"अच्छा, तो यह बताओ कि तुम्हारी रुची किसी ओर है और तुम अपने ख्याल में किस काम को लगन के साथ कर सकते हो ?"

"यह मैं नहीं जानता। मैंने इन बातों पर विचार नही किया। मैं तो सिर्फ अपना वर्तमान कार्य छोड़ना चाहता हू।"

"अच्छा, अगर तुम्हें विभिन्न विभागो मे से किसी एक को चुनने का अवसर दिया जाए, तो तुम किसी विभाग मे जाना चाहोगे, तुम्हारी स्वाभाविक इच्छा क्या होगी ?"

"यह मैं कुछ करने के बाद ही बता सकता हूं।" यह उसका अतिम उत्तर था ! तब मैंने उसे सम्बोधित कर कहा—"देखो, तुम अपने वर्तमान विभाग से किसी दूसरे विभाग मे जाना चाहते हो लेकिन तुम नही जानते कि किस विभाग मे जाना

चाहते हो । तुम्हें यह भी मालूम नही कि तुम्हारी हार्दिक इच्छा क्या है, और तुम किस काम को करने के इच्छुक हो । इस अव-स्था मे यदि तुम अपनी दशा सुधारना चाहते हो, तो पहले अपने विचारों को सगठित करो, और जो प्रश्न मैंने अभी-अभी तुम से किए है, उनके उत्तर जानने की चेष्टा करो । अन्यथा तम्हारे सुधारने की कोई सम्भावना नही ।"

यदि आप उस उज्जवल लक्ष्य को प्राप्त करने के अभिलाषी है, जो एक दीर्घ काल से आप के सामने है, तो पहले अपने विचारो का सगठन कीजिए, उन पर आलोचनात्मक दृष्टि डालिए, और फिर स्थित कीजिए कि आप क्या चाहते है । जब एक बार निश्चय करलें, और अपना लक्ष्य निर्धारित करले, तो फिर पुरुषोचित ढग से वहाँ तक पहुचने का प्रयास कीजिए । मार्ग कॉटीला और उसमे उतार-चढ़ाव है, तो उसकी परवाह न कीजिए । अपने पर भरोसा कीजिए । फिर कॉटों को हटाकर मार्ग बनाना सहज हो जाएगा, और उतार-चढ़ाव को पार करने मे भी कठिनाई नही रहेगी ।

भय पर विजय

भय आत्मविश्वास का शत्रु है। दुनिया में बहुत से लोग अपनी योग्यता का समुचित पुरस्कार पाने से वचित रहते हैं; और अपने सदगुणो से स्वय को, अपने परिवार और सम्बंधियों को तथा अपने देश को लाभ नही पहुंचा सकते, क्योंकि वे एक अज्ञात भय के बोझ तले दबे रहते हैं। वे सुशिक्षित होते है; उनका अध्ययन भी विस्तृत होता है; वे सोच-विचार के अभ्यस्त होते है और उनके विचार भी प्राय स्वस्थ और सुस्थित होते हैं; परन्तु वे उनको अभियक्ति का साहस केवल इसलिए नही करते कि कही उनका सुझाव उपहास का विषय न बन जाए, और उन्हे भरी सभा मे लज्जित और तिरस्कृत न होना पडे।

कुछ लोग अपनी योग्यता से परिचित होते है, और अपनी वास्तविकता को भी एक अंश मे पहचान लेते है। उन्हे विश्वास होता है कि वर्षो के चिंतन और व्यवहार के बाद उन्होने जो जीवन-सबधी सिद्धात स्थित किए है, वे गलत या निराधार नही हैं, उन्हे यह भी विश्वास होता है कि यदि वे किसी समस्या पर अपने विचार किसी सभा आदि में प्रस्तुत करे, तो उन्हे निरर्थक कह कर ठुकराया भी नही जाएगा। परन्तु भय और भीरुता उन्हें अपने विचार अभिव्यक्ति करने से रोक देती है।

इन लोगो के जीवन में ऐसे अवसर भी आते है, जब उनका जी चाहता है कि अपनी सोच के परिणामों को निर्भयता से सब

के सामने रखदे। परन्तु भय और घबराहट उन्हे मुँह खोलने का अवसर नही देती। तब वे अपनी इस कायरता पर मन ही मन में झुंझला उठते है, अपने को कोसते है और सँकल्प करते है कि 'भविष्य' में वे साहस से काम लेगे ? परन्तु जव 'भविष्य' वर्तमान बन जाता है, तव वे फिर भयग्रस्त हो जाते है। इस साहसहीनता का परिणाम यह होता है कि वे अपने मूल्यवान विचारो के लिए भी प्रशँसा प्राप्त करने से वचित रहते है।

आपको अपनी जिन्दगी के किसी मोड पर इस कठनाई का कटु अनुभव हुआ होगा कि किसी सभा में लोकतत्र या साम्यावाद पर वाद-विवाद हो रहा है, और आप उपस्थित जनों मे से किसी के अच्छे या बुरे तर्क को सुनकर मन ही मन मे कह उठते है कि यदि दूसरा पक्ष अमुक तर्क उपस्थिन करे, तो उसकी विजय निश्चित है। परन्तु किसी का ध्यान उस तर्क की ओर नही जाता। तब आप व्याकुल हो उठते है, और आप का मन चाहता है कि आप भी इस विवाद मे भाग ले, अपने विचार व्यक्त करके श्रोतागण को आश्चर्यचकित कर दे। परन्तु आपका स्वाभाविक भय आपकी इच्छा पूर्ति में वाधक हो जाता है। किसी समय आप वड़े साहस से काम लेकर बोलने का सकल्प भी कर लेते है। परन्तु मद स्वर मे 'मेरा विचार है।' कहने के पश्चात् आपकी ज़बान लड़खड़ा जाती है।

मान लीजिए, आप किसी सुप्रसिद्ध व्यापारिक सस्था मे जूनियर अफसर है। प्रधान सचालक प्रति सप्ताह अफसरो की कांफ्रेन्स इस उद्देश्य से करता है, ताकि संस्था की बेहतरी और उन्नति की समस्याओ पर मिल कर विचार किया जाए। संचालक चाहता है कि सव अफ़सर इस सप्ताहिक सम्मेलन मे अपने सुझाव प्रस्तुत करे, विशेषकर 'तरुण मस्तिष्क' वाले, ताकि उन पर विचार-विमर्श करके उनमे जो उपयोगी हो, उन्हे अपनाया

जाए। अव आप चाहें, तो अपने उन सुझावों को जो, आप मित्र मंडली में प्राय: व्यक्त करते रहते हैं, संचालक के सामने रखकर स्वयं को संस्था का हितैषी सिद्ध कर सकत हैं, और अपनी उन्नति का द्वार खोल सकते हैं। परन्तु आप इस भय से मौन रहते हैं कि कही आपसे बड़े अफ़सर उन्हे रद्द न कर दे, उन्हें मूर्खतापूर्ण कह कर आपको लज्जित न करें। या फिर आप का 'दु:साहस' आपके लिए अहितकर ही सिद्ध न हो।

यदि आप अपने वोते दिनों पर दृष्टि दौड़ाएँ तो आपको किसी ऐसी घटना का स्मरण अवश्य ही आएगा, जव आपने अज्ञात भय के कारण अपनी सम्मति व्यक्ति करने में संकोच किया। मैंने इस समस्या पर कई मित्रों और बुद्धिमान लोगों से विचार विनिमय किया है, और उन्होने प्राय: इस अनुभव की पुष्टि की है कि भय और सकोच के कारण वे बहुधा अपनी योग्यता का परिचय देने का सुअवसर गँवा बैठे है।

मेरे एक मित्र की अवस्था चालीस के लगभग है, वह काफ़ी होशियार और चतुर व्यक्ति है, परन्तु अभी तक कोई विशेष उन्नति नही कर सका। कारण उसने अपनी बौद्धिक योग्यता का प्रदर्शन करने की कभी कोशिश नही की। वह चाहता तो ज्ञान और साहित्य का दुनिया मे नाम पैदा कर सकता था। परंतु उसने 'वीर-रीति' अर्थात सत्य भाषण और निर्भयता को अपना सिद्धांत नही बनाया। फलस्वरूप वह अपनी योग्यता का लाभ न उठा सका। उससे ज्यादा ख्याति तो उन लेखकों और कवियों को प्राप्त है जो विशुद्ध ज्ञान और विद्या-बुद्धि में उससे कहीं हीनतर हैं।

मैं एक सज्जन को जनता हूँ, जो सुभाषी और मधुरवक्ता हैं। आप राजनीतिक समस्याओं पर वड़े तर्कयुक्त और प्रभावी ढंग से [illegible]ण्याणी करते हैं। परन्तु वह आज तक कुशल व्याख्यांता

नही बन सके। मैंने एक बार उन्हे एक अल्पसंख्यक समूह में भाषण करते देखा, तो बड़ी निराशा हुई। वह बोल तो रहे थे, परन्तु उन्हें सिर-पैर का होश न था। कुर्सी के सहारे खड़े थे, और बार-बार पानी माँग रहे थे। जब वह अपनी वक्तृता समाप्त कर चुके, या यों कहिए कि उस विपत्ति से मुक्त हुए, तो मैंने उन्हे बताया कि वह जब तक अपने इस वैरी—भय पर काबू नही पाएँगे, तब तक वह एक अच्छे वक्ता नही बन सकते। आप ने अपनी इस कमजोरी को माना भी, और वायदा किया कि आइन्दा दृढता से काम लेगे। आपने आजकल भय के विरुद्ध नियमित रूप से अभियान चला रखा है, परन्तु अभी तक विजय प्राप्त करने में सफल नही हुए। शायद इनके प्रयत्न अभी अपरिपक्व है।

भय और आतक मनुष्य के लिए किस प्रकार घातक सिद्ध हो सकते है, इसका एक उदाहरण जापान में देखने मे आया। यह सन् ५३ की घटना है। शिमोसीकी के कोची निकाशी नामक एक युवक ने केवल इस कारण आत्महत्या कर ली कि उसके निकट ऐसी दुनिया में जीवित रहना व्यर्थ था, जिसमें अणुबम के प्रयोग की सम्भावना बनी हुई है। भगवान का लाख-लाख धन्यवाद है कि दुनिया मे मि० कोची के 'सहधर्मियो' की सख्या अधिक नही, अन्यथा मनु की संगति कब की समाप्त हो चुकी होती, क्योकि मनुष्य मात्र के सिर पर ऐटम बम से भी ज्यादा भयानक और निश्चित खतरा मृत्यु के रूप में सर्वदा मडराता रहता है। कुछ भी हो, मि० कोची का शिक्षा-प्रद मृत्यु से इस तथ्य का ज्ञान होता है कि मनुष्य भयग्रस्त और आतकित हो कर केवल जीवन के सुख चैन से ही नही, बल्कि कभी-कभी तो स्वय जीवन से ही हाथ धो बैठता है। भय के प्रभावांतगत अनेक पाप और कुकर्म तो होते ही है। सम्भवत. इसी लिए अभिनव मनो-

विज्ञापन के विशेषज्ञ भय और आतंक को सक्रामक रोगों से भी ज्यादा खतरनाक समझते है, और इनके उन्मूलन के लिए यत्नशील रहते हैं।

यदि आप सफलता के इच्छुक है, और अपनी योग्यता का पूरा मूल्य प्राप्त करना चाहते हैं, तो आपको अपने विचारो की अभिव्यक्ति मे कभी सकोच न करना चाहिए, और अपनी योग्यता प्रदर्शित करने का कोई अवसर हाथ से जाने न देना चाहिए। अपनी सम्पति निःसकोच व्यक्त कीजिए, और निर्मम भय को अपना भविष्य अंधकारमय वनाने का मौका कभी न दीजिए। याद रखिए, मनुष्य नाते आप इस धरती के विजेता है। आप जो चाहे कर सकते है, जिस लक्ष्य तक पहुँचना चाहे, पहुँच सकते है। डर, भय, विवशता और तुच्छता का प्रदर्शन आपको शोभा नही देता।

जब आप देखते हैं कि महत्ता का राजमुकट केवल उन्हीं लोगो के सिर पर रखा गया, जिन्होने अपनी रचनात्मक कल्पना शक्ति की उपज को दुनिया के सामने रखने मे विलम्ब नही किया, तो फिर आप उनके विचारो को प्रकट करने मे संकोच क्यो करते है? क्या सिर्फ इसलिए कि आपके विचार सुप्रसिद्ध विद्वानो के विचारो से पूर्ण या आंशिक रूप में भिन्न हैं? परन्तु यह तर्क युक्ति सगत नही है। क्या आप नही जानते कि दुनिया मे जब किसी विचारक ने प्रसिद्धि प्राप्त की, तो प्राय. अपने आविष्कृत किसी ऐसे सिद्धात के कारण, जो उसके पूर्ववर्ति विचारको के सिद्धातो से भिन्न था। आप जिन महान व्यक्तियो को मानवता के उद्धारक और सेवक समझते है, और उनकी पुण्य स्मृति मे नतमस्तक हो जाते है, उनकी महत्ता का रहस्य उन की विद्या-वृद्धि से ज्यादा उनके आत्मविश्वास मे था। उसी की सहायता से उन्होने अपने विचार और सिद्धांत सबके सामने रखे,

अपने मत के प्रचार के लिए पुस्तकें लिखीं, आपत्तियो के युक्ति-युक्त उत्तर दिए, और शास्त्रार्थ किए। यदि वे भीरु होते और डर के मारे अपनी डगर से हट जाते, तो आज दुनिया न उनके नाम से परिचित होती, न उनके सिद्धांतो से मनुष्य का कल्याण ही होता।

तनिक कल्पना कीजिए कि यदि प्रथम महायुद्ध के वाद गाँधीजी अपने इस अनूठे विचार को, कि शान्तिपूर्ण उपायो द्वारा स्वतंत्रता-प्राप्ति सम्भव है, कार्य रूप में परिणत करने के लिए अहिसात्मक सत्याग्रह का झडा बुलन्द न करते, तो क्या देश में इतने व्यापक पैमाने पर आन्दोलन छिड सकता था कि एक वार तो ब्रिटिश साम्राज्य की जड़े तक हिल गई? और यदि नेताजी सुभाष बोस अपनी इस धारण को, कि स्वतंत्रता-प्राप्ति के लिए स्वतंत्रता सुलभ होती? दोनों अवस्थाओ में निर्णयात्मक तत्व इन महापुरुषों के विचारों की प्रकृति नही, वल्कि उनके व्यक्तिगत विश्वास की यह दृढ़ता थी कि उनके विचार सही है।

जिन विचारको और विद्वानों की महानता को आप स्वीकार करते है, उनकी एक सूची वनाइए और फिर विचार-पूर्वक देखिए कि उनकी महत्ता का रहस्य क्या है। आप निश्चय ही इस निष्कर्ष पर पहुँचेगे कि उनकी वास्तविक महिमा दूसरों के अनुकरण की वजाए मौलिकता मे और समालोचना की वजाए रचना में निहित थी। आप आइन् स्टाइन् के प्रशसक है, कार्ल मार्क्स के गुण गाते है, रवीन्द्रनाथ की कविता से आनन्दित होते हैं, अथवा गाँधी, सुभाष और नेहरू को अपना उद्धारक मानते हैं, तो केवल इसलिए कि इन सवने पुरानी लकीर को छोड कर नए मार्ग तलाश किए, जीवन का नया दर्शन प्रतिपादित किया, अथवा नई परिस्थितियों के अनुसार परम्परित दर्शन में आवश्यक परिवर्तन किए, और मानव जीवन को सुखमय और समुन्नत

वनाने के लिए नए आचार-विचार आविष्कृत किए। इनमें से कोई भी अपनी योग्यता को प्रदर्शित करने से पहले औसत आदमी से श्रेष्ठतर नही था। वे तभी ऊँचे उठे, जब उन्होने आत्म-विश्वास की शक्ति से काम लिया, और पुरानी डगर के विरुद्ध विद्रोह का सूर्यनाद किया। इसलिए फ़ारसी मुहावरे के मुताबिक 'जो कुछ दिल मे रखते हो, वाहर लाओ, और एमर्सन के इस कथन को हमेशा याद रखो कि 'ध्वनि वनो, न कि प्रतिध्वनि!"

प्रतिध्वनि वनने में कोई श्रेष्ठता नही है। दुनिया ऐसे लोगों से भरी पडी है, जो दूसरो के विचारों पर चलते है, दूसरों की कीर्ति पर गर्व करते हैं, परन्तु अपने मन की कहने का साहस नहीं करते। ऐसे लोग भी वहुत है, जो दूसरों के विचार चुराते हैं या उनकी व्याख्या करते हैं, और अपने पूज्य के विचारों से जरा भी विमुख होना महापाप समझते है। ऐसे लोग प्रायः विद्वान भी होते हैं, और विचारशील भी, परन्तु उनकी विचारशक्ति की एक सीमा नियत है, जिसको उल्लाँघने का वे अपने को अधिकारी नही समझते। उनके ख्याल में हमारे पूर्वज हमारे लिए जो कुछ सोच और लिख गए है, वही पर्याप्त है, और अनंत काल तक उसी को अपना जीवन-दर्शन वनाए रखना चाहिए। वे कहते हैं कि हमे अपने ऋषियो, महात्माओं और महापंडितों के विचारों मे सामयिक आवश्यकताओ के नाम पर संशोधन करने का कोई अधिकार नही है। परन्तु उनसे कहा जाए कि जेट विमान और आण्विक शक्ति तो आज के मनुष्य के आविष्कार है, और आर्थिक समता का सिद्धांत भी तो आज की उपज है, तो इसका कोई युक्तिसंगत उत्तर उनके पास नही होता। परन्तु अन्ध-विश्वास और भेड चाल को त्यागने पर वे कभी तैयार नही होते। उनका विवेक निद्रामग्न और मस्तिष्क निष्क्रिय हो चुका है। इसलिए ऐसे लोगों से औचित्य की आशा व्यर्थ है। हाँ, उस

समूह का सुधार अवश्य सम्भव है, जिसका मूल रोग पुरातन-वाद से ज्यादा कल्पित भय और अनुचित संकोच है। यह लोग भी जब अपने विचार करते है, तो इसी निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि आज के विचारक को निःसदेह यह अधिकार प्राप्त है कि वह अतीत को विरासत का निरपेक्ष दृष्टि से अध्ययन करे। और यदि उसमें कही कोई त्रुटि या कमी पाई तो उसका निवारण करने में आनाकनी न करे। यहाँ पहुँच कर उनका जी चाहता है कि वे अपने मन मे उत्पन्न होने वाले विचारो को निर्भीक होकर सबके सामने रखदे परन्तु अज्ञात भय से मन की मन में ही रह जाती है। इस श्रेणी के लोगों की स्थिति प्रतिध्वनि से ज्यादा नही है। ये लोग कभी सफलता को प्राप्त नही कर सकते। यदि आप इस श्रेणी में खड़े होना पसन्द नही करते, तो एमर्सन का परामर्श शिरोधार्य कीजिए, और अपनी योग्यता पर भरोसा करते हुए अपने मनोबल, बुद्धिबल और उपायबल का प्रदर्शन कीजिए।

क्या आपने कभी कोई उत्तम पुस्तक या लेख पढते हुए अनुभव किया कि जिन विचारों की अभिव्यक्ति के लिए लेखक का नाम समस्त विश्व में सुप्रसिद्ध है; उसने स्वयं आपके विचार बहुत कुछ भिन्न है। अब यदि कोई तटस्थ आलोचक लेखक के विचारों के साथ आप के विचारों का तुलनात्मक अध्ययन करे, तो बड़ी सरलता के साथ आपको उक्त लेखक से बडा विचारक सिद्ध कर सकता है। परन्तु यही काम यदि आप स्वयं कर सकें, अर्थात अपने विचारो को सगठित कर उचित रूप रीति से प्राकाशित कर सके, तो वही विचार, जिन्हे आप निम्न स्तरीय और मूल्य विहीन समझकर रद्द कर देते है, और उनकी अभिव्यक्ति का साहस तक नही करते; सुसंगठित और सुव्यक्त होकर उच्च स्तरीय और मूल्यवान हो जाएंगे। इस स्थापना का समर्थन विश्वविख्यात

दार्शनिक एमर्सन इन शब्दो मे करते हैं."प्रत्येक रचनात्मक कार्य मे हमे अपने घुतकारे हुए विचार मिलते हैं। हमने उन्हें तुच्छ समझकर कोई महत्व नही दिया था। परन्तु जब वे किसी दूसरे के विचार बनकर हमारे सामने आते हैं, तो हम आत्मविभोर होकर रह जाते है।" एमर्सन के विचार मे कला के अमूल्य नमूने हमारे लिए इस दृष्टि से नितात शिक्षाप्रद हैं कि वे हमे हमारी महत्ता का स्मरण दिलाते है। उससे हमे यह सवक मिलता है कि मनुष्य को अपनी विचार-क्रिया के परिणामो को उपेक्षनीय नही समझना चाहिए। और उन्हें दुनिया के सामने पेश करने में सकोच नही करना चाहिए। अन्यथा कल कोई नवागतुक उन्ही विचारो को शब्दों का रूप देकर दुनिया स उनकी कीमत वसूल कर लेगा, और हम, जो वास्तव मे उन विचारों के जन्मदाता है, मुँह देखते रह जाएँगे।

पिछले दिनो मुझे एक शिक्षित ग्रामीण युवक ने बताया कि राज्य की राजधानी में आकर यहाँ के राजनीतिक, साहित्यिक और पत्रकारिता सम्बधी क्षेत्रो मे भाग लेने और नेताओं, लेखकों और पत्रकारो से भेट करने के वाद मुझपर यह भेद खुला कि इन लोगों की श्रेष्ठता और विद्वता का जो आतंक मुझ पर छाया हुआ था, उसका वास्तविकता से कोई सम्बंध नही है। इनमें से वहुत कम उतने प्रतिभाशाली निकले, जितना कि मैं उन्हे समझता था। मुझे ज्ञात नही कि इस देहाती नौजवान ने किन राजनीतिज्ञों, पत्रकारो और लेखकों से मिलकर अपनी धारणाओं में परिवर्तन की आवश्यकता अनुभव की, परन्तु इसमें संदेह नही कि कुछ लोग स्वय को अकारण ही हीन और नगण्य समझते हैं, और अपने समस्तरीय लोगो से दवे रहते हैं।

अब यदि आपने भय से मुक्ति प्राप्त करने का संकल्प कर लिया है, और भविष्य मे उपयुक्त अवसर पर आप अपने सोचे

समझे मत को अभिव्यक्ति करने में संकोच नहीं करेंगे, तो आप को शीघ्र ही इस लाभदायक परिवर्तन का सुफल भी प्राप्त हो जाएगा। परन्तु इस तथ्य को न भूलिए कि विचाराभिव्यक्ति के पूर्व आपके व्यक्तित्व में वह योग्यता भी होनी चाहिए, जिसके बिना विचारों की उच्चता और मत के औचित्य की कल्पना भी नहीं की जा सकती। यदि आप सुशिक्षित है, और ज्ञान-विज्ञान की जिस शाखा में अपनी प्रतिभा दिखाना चाहते है, उस पर पूरा अधिकार रखते है, तथा उसके सम्बंध मे जितना भी उत्तम साहित्य उपलब्ध है, उसका ध्यानपूर्वक अध्ययन कर चुके है और स्वयं भी इन विपयों पर विचार करते रहते है और इनके सवध में कुछ कहने के लिए आपके पास है, तो फिर अपने विचारो को पूरे विश्वास के साथ प्रस्तुत करने की योग्यता आप मे मौजूद है। और यदि इस योग्यता के वाद भी आप मौन धारण किए रहे, तो इसका अर्थ यह होगा कि आप अपने पर तो अत्याचार कर ही रहे है, अपने देश पर भी कर रहे हैं। इसके विपरीत यदि आपको अध्ययन से रुचि नही है और सोच विचार से आप कोसो दूर भागते है, तो फिर आप किसी गूढ विशय पर मताभिव्यक्त नही कीजिए तो वेहतर है, क्योकि इस प्रकार कम से कम आपकी योग्यता पर पर्दा तो पड़ा रहेगा, और आप भरी सभा में उपहास का विषय तो न बनेगे !

कोई उच्च विचार उत्तम सुझाव अथवा अनूठी राय प्रस्तुत करने की योग्यता वर्षों के चिंतन और परिश्रम के वाद ही उपलब्ध होती है। जिस प्रकार मधुमक्खी नाना प्रकार के फूलो पर वैठती है और केवल उन्ही फूलो से रस लेती है, जिन मे मिठास होता है, और इस तरह हजारो फूलो से मधुकर उपलब्ध कर मधु की एक बूंद सग्रहित करती है, उसी प्रकार विचारको को भी कोई नया विचार अथवा सिद्धात प्रतिपादित करने

के लिए वर्षो तक घोर परिश्रम करना पडता है। सैंकड़ों ही पुस्तके और ग्रंथ वे पढ डालते है, और निरंतर अनुसंधान की सिरदर्दी उन्हें सहन करनी पडती है। उन तर्को का उत्तर भी उन्हे पहले से सोच कर तैयार रखना पड़ता है, जो उनके सिद्धांत के विरुद्ध उपस्थित किए जा सकते है। इस प्रकार जब वे इन सब बाधाओं को पार कर लेते हैं, और उन्हें विश्वास हो जाता है कि उनका विचार या सिद्धांत न केवल सही है बल्कि उसकी सत्यता को प्रदर्शित भी किया जा सकता है, तभी वे उसे दुनिया के सामने रखने का साहस करते है।

इसलिए यदि आप आत्मज्ञान का महत्व जान गए है, और अपने विचारों का प्रचार कर के अपनी योग्यता की धाक जमाना चाहते है, तो पहले ज्ञानोपार्जन किजिए। स्वाध्याय को अपना नित्य नियम बनाइए। सबसे बढ़कर स्वयं प्रकृति—जिसमें मानव-प्रकृति भी सम्मलित है—का पर्यवेक्षकण बड़े ध्यान से कीजिए और सोच-विचार के अभ्यस्त बनिए। इन तैयारियों के बाद ही आप अपनी योग्यता का प्रदर्शन करने को स्थिति में होगे। तब भय और सकोच के बन्धन से मुक्ति लाभ कीजिए और दुनिया को दिखा दोजिए कि आप उन लोगों में से नही है, जिनकी कुल सम्पत्ति सुनि-सुनाई बातें या दूसरो के विचार है, बल्कि आप की गणना उन बौद्धिक महारथियों में है, जो केवल अपने ही प्रवक्ता होते है, और दूसरो को अपने मौलिक विचारो से प्रेरणा प्रदान करते है।

यह जरूरी नही कि आप जो सुझाव पेश करे, वह शत प्रति शत मान्य ही हो, और सभी लोग उसके समर्थक हो जाएँ। या आप अपने विचारो के प्रचारर्थ जो लेख लिखे, उस पर किसी को कटु आलोचना करने का अधिकार न हो, क्योंकि आलोचना और आक्षेप के प्रहारो से तो कोई बड़े से बडा विचारक, लेखक

या कलाकार भी सुरक्षित नहीं रह सका परन्तु इतनी वात जरूरी है कि आलोचना से खिन्न या क्रोधित होने की वजाए लाभ उठाने में ही अधिक बुद्धिमता है। आलोचना का स्वागत करना चाहिए। इस परामर्श की आवश्यकता इसलिए अनुभव होती है कि बहुत से लोग वडे धूम-धड़क्का, उत्साह, और साहस के साथ जीवन-क्षेत्र में प्रवेश कर है, परन्तु वे इस उग्रता का प्रदर्शन तभी तक करते हैं, जव तक कि उन्हें आपत्ति और विरोध का सामना नही होता। विरोधात्म आलोचना होते ही उनका सारा जोश ठंडा पड जाता है, और वे कुछ ऐसे मौन और निष्क्रय हो कर बैठ जाते है, जैसे उनमें मुँह में दवाना और अंगों में क्रिया शक्ति ही न शेष रही हो। या फिर इतने भयभीत हो जाते है कि लोगों से मुँह छिपाते फिरते हैं। यही विश्वास शून्यता उन्हें ले डूवती है; वे फिर शायद ही दुवारा उभर पाते है।

सदैव आशान्वित रहिये

'मैं असुखद परिस्थितियों के विरुद्ध वीस वर्ष तक सघर्ष करता रहा हूँ। मैंने वित्तीय कठिनाइयो से मुक्ति-लाभ के लिए नित्य दस-दस घंटे काम किया है। परन्तु मैं अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल नही हुआ। छल कपट और धूर्त्तता इसके युग मे सफल होना मेरे वस का रोग नही। मैं कुछ कर दिखाने की उत्कट भावना से जीवन के अधिकतर सुखो से वचित रहा। परन्तु अव मैं शाति और सतोष का जीवन व्यतीत करना चाहता हूँ। मैं वर्तमान परिस्थिति से सतुष्ट हूँ।"

ये विचार एक ग्रैजुएट के है जिसे मैं काफी समय से जानता हूँ जव कॉलेज मे पढता था, तो वड़ा ही साहसी और महत्व-काक्षी था। उसकी नस-नस में जीवन की उमगे तरगित थी। वह एक मध्यमवर्गीय परिवार मे पैदा हुआ था, परन्तु वह कहा करता था कि वह उन्नति के शिखर पर पहुँच कर रहेगा। प्रसिद्ध व्यक्तियो की जीवनियों के अध्ययन से उसे विशेष रुची थी। जव वह विदेशी शासको के विरुद्ध आवाज़ बुलन्द करता था, तो उसकी वाणी से आग वरसती थी।

वह उच्चादर्शी और आत्मविश्वासी था। वह जिस कार्य को प्रारम्भ करता, उसे पूर्ण करके ही दम लेता था। नेपोलियन की तरह उसके शव्दकोप मे भी 'असम्भव' शव्द मौजूद नही था। उसने प्रतिकूल परिस्थितियो मे कुछ ऐसे कार्य सम्पन्न किये,

जो प्रकट में उसके सामर्थ्य से वाहर थे।

वह अभी युवा और स्वस्थ है, विद्याबुद्धि से सम्पन्न है, उस का ज्ञान-क्षेत्र विस्तृत और वोध-शक्ति प्रबल है, उसमें वल-तेज का वह भंडार अब भी सुरक्षित है, जिसका संचय उसने युवावस्था में किया था। वह पहले से ज्यादा अनुभवी और दूरदर्शी है, परन्तु अब उसके लिए जीवन में कोई आकर्षण नही रहा, न वह पहले जैसा उत्साह और सकल्प-शक्ति ही शेप रही है। अब वह किसी के विरुद्ध संघर्ष नही करना चाहता। महामहिम देश नेता बनना तो दूर रहा, अब वह किसी छोटे से समूह का पथनायक भी नही बनना चाहता। अब वह केवल शांति चाहता है, विश्राम और विराग का प्रार्थी है।

"यह असम्भव है कि निर्धन परिवार में जन्म लेने वाला मुझ जैसा व्यक्ति किसी क्रांतिकारी आन्दोलन का प्रवर्त्तक बन सके। श्रेष्ठता और नेतृत्व के राजमुकुट निर्धनों के लिए नही हैं, 'जवाहरलाल' जैसे धनिक-पुत्रों के भाग्य में ही लिखे गए है। मैं 'जवाहर' से ज्यादा काम कर सकता हूँ। मैं देश व जाति की सेवा तथा समाज सुधार और राष्ट्रोन्नति की योजनाएँ सोचने मे अधिक निपुण हूँ। परन्तु दरिद्रता मुझे कुछ नही करने देती। सच बात यह है कि दरिद्र-नारायण का उपासक कोई महान कार्य कर ही नही सकता।'

ये विचार किसी अशिक्षित नवयुवक अथवा मामूली पढे-लिखे व्यक्ति के नही है, वल्कि एक ऐसे विद्वान के है, जो अपने निकट स्वयं को 'विद्यासागर' समझते हैं। मैं उनकी इस विचार-धारा का परिचय पाकर आश्चर्यचकित रह गया।

तथ्य यह है कि विगत अर्धशताब्दी मे ऐसे कितने ही व्यक्तियों ने क्रांतिकारी आन्दोलनो की नीव रखी है, तथा राष्ट्रो का नेतृत्व-भार संभाला है, जिनका जन्म अत्यन्त ही

मे हुआ था, और जिन्हें किसी सामान्य पाठशाला में भी शिक्षा ग्रहण करने का सौभाग्य प्राप्त नही हुआ था। जब मैंने एक दर्जन से ज्यादा ऐसे विश्रुत व्यक्तियो के नाम गिनवा दिए, जो गरीब माता-पिता की 'भाग्यहीन सतान' होने पर भी उच्चतम पद को प्राप्त हुए, तो वह अपने दावे से हट तो गए, परन्तु मुझे उनकी आँखो मे कोई ऐसी आशा अथवा वाणी मे विश्वास की झलक दिखाई न दी, जिससे यह अनुमान हो सकता कि अब वह भी सफलता-प्राप्ति के लिये सघर्ष करेगे, अथवा देश की प्रगति के लिए किसी नए उद्यत का प्रारम्भ करेंगे। वह एक वृहत् व्यापारिक सस्था से सम्बन्ध हैं, और उच्च वेतन पाने के अलावा अपनी कुछ सम्पत्ति भी रखते है। परन्तु वह आज भी यही कहते है कि यदि परिस्थितियाँ अनुकूल हो जाएँ, और उन्हे 'कही से' कुछ आर्थिक सहायता मिल जाए, तो वह बहुत कुछ कर सकते है ! परन्तु वह किसी प्रकार का खतरा मोल लेने को तैयार नही है।

इस श्रेणी के लोग सदैव परिस्थितियों के अनुकूल होने की प्रतीक्षा करते रहते है और अपनी वर्तमान अवस्था से असतुष्ट होने पर 'सतुष्ट' है, क्योंकि वे कोई खतरा मोल लेने को तैयार नही हैं। वे केवल क्रांति और परिवर्तन की बातें ही करते है। इसलिए नही कि वे स्वय क्राति का झडा बुलन्द करने का इरादा रखते है, वल्कि इसलिए कि कोई दूसरा इस ओखली मे अपना सिर दे दे, और जव सव कुछ हो चुके, तो वे परिवर्तन के सुपरिणामो मे भागीदार वनने के लिए आ उपस्थिति हों।

ये लोग जीवन की वाजी हार चुके है। ये अपनी योग्यता की मुह मागी कीमत वसूल नही कर सके, और अव अपनी आकाक्षाओ का खून होते देख रहे है, पर कुछ कर नही पाते।

इसलिए नहीं कि भाग्य ने उनका साथ देने से इन्कार कर दिया, या समय ही उनका विरोध करने पर कटिबद्ध हो गया, बल्कि इसलिए कि वे अपनी सब से मूल्यवान वस्तु-अपनी महासम्पत्ति-आशा को त्याग बैठे। जब तक उन्हें सफलता की आशा थी, वे कठिनाइयों का धैर्यपूर्वक मुकाबला करते रहे; विपत्तियो के झझावात में भी उनके कदम नही डगमगाए। परन्तु आशा-दीप के बुझते ही उन्हें अपने चतुर्दिक घोर अंधकार दीखने लगा। वे सहज ही में पथ-भ्रष्ट हो गये। उनका देह-दुर्ग अभी तक सुदृढ है, परन्तु उसके भीतर की आत्म-रूपी रक्षक सेना निर्बल और निर्जीव हो चुकी है। उनके जीवन का सब से बड़ा दुःखांत कांड यही है कि अब वे उस शक्ति से काम नही ले सकते, जो सब सफलताओ की कुँजी और आधार है।

यदि आप जीना चाहते है और सफलता की अभिलाषा रखते है, तो 'अविश्वास' और निराशा को अपने पास फटकने न दीजिए। कभी हार न मानिए। याद रखिए, हमारा जीवन हमारे विचारों का प्रतिबिंब होता है। यदि हमने दु ख, निराशा और पराजय के विचारों को अपने मन व मस्तिष्क पर अधिकार जमाने का मौका दिया, तो हम सचमुच दु.ख और निराशा की मूर्ति बन कर जाएगे।

"जैसे हम सोचते है, वैसे ही हम बन जाते है" यह एक प्रसिद्ध उक्ति है, और इसकी सत्यता से इन्कार नही किया जा सकता। एमर्सन कहते हैं कि मनुष्य वही कुछ बनता है, जो कि उसके विचार होते है। इसमे सदेह नही कि विचारो मे मानवी जीवन को बनाने अथवा बिगाड़ने की महान शक्ति है। इसलिए निराश, विश्वासहीनता, आत्मतुच्छता और आत्मतिरस्कार के विचारों से दूर का भी सम्बन्ध न रखिए। और परिस्थितियाँ चाहे कितनी ही विकट और विपदपूर्ण क्यो न हो जाएँ, अपने

हृदय में आशा-दीप को कभी बुझने न दीजिए। हमेशा-आशान्वित रहिए और अपने को सदैव सफल समझिए।

सफलता के विचार चुम्बकीय प्रभाव रखते हैं। वे विरोधी परिस्थितियों को भी अनुकूल बनाने मे सहायक होते हैं। वे आप का साहस बढाते है, आप की क्रिया-शक्ति की वृद्धि करते है। और इस प्रकार सफलता की मजिल को निकटतर लाते है।

दुनिया मे अधिकतर लोगों की असफलता का मुख्य कारण यह होना है कि उनके विचारो और कृत्यो में सगति नही होती। वे अपने व्यवसाए मे सफलता-प्राप्ति के लिए पूंजी और श्रम को तो आवश्वक मानते हैं, परन्तु अपनी विचार-शक्ति और इच्छा-शक्ति से कुछ अधिक काम नही लेते। वे व्यापारिक संस्था तो स्थापित कर देते है, परन्तु उसे सफलतापूर्वक चलाने का विश्वास उन्हे नही होता। दूसरे शब्दो में वे अपनी सम्पूर्ण शक्ति शारीरिक मानसिक एव भावनात्मक-सफलता-प्राप्ति के उद्देश्य की ओर केन्द्रित नही करते। परिणाम यह होता है कि वे असफल हो जाते हैं अथवा आंशिक सफलता हो प्राप्त कर पाते हैं।

मैं एक प्राथमिक पाठशाला के अध्यापक को जानता हूँ, जो पाँचवी श्रेणी के विद्यार्थियो को छात्र-वृत्तियाँ दिलाने का विशेषज्ञ माना जाता है। वह प्रतिवर्ष चार-पॉच छात्रों को वृति परीक्षा के लिए तैयार करता है, और प्राय. प्रति वर्ष हो उसके पढाए हुए दो-तीन परीक्षार्थी वृति-प्राप्ति मे सफल हो जाते हैं। एक वार मैंने उससे इस आश्चर्यजनक कार्य-दक्षता का रहस्य पूछा, तो उसने उत्तर दिया कि वह अन्य अध्यापको से किसी रूप मे भी अधिक निपुण अथवा योग्य नही है। बात केवल इतनी है कि उसे अपने पर पूर्ण विश्वास है और वह सदैव आशान्वित रहता है। उसने कहा कि मैं यह कल्पना भी

नही कर सकता कि मेरे प्रयत्न कभी विफल भी हो सकते हैं। इस विश्वास के साथ मैं स्वयं परिश्रम करता हूँ, और ठीक वैसी ही तैयारी करता हूँ, जसे कि स्वय मुझे छात्रवृत्ति प्राप्त करनी हो। ऐसी ही तैयारी मेरे छात्रों की भी हो जाती है। मेरी सफलता का दूसरा रहस्य यह है कि मैं अपने अत्मविश्वास से अपने छात्रो मे भी यह विश्वास पैदा कर देता हूँ कि वे सफल हो कर रहेगे।

यह 'लोह-विश्वास , यह अटल आत्मवल मनुष्य मे कव पैदा होता हे ? जब वह सदैव आशान्वित रहे, जव उसकी मानसिक दुनिया में आशा, आनन्द और आत्मनिष्ठा के दीप सर्वदा प्रज्वलित रहे, और जब वह नित्यप्रति कल्याण, सफलता और महत्ता के ही स्वप्न देखे। उसे हेमन्तकाल के वाद बसतऋतु के आगमन का विश्वास रहना चाहिए, और ग्लैडस्टोन के शब्दों मे यह कहते रहना चाहिए कि 'जीवन व्यर्थ का परिश्रम नही है, बल्कि एक शिष्टता-युक्त और भव्यशील अभियान है।"

आप भी किसी कार्य: व्यवसाय या प्रतियोगिता मे भाग लेने से पहले सफलता की कल्पना कीजिए, सफलता के विचारों को अपनी चेतना का अग वना लीजिए, यहाँ तक कि वे आपके अचेतन मन मे घर कर जाएँ। जव आप अपने लक्ष्य की कल्पना में सर्वदा लीन रहने लगेंगे, तो आपके लिए लक्ष्य तक पहुँचना सहज हो जाएगा, इतना सहज कि आप स्वय हैरान रह जाएगे।

इस दुनिया के रग-मच पर ऐसे अगणित लोग प्रकट होते है, जो 'वी० ए० हुए, नौकर हुए पेंशन् मिली, फिर मर गए, की प्रसिद्ध पंक्ति को चरितार्थ करते हुए पैदा होते है, नाम मात्र की शिक्षा प्राप्त करते हैं, कोई छोटी-मोटी नौकरी या व्यापार कर लेते है, और जव मौत की घड़ी आ जाती है तो चुपचाप चल वसते हैं। ऐसे ही लोगो की दयनीय दशा पर खेद प्रकट

करते हुए कवि ने कहा है—'ये लोग अपने गीतों समेत गहरी नींद सो जाते है!" अर्थात वह जब तक जीते है, अपनी योग्यताओं का उपयोग नही करते, और मरते समय उन्हें साथ ही ले जाते है। दुनिया को न उनके आने की सूचना मिलती है, न जाने का समाचार। उनका जन्म लेना और मरना समान रूप से महत्वहीन घटनाएँ है।

इन लोगो का यह खेदजनक अत क्यों होता है? सम्भवतः इस लिए कि वे जीवन में जीने के उत्साह से प्रेरित नही होते। इनका जीवन-सिद्धांत प्राय: यह होता है कि 'चलो तुम उधर को, जिधर की हवा हो।' वे कठिनाइयों और विपत्तियों के सामने छाती तान कर खड़े नही होते। उन्हें अपनी रचनात्मक शक्ति और आविष्कार-क्षमता पर विश्वास नही होता इसलिए उनमे मौलिकता और नवीनता के प्रति स्वाभाविक प्रवृत्ति का अभाव रहता है। उनकी इस जड़ता के कारण एक आशावादी कवि ने 'जिन्दा लाशों से' उनकी उपमा दी है।

ये लोग विवशताग्रस्त, असहाय और निर्बल इसलिए नही हैं कि स्वयं स्रष्टा ने ही उ... क्त-सफूर्ति से विहीन रखा है, वल्कि असल कारण यह है कि व जीने की प्रबल उत्कंठा नहीं रखते। जीने की उ... के बिना जीवन व्यतीत करना मनु की प्रबुद्ध और स्वाभिमानी संतान को शोभा नही देता। इसलिए यह आपका मनुष्योचित कर्तव्य है कि आप जीने की गरमाहट को कभी मंद न होने दें।

इंग्लैंड के एक प्रसिद्ध प्रधानमंत्री मि० रैमजे मैकडानलेंड की जीवन सगिनी जब मृत्यु शय्या पर पड़ी थी, तब इसने अपने अंतिम क्षणों में पति को पास बुलाकर कहा कि आप मेरे मरने के बाद हमारे बच्चो के दिल मे जीवन के प्रति अभिरुचि और उससे आनन्दित होने की प्रबल इच्छा को जीवित रखे। इसके

लिए स्वयं आप को बुढ़ापे और अकेलेपन के बावजूद आनन्दो-उल्लास के साथ जीवन व्यतीत करना चाहिए। उस बुद्धि सम्पन्न महिमा को मालूम था कि वृद्धावस्था मे, विशेषकर जब जीवन-साथी भी छूट जाए, जीवन का उत्साह शिथिल हो जाता है। इसी लिए उसने वृद्ध पति से यह अनुरोध किया, ताकि उनकी संतान जीने की कला से अनभिज्ञ न रह जाए।

मार्शल फ़ोश् का कथन है कि उत्साह मनुष्य का सब से उपयोगी अस्त्र है। 'स्टार नॉर्डन् लिखता है "जब तक मनुष्य में जीवन की गरमाहट और जीने की प्रबल उत्सुकता मौजूद है, वह जवान है।" विलियमसन् कहते है "सफल लोग विद्या-बुद्धि में उन लोगों से श्रेष्ट नही होते, जिनके भाग्य मे केवल विफलता ही लिखी होती है। परन्तु पूर्वेक्त दल के लोगों मे जीवित रहने और सफल होने की अभिलाषा अपेक्षाकृत बहुत अधिक होती है वास्तविकता यह है कि भावना और उत्साह के बल पर समान्य योग्यता रखने वाले व्यक्ति भी तीक्षण बुद्धि वालो से अधिक सफल सिद्ध होते हैं। स्वयं हमारे देश में उर्दू कविता की यह पँक्तियाँ लोकोक्ति का स्थान प्राप्त कर गई है कि "जिन्दगी ज़िन्दादिली का नाम है, मुर्दा दिल क्या खाक जिया करते है!'

कुछ लोग मामूली कठिनाइयों से घबरा कर अपना काम छोड़ बैठते है, और किसी दूसरे काम की तलाश में निकल खड़े होते है। वे इस तबदीली का कारण यह बतलाते है कि पहला काम उनके स्वभाव और रुचि के अनुकूल नही था। परन्तु इस प्रकार की तबदीली यदि बार-बार की जाए, तो फिर किसी व्यवसाय या कलाकौशल में पूर्णता प्राप्त नही हो सकती। और पूर्णता के बिना सफलता की कल्पना करना भी कठिन है। फिर यह अस्थिरता और चँचल वृत्ति आत्मविश्वास की हानि करती है। ऐसे लोग जब भी किसी कार्य को प्रारम्भ करते हैं,

तो उनके मन मे यह शका बैठी रहती कि सम्भव है इस काम में भी सिद्धि न मिले। इस प्रकार वे किसी काम को पूरे विश्वास और सफलता की आशा के साथ शुरु नहीं कर पाते। परिणाम यह होता कि वे उम्र भर भटकते ही रहते है। इस-लिए यह परमावश्क है कि मनुष्य अपने जीवन-लक्ष्य को बड़ी सावधानी के साथ सोच-विचार कर युवावस्था मे ही निश्चित कर ले, और उसकी प्राप्ति के लिए तन मन से जुट जाए। अवश्य इसका यह अर्थ नही कि कोई व्यवसाए या सेवा क्षेत्र एक बार अपना लेने के बाद उस में परिवर्तन की गुंजाइश हो नहीं होनी चाहिए। यदि अनुभव से सिद्ध हो जाए कि कोई व्यवसाए विशेप प्रर्याप्त लाभ-दायक नही है, और उसमे उन्नति और सफलता भी कुछ अनिवार्य कारणों से असम्भव प्राय: है, तो उसका परित्याग कर कोई अन्य व्यापार आरम्भ करना बुद्धिमता के विरुध नही कहा जा सकता। परन्तु चेष्टा यही होनी चाहिए कि जीवन मे क्या करना है, इसका एक बार ही निश्चित रूप से निर्धारिण कर लिया जाए। कार्य-क्षेत्र के निरंतर परिवर्तन से मनुष्य की निर्णय-शक्ति का ह्रास होता है, और आत्मविश्वास को अकथनीय हानि पहुँचती है।

जव आप अपनी रुचि और ध्येय के अनुसार किसी एक कार्य विशेप को अपना कर उसमें तनमय हो जाएँगे, तो उस से एक वड़ा लाभ यह भी होगा कि आपको मानसिक उलझनों से छुटकारा मिल जाएगा, और आप अपनी सारी शक्ति और ध्यान को एक दिशा मे केन्द्रित कर उत्साहपूर्वक कार्य कर सकेंगे। इस अवस्था मे आपका मन भी आप के शारीरिक परिश्रम का साथ देगा। और परिणामत: आप शीघ्र ही सफ-लता के द्वार पर पहुँच जाएंगे।

वहुधा मनुष्य केवल इसलिए निराशाग्रस्त हो जाता है कि

वह किसी क्षणिक विफलता के कारण अपनी अच्छाइयों और योग्यताओं को भूल कर केवल कमजोरियों को ही देखने लगता है। इस प्रकार हीन भावना आत्मविश्वास को डॉवाडोल कर देती है। यदि आप इस रोग से आक्रात है, और सर्वदा अपनी क्रमजोरियों को ही स्मरण करते है, तो तत्काल इसका उपचार कीजिए। जो बाते आपके उद्देश्य से मेल नही खातीं, सर्वदा उन्ही की कल्पना में डूबे न रहिए, बल्कि उन बातो को ज्यादा अपने ध्यान में रखिए जो आपके पक्ष मे हैं, उनकी एक सूची बनाइए, उन्हें कठस्थ कर लीजिए, और फिर उन्ही के सम्बन्ध में अधिक सोचिए। उनका विश्वास कीजिए, उन्हे अधिक प्रखर प्रभावी बनाइए। उदाहरण के लिए यदि आप में कवि बनने की अपेक्षा निबंध-लेखक बनने की योग्यता अधिक है, तो आप अपने मस्तिष्क से कविता की सनक को तत्काल निकाल दीजिए और अपनी इस 'योग्यता' पर एक आँसू भी न बहाइए। इसकी बजाए आप अपना सारा ध्यान एक निबध लेखक बनने पर केन्द्रित कर दीजिए। इस प्रकार आप विफलता की आशंकाओ की बजाए सफलता की उज्ज्वल सम्भावनाओं को अपने समक्ष रख-कर सदैव आशान्वित रह सकेंगे।

उत्साहवर्द्धक और आशाप्रद विचार-धारा आध्यात्मिक सम्पन्नता की भूमिका ही नही, बल्कि भौतिक सफलता की आधरशिला भी है। आप अपने कल्पना जगत को आशा और उल्लास के फूलों से सजाएँ, तो व्यावहारिक रूप से भी आप सफल और समृद्ध जीवन बिताने के योग्य बन सकेंगे।

दुनिया में ऐसे लोगों की संख्या अपार है जो अति हीन अवस्था में पालित पोषित होने पर भी केवल अपने ऊँचे सपनो और आशाओ के बल पर बड़े से बड़े पद तक पहुंचने मे सफल हुए। आप भी हमेशा उन्नति का स्वप्न देखा करे। आप भी पूर्ण

विश्वास के साथ कहा करे कि आप का भविष्य भव्य और महान है। आप अपने भविष्य के सम्वन्ध में हमेशा अशान्वित रहें और स्थिति-चित्र के उज्ज्वल पक्ष को ही अधिक दृष्टिगत रखें। यदि आप इन वातो, का अभ्यास कर लें, तो फिर आप के लिए अपने लक्ष्य की प्राप्ति निश्चत और अनिवार्य हो जाएगी। फिर आप को दुनिया की कोई शक्ति सफलता महत्ता और प्रसिद्धि प्राप्त करने से वचित नही रख सकेगी।

और यदि किसी समय संयोगवश परिस्थितियाँ प्रतिकूल हो जाएँ, और आप असुखद अवस्था में जीवन व्यतीत करने पर वाध्य हो, तो उस समय आप अपने हृदय मंदिर में आशा-दीप को वुझने न दे, और विश्वास रखें, कि आपकी यह हीनता अथवा दुर्दशा सामयिक है। और वह दिन दूर नही, जब सब बाधाओं विपत्तियो के बादल छंट जाएँगे और आप सफलता के मार्ग पर पुनः अग्रसर होगे। यह दृष्टिकोण, यह मनोवृत्ति और यह विचार-धारा आप के जीवन का निर्माण करने में बड़ी सहायक सिद्ध होगी, और आपका भविष्य सचमुच बड़ा उज्ज्वल और वैभवशाली होगा।

विश्वास का पुनर्निर्माण

"मै समाप्त हो चुका हूँ। मेरा सर्वनाश हो चुका है। मैं पन्द्रह वर्षों से जीवन-संघर्ष में संलग्न हूँ। परन्तु अभी तक सफलता के दर्शन नहीं कर पाया। मेरा हर उपाय विफल होता है; मेरी हर योजना निष्फल रहती है। मेरा कोई हितैषी नही; कोई मित्र नहीं, कोई साथी नहीं। निर्दय काल ने मुझे कुचल कर रख दिया है। मेरे लिए जीवन का कोई सुख शेष नही रहा। मैं संसार का सर्वाधिक पीड़ित और आत्याचारित व्यक्ति हूँ। मैं अपना सब कुछ खो चुका हूँ।" यह सब कहकर वह सामने की कुर्सी पर लुढ़क सा गया। उसकी आँखों से अश्रु धारा बह निकली।

"सब कुछ ?" मैंने प्रश्न किया।

जी हाँ, सब कुछ उसने उत्तर दिया। "मेरी उम्र पैंतीस वर्ष है। परन्तु मैं बेरोजगार हूँ। मुझे कही काम नही मिलता। मेरे पास इतने पैसे भी नही है कि कोई छोटी-मोटी दूकान खोल कर बैठ जाऊँ। मैं अपने बच्चों के पालन-पोषण और शिक्षा का कोई प्रबन्ध नही कर सका। फिर मुझ सा आभागा और कौन होगा। अब मैं अपनी दशा सुधारने के लिए कुछ नही कर सकता।'

मैंने उससे सहानुभूति प्रकट की। उस समय उससे ज्यादा और कर भी क्या सकता था। उसने वास्तव मे बड़े कष्ट सहे थे। वह एक लम्बे समम से बेरोजगार था। कोई काम मिलता, तो चार दिन आराम से गुजरते। परन्तु बेरोजगारी उसे फिर

आ दवोचती थी । मुझे जब कभी उससे मिलने का सयोग हुआ। उसे यही रोना रोते पाया कि वह बेरोजगार है । वह घर से निकल कर किसी चायखाने मे जा वैठता । परन्तु जानकार लोग उसका दु ख वटाने की वजाए उल्टा बाल की खाल निकालते। इससे उसे और भी लज्जित होना पड़ता है। आखिर उसने घर से निकलना ही छोड़ दिया क्योंकि—

मुसीबत का इक-इक से अहवाल कहना,
मुसीवत पै है यह मुसीवत ज्यादा ।

इन सब कारणो से उस समय मैंने यही उचित समझा कि उसे लम्वे-चौडे उपदेश देकर और ज्यादा परेशान न करूँ । परन्तु कुछ दिनो के बाद मैंने उस से इस समस्या पर विस्तार के साथ वातचीत की । उसे वताया कि परिस्थितियों का सुधार असाध्य नही है । यदि वह निराशा और अविश्वास का परित्याग कर दे, तो अव भी अपनी विगडी वना सकता है । वह सुशिक्षित है, और उसका स्वास्थ्य अभी भी ईर्षा-योग्य है । कोई कारण नही कि उसे कही अच्छी नौकरी न मिले । मैंने कुछ ित्रों के नाम वताए, जो उसकी सहायता कर सकते थे । इस प्रकार दिलासा देकर जव मैंने अनुभव किया कि उसके मन का बोझ कुछ कम हो चला है, तो मैंने उसे समझाया कि वह 'समाप्त हो चुकने और सर्वस्व खो वैठने के विचारो को यही समाप्त कर दे, और उसके स्थान पर अपने मन व मस्तिष्क को आशा, साहस और उत्साह के विचारो से भर ले । अपने पर, अपने बाहुबल पर और ऐश्वरीय सहायता पर विश्वास करे । अधकारमय अतीत को सदा के लिए भूल जाए, और आज से नया जीवन आरम्भ करे।

मुझे वड़ी प्रसन्नता हुई, जब उसने मेरा धन्यवाद किया और वायदा किया कि वह नए सिर से जीवन को सार्थक

बनाने का प्रयास करेगा । और प्रायः तीन वर्ष बाद जब उसने मुझे बताया कि उसकी विपत्तियों का अंत हो चुका है, और अब वह सुख-शांति का जीवन व्यतीत कर रहा है, तो मेरी खुशी का कोई ठिकाना न रहा ।

इसी प्रकार की घटना का वर्णन अमरीका के प्रसिद्ध मनोविज्ञान- वेत्ता डा० पील ने अपनी एक पुस्तक में किया है। वह बतलाते है कि किस प्रकार एक बावन-वर्षीय निराशाग्रस्त वृद्ध व्यक्ति के मन मे आशा का अंकुर लगाया गया, जिस के बाद उसने फिर से जीना आरम्भ करके अपने भविष्य को उज्ज्वल बनाया । डा० पील के देशवासी सच में भाग्यवान है कि उन्हे शारीरिक रोगों के अलावा मानसिक व्याधियो के निराकरण की सुविधाएं भी प्राप्त है। हमारे देश मे भी मनोवैज्ञानिक चिकित्सा के महत्व का अनुभव किया जाना चाहिए। ऐसे लोगों की उपयुक्त सहायता की व्यवस्था होनी चाहिए, जो दीर्घ काल तक कठिनाइयो और विपत्तियों के प्रहार सहन करते-करते जीवन से निराश और विरक्त हो चुके है। अवश्य इस का अर्थ यह नही कि आर्थिक सहायता का कोई मूल्य ही नही है जो लोग सामान्य आर्थिक सहायता अपने पैरो पर खडे हो सकते है उन्हें यदि कही से थोड़ी सी सहायता भी उपलब्ध न हो तो निःसदेह बड़ी करुणात्मक बात है। परन्तु इस तथ्य को भी अस्वीकार नही किया जा सकता कि ऐसे लोगों में अधिकतर केवल प्रोत्साहन और उचित पथदर्शक से ही अपनी बिगड़ी बना सकते हैं। इस दुनिया में लाखों ही ऐसे लोग हैं, जो केवल हमारी सहानुभूति और संवेदना के ही अपेक्षी हैं, और जिन्हें आर्थिक सहायता के बिना भी संघर्ष करने पर उद्यत किया जा सकता है।

मुझे पिछले साल कालेज के एक विद्यार्थी का पत्र मिला वह

यक्ष्मा जैसा भयंकर रोग से ग्रस्थ था, और बम्बई के निकट किसी वडे अस्पताल मे चिकित्सा करा रहा था। उसने अपने पत्र मे लिखा, "मैं करीव एक साल से इस अस्पताल मे चिक-त्सावीन हुँ। मैं जीवन की ओर से प्राय: निराश हो चुका था। परन्तु आप की पुस्तक "जीना सिखो" ने मुझे नया जीवन प्रदान किया। अब मै अनुभव करता हूँ " कि मेरा रोग असाध्य नही है। अव मैं जीवन के प्रति निराश नही रहा, और क्रमश: स्वास्थ्य लाभ कर रहा हूँ।" इस नवयुवक की तरह हमारे देश के लाखो व्यक्तियो को केवल हमारी सहानुभूति की ही आव श्यकता है। उन्हें यदि वताया जा सके कि व्यर्थ की चिंताओ से कैसे मुक्ति लाभ की जा सकती है, तो वे पुन: अपने जीवन का निर्माण करने पर तत्पर हो सकते हैं। मैं न मनोवैज्ञानिक चिक-त्सक हूँ और न मंनोविज्ञान विशेषज्ञ, परन्तु व्यवहारिक जीवन के शिक्षालय से मैंने जो पाठ ग्रहण किया है, उसके आधार पर पूर्ण विश्वास के साथ यह कह सकता हूँ कि इस दुनिया मे अग-णित ऐसे लोग वसते है, जिन्हे सहानुभूति कुछ प्रोत्साहन, कुछ आशाप्रद शब्दो और प्रेम भरे वाक्यो की धन से भी अधिक आवश्यकता रहती है। इन उपायो से उनके घाव भर सकते हैं, उनके मन की कली फिर से खिल सकती है, और वे पुन: संघर्ष के लिए तैयार हो सकते है।

ऐसे लोगो की सव से वड़ी कठिनाई उनकी विश्वास हीनता है। वे समय की विपत्तियो का सामान करते-करते क्लात हो गए हैं, और अव नई कठिनाइयो को देखकर विचलित हो उठते है। यही लोग युवावस्था मे दृढ़ता और साहस की मूर्ति थे। परन्तु एक-दो वार की असफलता ने ही उन्हें साहसहीन वना दिया। वे अनुभव करने लगे कि सफलता उनके भाग्य मे ही नही है, इसलिए सघर्ष करना व्यर्थ है। अव उन्हें स्वयं पर दया

आती है, और वह अपनी दुर्दशा पर केवल आँसू ही बहाते है। अब यदि उन्हें किसी लाभप्रद व्यापार मे पूँजी लगाने को कहा जाए, अथवा साझेदारी का प्रस्ताव किया जाए, तो वह कानों को हाथ लगाते है ओर कहते है कि जब पिछले पन्द्रह-बीस वर्षो के प्रयत्नो का कोई फल नही मिला, तो अब इतने विलम्ब से जीवन के पुनर्निर्माण की चेष्टा मूर्खता नही, तो और क्या है। जब जवानी में ही सफलता नही मिली, तो अब इस 'बुढ़ापे' में क्या कर सकते है, और कैसे अपना जीवन बना सकते है।

इस अभिशाप से मुक्ति का एक मात्र उपाय है आत्मविश्वास का पूनर्निर्माण। उन्हें बताया जाए कि खोया हुआ विश्वास पुनः प्राप्त किया जा सकता है। और असफलता को सफलता मे परिवर्तित किया जा सकता है। आधुनिक मनोविज्ञान के विशेषज्ञों ने सर्वसम्पति से यह निर्णय दिया है कि यदि आप इस रोग से ग्रस्त है, अर्थात एक-आध बार की असफलता से ही इतने भयभीत हो गये हैं कि अब अपना जीवन बनाने का प्रयास तो दूर रहा, वर्तमान दशा के सुधार के लिए भी कुछ करने को तैयार नही; यदि आप अपने व्यवसाय को फिर से उन्नति की ओर ले जाने की कोशिश को अनावश्यक और अहितकारक समझते है; अपने सोए हुए भाग्य को जगाने के विचार मात्र से ही भयभीत हो उठते है, और स्वयं को 'समाप्त' 'भाग्यहीन' और 'सर्वहारा' समझते है, तो अकाल मृत्यु के मुंह मे जाने और अपने लिए खुद गढा खोदने की बजाए किसी मनोवैज्ञानिक चिकित्सक से तुरंत परामर्श गहण कीजिए। और उसकी सहायता से आत्म-विश्वास की पुनः प्राप्ति के बाद जीवन के पुनर्निर्माण में जुट जाइए।

इसे असम्भव न समझिए, इसे कठिन न जानिए। आप

खोया हुआ विश्वास पुनः प्राप्त कर सकते है, और अपने पर विश्वास करके अपनी क्षतिपूर्ति कर सकते हैं। आप जो कुछ गत दस, पन्द्रह या वीस वर्षो के संघर्ष से प्राप्त नहीं कर सके, उसे आगामी दो-चार वर्षों के प्रयास से ही प्राप्त कर सकते है। आपने आज से पन्द्रह-बीस वर्ष पूर्व जो स्वप्न देखा था, यदि वह आपके निरंतर प्रयत्नों से भी यथार्थ नही वन सका, तो निराश होने का कोई कारण नही है। आपके प्रयत्न विफल नही होंगे, आपने पन्द्रह-वीस वर्षो में जो अनुभव प्राप्त किया है, वह अकारथ नही जाएगा।

सफलता के मंदिर मे प्रवेश के लिए कोई समय नियत नही है, न उम्र की कोई कैद है। कुछ लोगो को युवावस्थ में ही सफलता मिल जाती है, तो कुछ को वृद्धावस्था मे यह सौभाग्य प्राप्त होता है। कुछ लोगो के प्रयत्न शीघ्र ही अपना प्रभाव दिखाते है, तो कुछ की वड़े विलम्व से। तो फिर निराश क्यों हो ? हो सकता है कि आपके साथी अपने लक्ष्य तक पहुँच चुके हैं। इनमे से कुछ ऐसे भी होंगे, जिन्होने यह यात्रा आपके वाद आरम्भ की थी। उन्हे सफल देख कर आपका पिछड़ेपन पर दुःखी होना स्वाभाविक है, परन्तु इसका यह अर्थ नही है कि आपकी वारी ही नही आएगी। यदि आप उन लोगों को देखते है, जो आप को पीछे छोड़ कर सफलता-शिखर पर पहुँच चुके है, तो तनिक उन लोगों को भी देखिए, जो आप से भी पीछे हैं, परन्तु इसके वावजूद पूरी तन्मयता और धैर्य के साथ कदम वढा रहे हैं। उन्हीं की तरह आप भी निर्भय हो कर यात्रा जारी रखिए, और आत्मविश्वास को किसी अवस्था में भी हाथ से जाने न दीजिए।

आत्मविश्वास नवयुवको के लिए मशाल का काम देता है, वृद्धो के लिए लाठी का। यह ऐसा धन है, जिसे कोई आप से

छीन नही सकता। इसका संग्रह आप के प्राणदान हृदय और ज्ञागवान मस्तिष्क में रहता है। इसका उपयोग करना छोड़ दिया जाए, तो इसकी स्थिति उस धन-कोष जैसी हो जाती है, जो भूमि मे दबा पड़ा हो, और जब तक उसे बाहर न निकाला जाए, उसका कुछ भी मूल्य नही होता। इस लिए साहस न हारिए ; अपने इस धन को बाहर निकालिए, और इससे काम लेना शुरू कर दीजिए।

यदि आप आत्मविश्वास की पुनर्स्थापना चाहते हैं, और अपनी दबी हुई शक्ति को पुनर्जीवित करना चाहते है, तो कठिनाइयों और विपत्तियों को भयंकर समझना छोड दीजिए, उनसे बिल्कुल प्रभावित न होइये। कठिनाइयों को हमेशा इस दृष्टि से देखना चाहिए कि उन्हे दूर करने का क्या उपाय हो सकता है। और फिर पूर्ण विश्वास के साथ उन्हे दूर करने में लग जाएं। उन्हें अपने से अधिक सबल समझने की भूल तो कभी न कीजिए।

कठियाइयों से निपटने का सही तरीका यह है उन पर काबू पाने का उपाय किया जाए, न कि राई का पहाड़ बना कर बंठ जाया जाए। यदि आप पहले से ही यह सोचे वैठे है, कि अमुक सस्था में नौकरी की कोशिश बेकार है, क्योंकि वहाँ का व्यवस्थापक भाई-भतीजा वाद के सिवा और किसी सिद्धात को नही मानता, या अमुक जगह आवेदन-पत्र देना फजूल है, क्योकि वहाँ का प्रधान संचालक स्वयं मूर्ख और मूर्खो का गुणग्राहक है, तो आप ही बताइए कि घर बैठे इस प्रकार के निर्णय कर लेने के बाद आप की बेरोजगारी की समस्या कैसे हल हो सकती है ? फिर आप को बेरोजगारी की शिकायत करने का क्या हक है ?

इस समस्या पर जरा गम्भीरता से विचार कीजिये, और

पता लगाइए कि कही आप की कठिनाइयाँ भी कल्पना की उपज मात्र तो नही हैं। यदि आप चिंतन और विश्लेषण के बाद उसी निष्कर्ष पर पहुँचे, जिसकी ओर ऊपर संकेत किया गया है, तो यह निष्कर्ष स्वयं मे आपके रोग का उपचार सिद्ध होगा। एक बार जब आपको विश्वास हो जाएगा कि आप की कठिनाइयाँ कल्पित हैं, तो आप स्वयंमेव उनसे भयभीत होना छोड़ देंगे।

एक पाँच वर्षीय बच्ची प्राय: नित्य ही रात के समय स्वप्न में एक भेडिए को अपनी ओर आता देख कर डर से जाग पड़ती थी, और रोना-चिल्लाना शुरू कर देती थी। माता-पिता ने उसे बहुत समझाया कि वह सपने के भेड़िए को वास्तविक न समझे। परन्तु अबोध बालिका पर उपदेश का प्रभाव न पड़ा। आखिर वे उसे एक मनोवैज्ञानिक चिकित्सक के पास ले गये। चिकित्सक ने सब विवरण सुनकर बच्ची से भेड़िए की सूरत शक्ल और दूसरी विशेषताओं के सम्बन्ध मे कुछ प्रश्न किए और उसके बाद कहा "अच्छा, तो यह वही भेड़िया है, जो मेरे पास भी आया करता था। शुरू-शुरू में मैं भी इसे देखकर बहुत डरा करता था। परन्तु मुझे शीघ्र ही पता चल गया कि यह भेड़िया दरअसल घर से निकाला हुआ एक गरीब कुत्ता है। अब यह बेचारा बच्चो से खेलने के लिए सपने मे उनके पास आ जाता है। इसके बाद जब भी मेरे पास आया, मैंने उसे पुचकारा, और प्यार किया। तब से वह मेरा दोस्त बन गया। आइन्दा जब वह तुम्हारे पास आए, तो तुम भी उसे प्यार करना। फिर देखना वह कैसे दुम हिला-हिला कर तुम्हारे पांव चाटता है।" डाक्टर की इस बात से बच्ची खुश हो कर हँसने लगी।

उस रात मे जब वह अपने छोटे से बिछौने पर सोई, तो उसकी माँ करीब ही एक कुर्सी बिछाकर बैठ गई ताकि यदि

बच्चा सपना देख कर रोने लगे, तो उसे सांत्वना दे सके। परन्तु उस रात में बच्ची सुख की नीद सोती रही। केवल एक बार कुछ क्षणों के लिए उसके चेहरे पर घबराहट के लक्षण प्रकट हुए। परन्तु शीघ्र ही उसके होंठों पर मुस्कान खेलने लगी इससे जाहिर था कि भेड़िया उसके सपने में आया तो सही, परन्तु बच्ची ने उसके साथ दोस्ती कर ली।

आपभी विचार कीजिए कि आपकी 'कठिनाइयों के भेड़िये' भी कही सपने के भेडिए तो नही है। यदि वे काल्पनिक ही हैं, तो भी आप उनसे दोस्ती कर लीजिए; उनसे डरना छोड़ दीजिए। वे न तो भयंकर हैं, और न आप को हानि पहुँचाना चाहते है। बहुत सी कठिनाइयाँ तो आपकी दोस्त बनकर बड़ी सहायक सिद्ध हो सकती हैं।

उदाहरण के लिए, जिन व्यक्तियों को आप किसी युक्ति संगत तर्क के बिना अपना शत्रु समझ रहे हैं, उसमे से कोई आप के प्रति शत्रुता की कोई भावना नही रखता। आपभी अपने मन को उनके प्रति विरोधात्मक विचारों से साफ कीजिए। फिर आप यह देख कर हैरान रह जाएँगे कि आपके अधिकतर काल्पनिक शत्रु वास्तव मे आपका अहित चाहने वाले नही है। उन के सम्बन्ध में जितनी भी बाते आप के कान मे भरी गई हैं, वे सब मनघड़त कहानियाँ और झूठ का पुलन्दा है। आपका एक कल्पित शत्रु स्वयं आपका 'जीवन' है, जिसे देख-देख कर आप भयभीत हो रहे हैं, और अकारण ही चीखते-चिल्लाते है। अपने इस जीवन को अपना मित्र समझिए, उसके उज्ज्वल पक्ष पर अधिक दृष्टिपात कीजिए। इस दुनिया में सुखों की अपार राशि विद्यमान है। इससे आप लाभावित हो सकते है, बशर्ते कि आप अपनी काल्पनिक कठिनाइयो से भयभीत होना छोड़ दे, और जीवन के साथ मित्रता स्थापित करके राई का पहाड़ बनाने

की आदत का परित्याग कर दें। फिर 'कठिनाइयों के भेड़िए' आप के दोस्त वन सकते है, और उस वच्ची की तरह आपके होठो पर भी मुस्कान खेल सकती है।

आत्मविश्वास का एक शत्रु आत्मग्लानि और अपने पर दया का भाव है। जव आप देखते हैं कि आप अपनी आशाओं के अनुसार उन्नति नही कर सके, या वर्षो की चेष्टा के वाद भी दरिद्रता और अभाव के वन्धनों से मुक्त नही हो सके, तो आप अपने को पीड़ित, अत्याचारित और दुर्दशा-ग्रस्त समझने लगते हैं, और एकांत मे अपनी दयनीय अवस्था पर आँसू वहाते है, यह 'आत्मकरुणा आपके लिए घातक है, क्योकि यह आपकी क्रियाशक्ति का अत कर देती है, और आप को इस योग्य नही रहने देती कि आप अपनी कठिनाइयो पर कावू पाने की कोई सफल योजना वना सके। यह एक प्रकट तथ्य है कि जो व्यक्ति सोचने समझने और कदम उठाने की शक्ति खो वैठता है, वह अपनी दशा कभी नही सुधार सकता। इस लिए आप अपने पर दया करने की आदत न डालिए। जो भी कठिनाइयाँ हों, धैर्य और साहस के साथ उनका मुकावला कीजिए। और आखिर दम तक लड़ने और विजयी होने का संकल्प वनाए रखिए।

आयरलैंड के प्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता डी वलेरा के सम्वंध में वतलाया जाता है कि जव उसे स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान में वंदी वनाकर कारागार मे ले जाया गया, तो उसने दरवाजे पर क्षण भर के लिए रुक कर अपनी पतलून की जेव से पाइप निकाला और उसे दीवार पर दे मारा। इस पर कारागार के अधिकारी ने कहा कि इसकी क्या जरूरत थी। आपके धुम्रपान पर प्रतिवंध लगाने का तो हमे ख्याल तक नही है। डी वलेरा ने उत्तर दिया कि आप लोग यह जानकर कि मैं वहुत ज्यादा

तम्बाकू पीता हूँ, मेरी इस कमजोरी से फायदा उठा सकते थे। इसलिए मै आपको इसका मौका ही नहीं देना चाहता।

स्वर्गीय मौलाना आजाद के सम्बन्ध मे भी एक ऐसी ही कथा है कि १९४२ में जब आपको दूसरे राष्ट्रीय नेताओं के साथ बंदी बनाकर अहमदनगर के किले में रखा गया, तो आपने अधिकारियो के कहने पर अपनी अवश्कताओं की सूची मे बहुत सी किताबो के नाम लिख दिए, जो आप अपने कलकत्ते के मकान से मँगवाना चाहते थे। परन्तु इसके बाद आपका ख्याल आया कि किताबों के विषय मे आपकी कमजोरी से विदेशी शासक अनुचित लाभ भी उठा सकते है, और किसी भी समय किताबों की सपलाई बन्द करके आपको परेशान कर सकते है। यह सोचकर आपने अपनी सूची से सब किताबो के नाम काट दिए। इस प्रकार आपने अपने आत्मविश्वास और आत्मसम्मान दोनों की रक्षा की है।

आत्मविश्वास को बनाए रखने का यही तरीका है कि अपनी कमजोरियों पर वीरतापूर्वक काबू पाया जाए, और अपने मन व मस्तिष्क को निर्बलता, पतन और पराजय के विचारो से दूर रखा जाए। विरोधात्मक विचारो के होते आप कोई भी योजना तैयार नही कर सकते। और यदि कोई कार्यक्रम बना भी लें, तो उसे क्रियांवित नही कर सकते। इसलिए यदि आप वास्तव में सफलता चाहते है, तो सबसे पहले ऐसे सब विचारों का अंत कीजिए, जो आपको अपनी ही दृष्टि मे तुच्छ और तिरस्कृत बनाते है। ऐसा करने के लिए आपठोस और क्रियात्मक विचार का सहारा लीजिए। अर्थात जब असफलता या पराजय के विचार सिर उठाएँ, तो आप तत्काल उनपर जवाबी आक्रमण करें, और मै "मैं कर सकता हूँ," "मैं सफल होकर रहूंगा" "सफलता मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है आदि वाक्यो को बार-बार दुहरा कर

उनके स्वरूप को अपने मानस पटल पर अंकित कर दीजिए। इन वाक्यो को अपना स्थायी मित्र बनाइए, इन से याराना गाँठिए। फिर देखिए, आपकी योजनाए किस तरह सिरे चढ़ती है, और आप कितनी सहजता से सफलता प्राप्त करते है।

अपने मन मे अपना एक ऐसा चित्र बनाइए, जिसमें आप को सफल और सम्मानित दिखाया गया हो। यदि आप इस चित्र को सदैव अपनी कल्पना मे रखे और उसे किसी हालत में भी अपनी आंतरिक दृष्टि से ओझल न होने दे, तो फिर स्वयं आपकी कल्पना-शक्ति उसे और स्पष्ट और प्रखर बना देगी। मानवी कल्पना-शक्ति की यह एक विशेषता है कि जिस प्रकार का चित्र उसके द्वारा निर्मित होता है, बाह्य-शक्तियाँ उसे यथार्थ रूप देने के लिए क्रियशील हो जाती है। इस लिए प्रकट परि-स्थितियाँ चाहे कितनी ही विकट और प्रतिकूल क्यों न हों, आप अपने 'आदर्श चित्र' को सदैव अपने सामने रखे। भारत के एक बहुत बड़े साप्ताहिक पत्र के सम्पादक ने मुझे यह दिलचस्प बात सुनाई कि उन्होने अपने पत्र की प्रकाशन सख्या एक लाख से भी ऊपर ले जाने मे जो आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त की है, उसका रहस्य 'एक लाख' का 'कल्पना-चित्र' है। उन्होंने पहले ही दिन से, अर्थात जिस दिन अपना पत्र आरम्भ किया, अपनी प्रकाशन-संख्या एक लाख मानी। दस वर्षो तक वह इस कल्पनिक संख्या को यथार्थ मानते रहे,यहाँ तक कि आज वह सचमुच यर्थाथ हा है।

आप भी अपने को सदैव उस स्थिति मे देख, जिसमें होने की प्रबल इच्छा आपके मन मे है। इस कल्पना-चित्र को आप कभी मिटने न दे, और उसे यथार्थ बनाने का प्रयास निरतंर जारा रखे। जब आप सफलता के चित्र को—अपने आदर्श-चित्र को—सदैव अपने सामने रखगे, तो आपकी सफलता बिल्कुल निश्चित हो जाएगी।

निर्णय-शक्ति

ब्रिटेन के प्रसिद्ध पत्र कार मि० व्युर्ले वैक्स्टर अपने साप्ता· हिक पत्र में अमरीकन राजनीतिज्ञ हैरल्ड् स्टेसन के साथ अपनी एक भेट का उल्लेख करते हुए लिखते है कि तीन वर्प पूर्व वह जलपोत 'कुइन् मेरी' मे यात्रा कर रहे थे कि रात के खाने पर उन की मुलाकात एक अमरीकन युवक से हुई। वह अमरीका और ब्रिटेन के सम्बन्धों पर उससे विचार विनिमय करने लगे। मि० वैक्स्टर ने यह जानने के लिए कि द्वितीय महायुद्ध मे अमरीका को सहायता के लिए उसके वहुत कृतज्ञ है, कहा कि ब्रिटेन के लोग अमरीका के तत्कालीन राष्ट्रपति मि० रूजवल्ट को वहुत सम्मान की दृष्टि से देखते है। क्योकि उन्होने मित्र राष्ट्रो को समयक सहायता प्रदान करके विनाश से वचा लिया। परन्तु उस अमरीकन युवक ने इस श्रद्धाजली पर प्रसन्नता प्रकट करने की बजाए विरिक्त-भाव से कहा, "मगर मैं मि० रूजवेल्ट को विलम्ब का दोपी मानता हूँ।"

इस पर मि० वैक्स्टर ने तनिक सावधानी के साथ प्रश्न किया, "तो आपके विचार में सहायता देने का उचित समय कौसा था ?

"म्यूनिख का समय! (अर्थात जव ब्रिटेन के प्रधानमत्री मि० चेम्वरलैन हिटलर से मिलने म्यूनिख गए और शाति के नाम पर चकोस्लोवाकिया का वलिदान कर आए)।

"अगर मि० रूज़वेल्ट उसी समय भूमध्य सागर में एक बेड़ा भेजकर घोषणा कर देते कि अमरीका ब्रिटेन और फ्रांस की सहायता करेगा, तो हिटलर के होश ठिकाने आ जाते, और वह पोलेंड पर आक्रमण करने से पहले सौ बार सोचता। शायद युद्ध न छिड़ता" मि० वैक्स्टर लिखते है कि मैं उस अमरीकन युवक की बुद्धिमता से बहुत प्रभावित हुआ। इसमें संदेह नहीं कि यदि मि० स्टेसन् के मतानुसार अमरीका म्यूनिख के समय ही यूरोप की सहायता करने की घोषणा कर देता, तो सम्भवत: हिटलर को विश्व-शांति नष्ट करने का साहस न होता। इस दृष्टि से अमरीका का समयानुकूल निर्णय न कर सकना द्वितीय महायुद्ध का एक बड़ा कारण बना।

निर्णय करने में विलम्ब जहाँ सामुहिक रूप से मानवता के लिए हानिकर सिद्ध होता है, वहाँ व्यक्तिगत रूप से भी घातक हो सकता है। दुनिया मे बहुत से लोग अपनी योग्यता का प्रदर्शन करने और अपने प्रयत्नों का पुरस्कार पाने मे केवल इसलिए असफल रह जाते है कि वह दुविधा और आलस्य के रोगी होते है। ऐसा बुद्धिमता और योग्य युवक उन्नति के शिखर पर कैसे पहुँच सकता है, जो किसी विश्वविद्यालय से उत्तीर्ण होने के बाद एक दीर्घकाल तक यही निर्णय नही कर पाया कि उसका जीवनलक्ष्य क्या होना चाहिए, और उसकी प्राप्ति के लिए उसे किस जीवन-क्षेत्र को अपना संघर्ष स्थल बनाना चाहिए। इस दोप का दायित्व स्वाभाविक भीरूता पर डाला जाए अथवा हमारी शिक्षा-प्रणाली पर, परन्तु यह है तथ्य कि हमारे देश के अधिकतर नवयुवक जीवन क्षेत्र में प्रवेश करते समय निर्णय शक्ति से काम नही लेते। जब वे शिक्षालयों से उत्तीर्ण होते है, तो उनका सर्वप्रथम लक्ष्य किसी नौकरी तक सीमित होता है। मिलने वाली नौकरी उन्नति का साधन बन

सकती है या नही ? उस नौकरी से उनकी स्वाभाविक रुचि है या नहीं ? इन प्रश्नों पर वे विचार करने का कष्ट नहीं करते, न उसके माता-पिता ही इस दिशा में उनका मार्गदर्शन करते है। अवश्य इसमें हमारे अधिकतर लोगों की आर्थिक विवशता का भी बहुत हाथ है, और ब्रिटिशकालीन परम्पराओं का भी परन्तु इस विवशता और इन परम्पराओ का इलाज भी यही है कि हजारों युवक निर्दिष्ट दिशा मे सोचना आरम्भ करे। इस समय परिस्थिति क्या है ? एक साइंस ग्रेजुएट अखबार में अनुवादक की आवश्यकता का विज्ञापन पढ़ता है, और आवेदन पत्र भेज देता है। वह एक क्षण के लिए भी यह नहीं सोचता कि अनुवाद का कार्यक्षेत्र उसकी उन्नति का सोपान बन सकेगा या नही। वह उस परिश्रम और आर्थिक व्यय को भी भूल जाता है, जो उसने विज्ञान की शिक्षा ग्रहण करने के लिए वहन किया

अवश्य इस परिस्थिति का एक कारण हमारी वर्तमान सामाजिक व्यवस्था और उसके बने रहने मे सत्ताधिकारीयों का विशेष हित भी है। इस व्यवस्वथा के रहते बेरोजगारी का पूर्ण उन्मूलन असम्भव नही, तो कठिन अवश्य है। परन्तु इसमे भी सदेह नही कि व्यवस्था परिवर्तन के लिए हमारे युवको में आत्मविश्वास और निर्णय की शक्ति होनी चाहिए। केवल योग्यता ही प्रर्याप्त नही है, उससे काम लेने का साहस भी होना चाहिए। यदि हमारे युवक अपने पर विश्वास करते हुए अपने भविष्य को योजना तैयार करे, और फिर अपने निर्णय के अनुसार जीवन-सग्राम मे भाग ले, तो उन्हे कई प्रकार की कठिनाइयों का सामना तो अवश्य होगा, परन्तु वे अतत: सफल भी जरूर होगे। भारत जैसे देश में, जहाँ कोरे ग्रेजुएटो की अपेक्षा वैज्ञानिको, डाक्टरो, इजीनियरो और विभिन्न क्षेत्रो के विशेषज्ञो की अधिक आवश्यकता है, कॉलिज की साधारण शिक्षा पर

पैसा समय और श्रम का अपव्यय क्यों सहन किया जाता है, यह समझ से बाहर है। यदि अधिकाधिक भारतीय नवयुवक हस्त-कौशल और उद्योग में प्रवृत्त हों, तो कोई कारण नही कि देश में सब लोगों के लिए काम के पर्याप्त अस्तित्व मे न आएं।

जो लोग समय पर ठीक निर्णय करने के महत्व से अनभिज्ञ होते हैं, वे महत्ता के अधिकारी कभी नही बनते। दुनिया के कितने ही सुप्रसिद्ध वैज्ञानिकों, आविष्कारों और विद्वानों को अपने कार्य-क्षेत्र का चुनाव इसी प्रकार की प्रतिकूल परिस्थितियों में करना पडता था, जैसी कि आज हमारे युवक समुदाए के सामने है। परन्तु मानवता के ये महान उपकार कठिनाइयों को देखकर भयभीत नहीं होते थे। वे बडे से बड़ा मूल्य चुका कर भी अपनी योग्यता का परिचय देने पर दृढ संकल्प रहे। और उन्हे विश्वास हो गया कि एक विशेष कार्य-क्षेत्र में उन्नति और प्रसिद्धि प्राप्त करने के अलावा मनुष्य मात्र के हितकारक भी बन सकते हैं, तो उन्होंने अपनी सारी शक्ति और सारा ध्यान उसी क्षेत्र में अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने मे लगा दिया।

महान विचारक कैसे अस्तित्व मे आते हैं? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए एक विद्वान लिखता है, "उन्हे चुनौती दीजिए, उनके आगे कठिन और विकट समस्याएँ रखिए", परन्तु इस चुनौती को केवल वही लोग स्वीकार कर सकते है, जो साहसी हों, और अपने वास्तविक महत्व से परिचित होने के अलावा अपनी योग्यता को प्रकट करने के लिए हर मुसीबत झलने को तैयार हो।

मनुष्य इस धरती को स्वर्ग कैसे बना सकता है? रोग, महामारी, अभाव और दरिद्रता से कैसे मुक्ति-लाभ कर सकता है? उस पवित्र कर्तव्य को कैसे निभा सकता है, जो प्रबुद्ध जीव होने के नाते उसको सौप दिया गया है? यह चुनौती हम सब के

लिए है। और हम सबका कर्तव्य है कि मानवता के गौरव और उत्कर्ष के लिए इस चुनौती को स्वीकर करे।

यदि आप ऐसे लोगों के व्यक्तित्व का विश्लेषण करे, जिन्हें अपनी क्रियाशक्ति पर विश्वास नही है, तो इसी निष्कर्ष पर पहुँचेगे कि उन्होंने अभी अपने ज्ञानात्मक जीवन का प्रारम्भ ही नहीं किया। वे आजीवन दुविधा और संकोच मे पडे रहते हैं। उनके सामने जब कोई कठिन समस्या आती है, तो वे पलायन मार्ग ढूँढने लगते है। वे स्वयं सोच विचार नही करते, वल्कि अबोध बालकों की तरह दूसरों के मत और परामर्श के अपेक्षी रहते है। और यदि स्वयं कोई निश्चय कर भी लेते है, तो उसे बराबर संदेह की दृष्टि से देखते है, यहाँ तक कि मुसीवतों का पहाड सिर पर आ गिरता है। उस समय उनकी दशा दर्शनीय होती है। उन्हें न तो अपनी इस योग्यता पर विश्वास होता है कि वे इन मुसीबतो का मुकावला कर सकेंगे, और न वे पहले से यह सोच रखते है कि समय पर मुसीबतो का सामना कैसे करेंगे। परिणाम यह होता है कि वे मुश्किल को देखते ही हथियार डाल देते है। इस दल के लोग अपने बचाव के लिए हाथ-पाँव मारते भी है, तो सफल नही होते क्योंकि अव्यवस्थित और दिशाविहीन प्रयत्न प्राय. निष्फल भी होते है।

मैं एक सुशिक्षित युवक को मानता हूँ, जिसका जीवन विभिन्न क्षेत्रों में असफलताओ की एक श्रृंखला है। वह सुवोध और साहसी है, परिश्रमी और महत्वकाक्षी भी है। वह कई वर्षों से वडी दृढता के साथ समय के उलट-फेर का मुकावला कर रहा है। परन्तु जीवन मे सफलता उसे आज तक नही मिली। कारण, वह सदैव दुविधाग्रस्त रहा। उसने अपने वयस्क जीवन का प्रारम्भ करने से पहले अपने लिए कोई स्पष्ट और यत्नसाध्य कार्यक्रम निर्धारित नही किया।

शुरू मे उसने एक अर्ध सरकारी विभाग में नौकरी की। उसका विचार था कि इस विभाग से सम्बद्ध रखकर वह अपने जीवन-लक्ष्य को प्राप्त कर सकेगा। परन्तु कुछ वष के बाद उसने यह विचार बदल दिया और एक दूसरे क्षेत्र मे नौकर हो गया। उसके वाद उसने लगभग एक दर्जन विभिन्न प्रकार की नौकरियाँ की। अवश्य हर बार अपना कार्य रूप वदलते समय उसके सामने अपना भविष्य ही होता था। परन्तु जो व्यक्ति दस वर्षो मे भी यह निश्चय न कर सके कि उसकी प्रवृति किस ओर है, अर्थात वह किस मार्ग से चलकर अपने लक्ष्य तक पहुँच सकता है, वह जीवन मे सफल कैसे हो सकता है।

यदि हमें अपरिमित समय तक जीने की सुविधा प्राप्त होती तो यह अनिश्चितता सम्भवत: इतनी हानिकर न होती। परन्तु मुश्किल यह है कि हमें एक सीमित समय तक ही जीने का अवसर प्राप्त है। और इस अल्प अवधि में हमारे प्रयत्न तभी सफल हो सकते हैं, जव हम एक-एक क्षण को मूल्यवान जाने, और समय के उपयोग में उदारता दिखलाने की मूर्खता न करे वार-वार अपना कार्य-क्षेत्र वदलने वाला व्यक्ति किसी भी क्षेत्र में कुशल कैसे हो सकता है और कार्य कुशलता के बिना सफलता कैसे प्राप्त कर सकता है ? यही कारण है कि स्थान-स्थान भटकने वाला व्यक्ति अपने लक्ष्य तक मुश्किल ही से पहुँच पाता है। अपने अल्प जीवन में हम मनोवांछित सफलता तभी प्राप्त कर सकते हैं, जव हम अल्पावस्था में ही अपने जीवन पथ का निश्चय करके दृढ़ता पूर्वक उस पर चलते रहें।

मैंने कार्य-क्षेत्र, व्यापार या नौकरी में वार-बार के परिवर्तन का जो विरोध किया है, उससे मेरा आशय यह नहीं कि एक वार जो मार्ग अपना लिया जाए, वह गलत या उन्नति में वाधक सिद्ध होने पर भी वदला न जाए। मेरा निवेदन केवल इतना है

कि अकारण हो अथवा भावावेश में आकर एक काम का परित्याग कर दूसरे को अपनाने में कोई विशेष लाभ नही हो सकता। यदि आप किसी विभाग या कार्यालय में कुछ वर्षो तक मेहनत और ईमानदारी से काम करने के वाद यह अनुभव करें कि वहाँ आप को उन्नति के पर्याप्त अवसर नही है, तो उस काम को छोड़ देना ही श्रेयस्कर है। परन्तु ऐसा निर्णय सामयिक अथवा भावनात्मक मात्र नही होना चाहिए, वल्कि सब तथ्यों पर अच्छी तरह विचार करने के वाद किया जाना चाहिए ताकि आप नए क्षेत्र मे पूरे विश्वास के साथ पदार्पण करे, और दृढ़ कसंल्प हो कर उसमें निपुणता प्राप्त करने का प्रयास करें यह न हो, कि जब कभी आपको किसी नए स्थान अथवा पद पर दस बीस रुपया ज्यादा की पेशकश कर दी जाए, आप अपनी प्रवृति या रुची आदि बातों को भूलकर तुरन्त तवादले के लिए तैयार हो जाएँ।

'नित्य जीवन का मनोविज्ञान' नामक पुस्तक का रचयिता अर्न्स्ट डचेज इस समस्या का प्रतिपादन करते हुए लिखता है कि जो व्यक्ति निर्णय-शक्ति नही रखता, उसके सामने कोई बड़ी समस्या आते ही वह व्यग्र हो उठता है, और वह व्यग्रता उसकी रही सही निर्णय शक्ति को भी समाप्त कर देती है। यही लेखक आगे चलकर लिखता है कि हम अपने जीवन के सम्वन्ध में कोई महत्वपूर्ण निर्णय करते समय उन वाह्य तथ्यों और घटनाओ को तो दृष्टिगत रखते हैं, जो हमारे पक्ष या विपक्ष में होती है, परन्तु हम अपनी आंतरिक मानसिक परिस्थितियों अथवा मनोभावो की वहुधा उपेक्षा करते हैं। उदाहरण के लिए हम नया जीवन आरम्भ करने के निश्चय से इस लिए बचना चाहते हैं कि कही हमारी दशा पहले से भी हीनतर न हो जाए कहीं नया वातावरण वर्तमान वातावरण से भी ज्यादा कष्ट

कर और हानिप्रद सिद्ध न हो। प्रकट है कि यह 'संदेह भाव' वास्तविकताओ पर आधारित नही होते। इसलिए नया मार्ग अपनाने का निश्चय करते समय हमारे सामने यह सिद्धांत होना चाहिए कि हमें नए मार्ग के उचित होने का पूर्ण विश्वास है या नही। तात्पर्य यह है कि हम जो भी निर्णय करें, पूरे सोच विचार, सावधानी और विश्वास के साथ करे, और एक बार दृढ निश्चय कर लेने के बाद दुविधा, संदेह और शंका को अपने पास फटकने न दे। नए संघर्ष सफल होने का केवल यही एक उपाय है।

यदि मैंने मित्रो के परामर्श के विरुद्ध केवल अपने विवेक के अनुसार कोई निर्णय किया, और दुर्भाग्यवश वह निर्णय मेरे लिए हानिकारक सिद्ध हुआ, तो मैं किसी को मुँह दिखाने योग्य नही रह जाऊँगा—यह भय, मित्रो द्वारा उपहासित और समाज द्वारा तिरस्कृत होने का भय सफलता का शत्रु ही नही, सुख, शांति और मन की स्थिरता के लिए भी घातक है सामाजिक मर्यादाओं और परम्पराओका सम्मान तथा मित्र-मडली के सामान्य मत का आदर मानव का कर्तव्य है। परन्तु जहाँ तक व्यक्तिगत उन्नति के लिए संघप करने अथवा अपने किसी क्षेत्र विशेप का चुनाव करने का प्रश्न है, इसमें स्वयं अपने सिवा किसी और के मत का भावनाओं को अत्याधिक महत्व नही देना चाहिए। अवश्य अपने जीवन पथ का निर्माण करते समय आप मित्रो, सम्बन्धियों से परामर्श कर सकते है, और सम्बन्धित पुस्तको आदि से भी लाभ उठा सकते है, परन्तु अंतिम निर्णय स्वयं आपको ही करना चाहिए। यह बात पहले कही जा चुकी है कि जो कुछ भी आप है, अथवा कर सकते हैं, उसका पूर्ण ज्ञान केवल आपको ही हो सकता है। मित्रगण अथवा साधारण समाज आपके व्यक्तित्व और

योग्यता से पूर्णतः परिचित नही हो सकते। वे केवल आपके किसी एक पक्ष विशेष को ही देख पाते है। आपकी वास्तविकता केवल आप पर ही प्रकट हो सकती है। इस लिए आप स्वयं निर्णय करने में केवल इस कारण कभी सकोच न कीजिए कि मित्रगण क्या कहेगे, अथवा इस निर्णय पर साधारण समाज की क्या प्रतिक्रिया होगी। यदि आपने अपनो या परायो की टिप्पणी के डर से निर्णय करने मे आनाकानी की, तो आपकी प्रगति का मार्ग सदैव अवरुद्ध रहेगा।

आखिर आप भूल-चूक से इतने भयभीत क्यो है? भूल-चूक किस से नही होती, और कौन व्यक्ति है, जो ईमानदारी के साथ यह दावा कर सके कि उसका कोई निर्णय कभी गलत सिद्ध नही हुआ? फिर आप गलती के डर से अपनी नीद क्यों हराम कर रहे है? इसके अलावा क्या आप इस बात को अनुभव नही करते कि 'दुविधा और अनिश्चितता, त्रुटिपूर्ण निर्णय से भी ज्यादा अनिष्ठकर है, और अनावश्यक सकोच जीवन को असह्य बना देता है? फैसला न कर पाने अथवा बार-बार फैसला बदलने से मस्तिष्क पर दबाव पड़ता है, वह थक जाता है। इससे उसका हर नया फैसला पहले से भी ज्यादा गलत और खतरनाक हो जाता है, यहाँ तक कि ऐसी स्थिति आजाती है कि फैसला करने का सामर्थ्य ही शेष नही रह जाता। इसी लिए प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक मि० बासल कोलिस कहते हैं कि जीवन के सुखों का लाभ उठाना है, तो निर्णयशक्ति से समुचित काम लीजिए। कठिन समस्याओ मे भी निर्णय करने से जी न चुराइए और निर्णय इतनी सावधानी के साथ कीजिए कि उसमे परिवर्तन की आवश्यकता ही न पड़े। यदि प्रयोग से निर्णय गलत भी सिद्ध हो, तो परवाह न कीजिए। अगली बार उससे लाभ उठाइए, और अधिक सुस्थित निर्णय कीजिए।

भारत के एक प्रसिद्ध न्यायाधीश का कथन है कि मैं बहुत सोच-समझकर निर्णय देता हूँ। परन्तु एक बार निर्णयोच्चारण के बाद फिर यह सोचने नही बैठ जाता कि मेरा निर्णय सही था या गलत। यदि हम यही सोचते रहे, तो जीना मुश्किल हो जाए।

आप कह सकते हैं कि जहाँ तक निर्णय शक्ति से काम लेने। समयानुकूल और उचित निर्णय करने तथा आलस्य और संकोच को त्यागने का सम्बन्ध है, आप मुझसे सहमत हैं, और आइन्दा इन नियमो का पालन करने की चेष्टा करेंगे। परन्तु ठीक समय पर निर्णय करने या न करने का आत्मविश्वास से क्या सम्बन्ध है? इस प्रश्न का संतोषजनक उत्तर मैं दे चुका हूँ। यदि आप बिना सोचे-समझे निर्णय करने के अभ्यस्त हैं, यदि आप अपने फैसलों को बार-बार बदलना बुरा नही समझते, और यदि आप मित्रो के उलाहनों के डर से निर्णय करने मे सकोच करते हैं, तो यह आदत आपको अपनी योग्यता पर विश्वास करने की स्थिति में नही रहने देगी। और जब आप फैसला करने की शक्ति ही खो बैठेगे, तो आपको विश्वास हो जायगा कि आप किसी भी विषय मे अपना मार्ग निर्धारित करने के योग्य नही है। और जब आप अपना मार्ग तक निश्चित नही करेंगे, तो उस पर चलने की क्षमता आप मे कहाँ से आएगी? आप एक-एक पग पर दूसरो का अवलम्बन लेना चाहेंगे। इस प्रकार परतंत्र होकर आप कहाँ तक जी सकेंगे, यह कहने की आवश्यकता नही। इसलिए यह कहना अनुचित नही है कि जो लोग अपनी योग्यता और प्रतिभा का यथोचित पुरस्कार प्राप्त करना चाहते है, उन्हें समयक और सही निर्णय करने का अभ्यास करना चाहिए, ताकि वे आत्म-विश्वासी बन सकें, और जीवन-संघर्ष में पुरुषार्थ कर सकें।

आज में रहिए

"मैं आँगन में गुड़िया लेकर खेल रही थी। गुड़िया मेरे हाथ से छूट कर जमीन पर गिर पड़ी और उसके दो टुकडे हो गए। मुझे गुड़िया के टूटने का बेहद दुःख हुआ, और मैं रोती हुई अपने कमरे में चली गई। मेरी माँ ने मेरे रोने की आवाज सुनी, तो वह तत्काल मेरे पास आई। उन्होंने मुझे सांत्वना दी और प्यार करते हुए कहा, "प्यारी बेटिया। गुड़िया के टूटने पर रोने का समय आज नही है। कल शायद तुम्हें इस घटना पर आँसू बहाने का अवकाश मिल जाए। लेकिन आज— आज तो हमें गुड़िया की मरम्मत करनी होगी, उसे फिर से जोड़ना होगा। और यह काम रोने-धोने से नही हो सकता। इसके लिए हमें थोड़ी सी गोंद, अकल और मेहनत से काम लेने की जरूरत है।"

ये उत्साहप्रद शब्द सुनकर मेरे आँसू थम गए। और जब हम ने गुड़िया के दोनों टुकड़ों को फिर जोड़ लिया, तो मेरा शोक भी समाप्त हो गया। "प्रसिद्ध अभिनेत्री देविका रानी अपने बचपन की इस घटना का वर्णन करने के बाद लिखती है कि मैंने अपनी माँ से जो कुछ सीखा, उसे कभी भूल न सकी। मुझे जब कभी किसी आकस्मिक विपत्ति का सामना हुआ, अथवा कोई दुःखदायक घटना घटी, तो मैंने तत्काल ही अपने से कहा "कल शायद दुखी होने और अपने दुर्भाग्य पर आँसू

बहाने का अवकाश मिल जाए, लेकिन आज—आज तो मुझे इस विपत्ति का प्रतिकार करना है और इस दुर्घटना को सहन करने का उपाय ढूँढ़ना है।" इन शब्दो के चमत्कार से मेरा साहस पुनर्जीवित हो उठता था।

यदि हम इस विदुषी की तरह अतीत की भूलों और असफलताओ पर रोने-धोने और अपने को कोसने का काम कल पर उठा रखें, और कुछ करने की सोचे, कोई ऐसी योजना बनाएं, जिसे क्रियांवित करने से हमारी क्षति-पूर्ति हो सकती हो तो, हमे बात-बात पर रोने और जीवन से ऊब जाने का अवकाश शायद ही मिले।

"जीवन एक जंजाल है, "यह दुनिया दुःखों का घर है, "जीवन निर्वाह एक महान कष्ट है" आदि वचन अक्सर लोगों को जबान पर रहते हैं। और जब हम मनुष्यो को असहाय और विवश पाते हैं, तो हमें इन वाक्यो के सत्य होने में संदेह कैसे हो सकता है ? परन्तु इस में भो संदेह नही कि इन विपत्तियों का मुकाबला करने और उन पर विजयी होने का सीधा मार्ग अपने पर विश्वास करके उनका अत करने की चेष्टा करना है। और यह केवल तभी सम्भव है, जब हम 'आज में रहे, अर्थात आज ही कठिनाइयो पर काबू पाने का प्रयत्न करे। यदि हम इस सिद्धांत को अर्थात आज का काम आज करने के नियम को अपना जीवन दर्शन बना लें, तो फिर हम शायद ही दुनिया को 'दु.खो का घर' कहे, अथवा सुख की खोज के लिए मारे-मारे फिरने पर विवश हो।

"आज हमें काम करना है। हाँ, कल—शायद कल हमें अपनी विवशता और असहायता पर आँसू बहाने का अवकाश मिल जाए"—इसे हम अपना जीवन-दर्शन बना लें, तो निःसंदेह हमें कल भी दु.खी और शोकग्रस्त होने का अवसर नहीं मिलेगा

क्योंकि जब हम कल सुबह नीद से जागे, तो वह 'कल' भी 'आज' में परिणत हो चुकी होगी। और आज के लिए तो हम शपथबद्ध हैं कि इसे कुछ करने और व्यस्त रहने का दिन समझेंगे। इस प्रकार हम परेशानियों से सदा के लिए अपना पिंड छुड़ा सकते है, कठिनाइयों का मुकाबला करने और आघात सहने के अभ्यस्त बन सकते है, और अपनी क्षति-पूर्ति के लिए संघर्षशील हो सकते हैं।

'आज' के जीवन सिद्धांत को अपनाने में कभी त्रुटि नही करनी चाहिए। यह सिद्धांत 'कल' की विपत्तियों को हमेशा हम से दूर रखता है। जब कभी हम पर मुसीबतो का पहाड़ टूट पड़े, कोई भारी आर्थिक हानि सहन करनी पड़े, अथवा किसी विकट समस्या का सामना हो जाए, तो हमें उस पर दुःखी होने और आँसू बहाने का काम 'कल' पर उठा रखना चाहिए, और 'आज' तो केवल उपाय करने क्षति-पूर्ति करने और समस्या का हल निकालने में लग जाना चाहिए।

परन्तु 'आज नही, कल—शायद कल' के सिद्धांत को अपनाने की योग्यता तभी पैदा होगी, जब आप 'आज में रहना' सीख लेंगे और अतीत के गड़े मुर्दों को उखाड़ने की आदत छोड़ देंगे। हमें अपनी पूर्व की असफलताओं से कभी यह निष्कर्ष नही निकालना चाहिये कि अब हम आइंदा भी कभी सफल नहीं हो सकते और न इस भ्रम में रहना चाहिए कि जब अतीत मे हमारे प्रयत्न निष्फल और व्यर्थ सिद्ध हुए है, तो भविष्य मे भी ऐसा ही होगा। वास्तवविकता यह है कि व्यावहारिक जीवन मे परिस्थिति इसके बिल्कुल उलट होती है। अतीत की असफलताओं से भविष्य के लिए ज्ञान और अनुभव बढता है। इस लिए आगे चल कर सफल होने की सम्भावना हमेशा अधिक रहती है। यदि आप 'आज मे रहने का गुर सीख ले, अर्थात न अतीत को भूला के

लिए पश्चाताप में पड़े रहें और न सुदूर भविष्य के कल्पित महल बनाएँ,बल्कि आज की वास्तविक परिस्थितियों के अनुसार अपना जीवन सँवारने की चेष्टा करें, और हर नए 'आज के दिन' आगे ही क़दम बढ़ाते जाएं, तो यह असम्भव है कि आप अपनी मनोकामना के अनुसार सफल और सार्थक जीवन बिताने के समस्त साधन जुटाने में असमर्थ रहें।

'भविष्य के सुहावने स्वप्न' देखने वालों के लिए कोई निश्चित नियम निर्धारित नहीं किया जा सकता। दुनिया के प्रायः सभी बड़े लोग अपने जीवन में किसी न किसी समय सुहावने स्वप्न देखते रहे हैं। फिर भी यदि हम चाहें, तो अपने लिए एक पथ-दर्शक नियम निश्चित कर सकते हैं,और वह यह कि 'ये स्वप्न बड़े सुखद और आशाप्रद हैं' परन्तु 'आज' तो मुझे स्वप्न देखने का भी अवकाश प्राप्त नही,'आज' तो मुझे उन योजनाओं को कार्यांवित करना है, जो मैंने इन्ही दिनो मे अपनी व्यक्तिगत उन्नति के लिए तैयार की हैं। हाँ, 'कल'—शायद कल मैं सारा दिन इन योजनाओ के सुफलों के सुहावने स्वप्न देखने मे बिता सकूंगा।"

जीवन की अभिलाषा है, तो 'आज' में रहिए। आज सब दिनो का दिन' है; परीक्षा और सघर्ष का दिन है। जीवन के यथार्थ स्वरूप में आज को जो महत्व प्राप्त है, वह और किसी दिन को नही : [illegible] न आप ने जो महान कार्य सम्पन्न किया था उस से सतुष्ट [illegible] र प्रसन्न होने का आप को अधिकार है। परन्तु खुशी मनाने में भी आज के महत्वपूर्ण दिन को नष्ट करना बुद्धिम[illegible] नही, अथवा कल आप को फिर पश्चात्ताप और निराशा का [illegible] ार बनना पड़ेगा। आज को आने वाले कल के भरोसे पर कभी नही छोड़ा जा सकता। यदि हम आज काम नहीं करेंगे, तो आने वाला कल भी हमारे लिए सुखों की भूमिका नही बन सकेगा। यदि हम आज का दिन मीठे सपने देखने में

बिता देंगे, तो कल भी इन सपनों को 'सुहावने स्वप्न' ही पाएंगे और इस प्रकार हम जीवन भर केवल सपनों का जाल ही बुनते रहेंगे, और स्वयं उस जाल मे उलझ कर अभाव और दरिद्रता का जीवन बिता देंगे।

पिछले दिनों मेरी भेंट एक पुराने मित्र से हो गई। प्रारम्भिक शिष्टाचार के बाद मुझे उनसे यह जान कर बड़ी प्रसन्नता हुई कि उनका व्यवसाए उन्नतिशील है, और वह उस समय लाखों में नहीं, तो हजारों में जरूर खेल रहे है। वह अपनी आर्थिक स्थिति से संतुष्ट थे। और सतुष्ट क्यो न हों, जबकि कुछ ही वर्ष पूर्व वह सम्भवत: केवल दो सौ रुपये मासिक वेतन पर किसी फ़र्म में नौकर थे। पर आज उनकी अपनी फ़र्म थी अपना घर था और अपनी मोटर थी। परन्तु वार्तालाप में मुझे यह अनुभव करके बडा आश्चर्य हुआ कि वह मानसिक और भावनात्मक दृष्टि से अब भी सतुष्ट न थे, बल्कि शायद पहले से भी कुछ ज्यादा अस्थिर ओर अशात थे। इस अशान्ति का एक मात्र कारण था उनकी राजनीतिक विचार धारा, जिसे वह कुछ वर्ष पूर्व विश्व की एक मात्र सत्य विचारधारा और मानव जाति के समस्त दु:खों का उपचार समझते थे। परन्तु उनके व्यावहारिक जीवन से अब उस विचार-धारा की सत्यता सदिग्ध हो गई थी। इस लिए वह और अधिक दृढ़ता के साथ उसकी सत्यता को सिद्ध करना अपना कर्तव्य समझते थे। उन की व्यग्रता और स्थायी उत्तेजना का यही कारण था।

आखिर जब आप अपने पुराने सिद्धांतो के पक्ष में आध घंटे तक धुँआ-धार भाषण कर चुके, तो मैं कहे बिना न रह सका, "परन्तु मित्र, आप अतीत को भुला क्यों नही देते ? आप आज की परिस्थितियों के अनुसार अपने विचारो मे परिवर्तन क्यों नहीं करते ? आपका राजनीतिक सिद्धांत, जो वास्तव मे आपका

अपना भी नही था, वल्कि दूसरों से लिया हुआ था, सही था या गलत, अब उस पर दुःखित होने की क्या जरूरत है ? परिस्थितियो ने स्वय उसके विरुद्ध निर्णय दे दिया है । फिर इस प्रकार के राजनीतिक सिद्धातों को निर्पक्ष सत्य का स्थान नही दिया जा सकता, ऐसी स्थिति मे क्या यह उचित नही कि आप उन मे आवश्यक परिवर्तन और सशोधन कर ले ? आज में रहें, और परिस्थितियो को अधिकाधिक अपने अनुकूल बनाने का प्रयास जारी रखे ।"

यह तर्क कहाँ तक युक्तिसगत था, कहने की जरूरत नही परन्तु मेरे मित्र ने इसे युक्तिसगत ही समझा और कहने लगे कि "आप ने बात बड़े पते का कही है । वास्तव मे हमे अपना ध्यान अतीत की घटनाओ पर दु.खी होने के बजाए वतमान परिस्थिततियो को सुधारने पर केन्द्रित रखना चाहिए, आर जहाँ तक हो सके, आज मे रहना चाहिए ।

मेरे इस विचारशील मित्र की तरह दुनियाँ में हजारो ही ऐसे व्यक्ति हैं, जो केवल इस लिए शोकग्रस्त और निराश रहते है कि वे अपने वर्तमान का बड़ा भाग भूतकाल मे व्यतीत तरते हैं । इसका प्रभाव अनिवार्यत. उनके नित्य जीवन और क्रियाशक्ति पर पड़ता है । आइए, एक और सुशिक्षित महाशय का परिचय प्राप्त करे, जिनके सम्बन्ध मे आप को वह भ्रम है कि वह बडे तत्वदर्शी और अनुभवी सज्जन है । आपके विचार मे ऐसे व्यक्ति को जीवन से सतुष्ट होना चाहिए, क्योकि मँदे और बेरोजगारी के इस जमाने मे भी वह लगभग एक हजार रुपया मासिक कमा लेते हैं । स्वस्थ और सबल है, और किसी प्रकार की शारीरिक, मानसिक अथवा आर्थिक कठिनाई से उन्हे दूर का भी सम्बन्ध नही । परन्तु जरा उनके 'उच्च विचार सुनिए: "[illegible] साहब क्या बताएँ, बस किसी न किसी तरह गुजर हो रही

है। लेकिन यह कोई जिन्दगी नही है। कोई वक्त था जब मेरे पास अपना निजी मकान था। मैं अपनी पसन्द का काम करता था और अपने विचारों का खुल कर प्रचार करता था। मगर आज मैं अपने को जेलखाने में बन्द महसूस करता हूँ। मैं अपने विचारों के अनुसार काम नही कर सकता। कभी-कभी तो मुझे ऐसे काम करने पड़ते है, जिन पर मेरा विवेक विद्रोही हो उठता है।

ऐसे ही एक और सज्जन मिलेगे, जो दुःख और निराश की मूर्ति दिखाई देगे। उनकी वाणी कुछ इस प्रकार होगी, "मैंने अच्छे दिन भी देखे है, परन्तु अब तो जीना दूभर हो गया। अब हमारी योग्यता और कौशल का कोई गुणग्राहक नही रहा। कोई समय था जब लोग हमें झुक-झुक कर सलाम करते थे। परन्तु आज हमें देखकर मुह फेर लेते है। समय के इस उलट-फेर पर रोता हूँ। इसके सिवा और कर भी क्या सकता हूँ।" यदि आप उन्हे अतीत को भूला कर वर्तमान मे रहने का परामार्श दे, तो वह झट कह उठेगे। "अगर सुख-शाँति मेरे भाग्य मे होती, तो मैं इस दुर्दशा को पहुँचता ही क्यो ? मेरी सम्पत्ति विनष्ट क्यो होती ? मेरा सुयोग्य पुत्र अकाल मृत्यु का ग्रास क्यों बनता ?" उसके बाद वह आपकी ओर कुछ इस तरह देखेगे। जैसे कहना चाहते हों, 'न छेड़ो हमें हम सताए हुए है !'

इस प्रकार के वार्तालाप को आप जितना चाहे विस्तार दे लें, आपको प्रायः दुःख और निराश की कहानियाँ सुनने को मिलेगी। ये कहानियाँ अधिकतर सत्य पर आधारित होगी। परन्तु वे होगी अतीत की कहानियाँ। वर्तमान से उनका कोई विशेष सम्बन्ध नही होगा। इससे प्रकट है कि 'आज' मे न रहने से मनुष्य अपने को अकारण ही कितना दुःखी और दयनीय बना लेता है।

हमारे समाज में ऐसे व्यक्ति वहुत भारी संख्या में मिलते हैं, जो केवल आत्मज्ञान और आत्मविश्वास के अभाव से अपने को अकारण ही कठिनाइयों में डाल लेते है और उनका मुकाबला करने में स्वय को असमर्थ पाते है वे न केवल आज की कठिनाइयो से परेशान रहते है, । बल्कि उन कठिनाइयों को वे अपने दिल से नही निकाल पाते, जिनका सम्बन्ध अतीत से है । इस प्रकार वे स्वय को 'सदा अभागे' समझकर अपनी दशा सुधारने का प्रयत्न नही करते ।

आपका अतीत वहुत उज्जवल था । आप को हर प्रकार की सुविधाएँ प्राप्त थी । सहसा ही एक विपत्ति ने आपको घेर लिया और आप का सर्वनाश हो गया । इस महान आधत से आप एक दीर्घकाल तक हतप्रभ से रहे । अब आपकी दशा कुछ अच्छी है। परन्तु जहाँ तक जीवन के पुर्ननिर्माण का प्रश्न है, वह आपके सार्मथ्य से वाहर हो चुका है । अब तो आप जीवन से ही ऊब गए है, शक्ति और स्फूर्ति खो बैठे हैं । अब आप प्रयत्न भी करें तो भी सफलता के दर्शन नही कर सकते । यह दर्शन यथार्थ जीवन का दर्शन नही है । यह मृत्यु और विनाश का पथ है ।

यदि आप महापुरुषों की जीवन कथाओ का अध्ययन करें, तो आप पर सहज ही मे प्रकट होगा कि उसमें से किसी ने भी विपत्तियो के कारण अपनी योग्यता पर विश्वास नहीं खोया । दुनिया ने उनका विरोध किया, उन्हें नीचा दिखाने के लिए कोई कसर उठा न रखी । परन्तु वे कभी शोकातुर न हुये, कभी भयभीत न हुए। उन्होने कभी हथियार न डाले, और सदैव वड़ी दृढता और साहस के साथ कठिनाइयो और विपत्तियों का मुकावला करते रहे । फिर आज ही क्यों पराजय स्वीकार करें ? आपको चारो ओर घोर अधकार दिखाई दे रहा है, तो केवल इसलिए कि आप वर्तमान मे रहते हुए भी अतीत मे भी मग्न

हैं; आप शक्ति-सामर्थ्य रखते हुए भी अपने को क्षूद्र और निर्बल ही समझते है। समय ने आप से जो व्यवहार किया है, वह निश्चय ही खेदजनक है, परन्तु उससे भी ज्यादा खेदजनक वह व्यवहार है जो आप स्वयं अपने साथ कर रहे है। यह अपने साथ शत्रुता के समान है।

पिछले दिनों श्री जी० एल० मेहता ने, जो अमरीका में भारत के राजदूत रह चुके है, बम्बई के रोटरी क्लब में भाषण करते हुए कहा कि "अमरीका के लोग परिस्थितियों को अपने ऊपर विजयी होने का अवसर नही देते, बल्कि स्वयं उन पर विजयी होते है, उन्हें अपने पर पूर्ण विश्वास रहता है। और हर अवस्था में आशान्वित रहते हैं, अमरीका की वर्तमान शक्ति और समृद्धि के पीछे वहाँ के लोगों की यही मनावृत्ति क्रियाशील है।

आज में रहने का बड़ा फायदा यह है कि व्यक्ति का साहस बना रहता है। वह घटनाओ और परिस्थितियों पर निर्पेक्ष दृष्टि डाल कर निश्चय कर मकता है कि उन्हें अपने अनुकूल बनाने के लिए कौनसा मार्ग अपनाना चाहिए। और इस प्रकार के सोच विचार से जब वह अपने कल्याणार्थ कोई योजना तैयार करता है, तो फिर उसे कार्यान्वित करने मे दुविधाग्रस्त नही होता।

अवश्य अतीत की गलतियों और त्रुटियों से लाभ उठाना चाहिए। "मैं अमुक व्यवसाए में असफल क्यों हुआ ? अमुक कार्य को सम्पन्न करने में मुझसे क्या-क्या भूले हुई—इन प्रश्नों पर विचार अवश्य कीजिए और आगे के लिए उस अनुभव से लाभ उठाइए। वास्तव में हर असफलता मे सफलता की सम्भावना अधिक उज्ज्वल होती, न कि इसके उलटा। उन लोगो की सफलता अधिक निश्चित है जो अतीत की असफलताओं

का कारण समझ लेते है, और भविष्य में उन पर नजर रखते है। अतीत को भुला देने का तात्पर्य यह नही कि उससे आँखे ही मूँद ली जाएँ, वल्कि उससे सही निष्कर्ष निकालना है। वीते दिनो की कठिनाइयो और असफलताओ से भयभीत हो कर हताश और निष्क्रिय हो जाना जीते जी मर जाने के समान है।

कुछ लोग अतीत से भी नही डरते और वर्तमान को भी उन्नत वनाने की चेष्टा करते है। परन्तु उनके रास्ते मे वड़ी कठिनाई यह होती है कि वे भविष्य के सुखद सपनों में अत्याधिक लीन रहते है। वे रात मे सोते समय ही नही, वल्कि दिन के उजाले मे भी स्वप्न ही देखते रहते है। उनके स्वप्न वड़े सुहावने और वड़े सुन्दर होते है। "वह दिन आएगा जव मैं सफलता के उच्च शिखर पर पहुँचूगा"—इस प्रकार के स्वप्न देखना वुरी वात नही है। वास्तव मे मैं तो ऐसे व्यक्ति को वुद्धियुक्त मनुष्य ही नही समझता, जो उन्नति और महत्ता के स्वप्न न देखता हो। ऐसे सपनो के विना उन्नति का प्रश्न ही नही उठ सकता। यदि ऐसे व्यक्ति पर महानता ठूस भी दी जाए, तो भी वह शीघ्र ही उसे गँवा वैठता है। दुनिया के सव वड़े विचारक, वैज्ञानिक, लेखक और राजनीतिज्ञ ऐसे सपनो के वल पर ही महानता को प्राप्त हुए हैं। परन्तु सपनो के विषय मे स्मरण रखने की वात यह है कि आचरण के विना कोरे विचार व्यर्थ हैं। स्वप्न उन्ही के चरितार्थ होते हैं, जो साध्यासाध्य का विचार करते हुए ही काल्पनिक महल वनाते हैं, और उन्हें यथार्थ में परिणत करने के लिए घोर सघर्ष करते हैं।

यह होने वाले व्यक्ति जव भविष्य में उड़ान करते हैं, तो वर्तमान से अपना सम्वन्ध विच्छेद नही कर लेते। यदि वे कल देश के नेता वनना चाहते हैं, तो आज अपना सारा ध्यान

और सारी शक्ति उन गुणों की उपलब्धि की ओर केन्द्रित करते है, जो एक आदर्श नेता मे होनी चाहिए। यदि वे महान लेखक और साहित्यकार बनना चाहते है, तो आज अपना अधिकांश समय उत्तम पुस्तकों के अध्ययन और साहित्यिक अनुशीलन में व्यतीत करते हैं।

सारांश यह है कि यदि आप भविष्य के सपने देखते है, तो बड़ी अच्छी बात है, परन्तु सपने देखने में ही उन लोगों का अनुकरण न कीजिए, जो केवल सपनों की दुनिया में ही रहते है, और स्वप्न देखकर ही अपना भविष्य बनाना चाहते है। दुनिया में ऐसे लोगों की संख्या कुछ कम नही है। इन मे एक बड़ा समूह तो उन लोगों का है जो अपना समय शब्द-पहेलियाँ हल करने अथवा लाटरी के टिकट खरीद कर इनाम की प्रतीक्षा करने में व्यतीत करते है। इन क्रीड़ाओं में यदि केवल मनोरजन अथवा देशोन्नति के लिए बचत का रुपया लगाने के विचार से भाग लिया जाए तो कुछ लाभ भी है। परन्तु पहेली अथवा लाटरी से धन कमा कर ही भविष्य बनाया जायेगा, ऐसी धारणा रखने वाला व्यक्ति मूर्ख ही नही पथभ्रष्ट भी है। सच बात यह है कि इन प्रणालियों से अनायास धन प्राप्त हो जाने पर भी कोई स्थाई लाभ नही हो सकता, यदि व्यक्ति में धन का समूचित उपयोग करने की योग्यता न हो। इस लिए घूम फिर कर फिर वही बात आजाती है कि जीवन में सफलता के लिए योग्यता प्रधान है, न कि साधन।

सुहावने स्वप्न देखने वालों का एक और वर्ग समझदार और मेहनती लोगो का है। ये लोग भविष्य की सुन्दर कल्पनाओं में मग्न रहते है, तो उन्हें यथार्थ रूप देने के लिए परिश्रम भी करते है। परन्तु उनमे एक बडा दोष यह होता है कि वे बहुत ही शीघ्रता से अपने लक्ष्य तक पहुँचना चाहते है। वे अपनी

योग्यता और सामर्थ्य की तुलना में अधिक शीघ्रगामी बनना चाहते है। परिणाम यह होता है कि वे बार-बार गिरते है। बहुधा तो ऐसी स्थिति आ जाती है कि गिरने के बाद फिर वही पहुँच जाते हैं, जहाँ से चले थे। यह बार-बार की असफलता अतत: उनके उत्साह और एकाग्रता का अंत कर देती है। फिर उनके जीवन में एक समय ऐसा भी आजाता है, जब उन्हें अपनी योग्यता और क्रियाशक्ति पर विश्वास ही नही रहता। वे अपनी निरतर असफलताओं से यह निष्कर्ष निकालते हैं कि अपने भविष्य को उज्ज्वल बनाना उनके बस की बात ही नही है। अब यह तो प्रकट ही है कि जब कोई व्यक्ति अपने पर विश्वास ही खो बैठे, तो फिर उससे बड़े कामों की बात तो दूर रही, इतने काम की आशा भी नही की जा सकती, जिससे वह कम से कम सम्मान के साथ जीवन ही व्यतीत कर सके।

कुछ लोग भविष्य की कल्पनाओ मे इतने अधिक विमग्न हो जाते है, और अपने लिए धन ऐश्वर्य और प्रसिद्धि प्राप्त करने के संघर्ष में इतने तन्मय रहते है कि जीवन के उन सामान्य सुखों से भी स्वय को वचित कर लेते है, जिनका उचित मात्रा मे आस्वादन उनके मार्ग मे किसी प्रकार भी बाधक नही हो सकता। यहाँ तक तो खैर ठीक है। शायद उनके निकट संघर्ष ही परमानन्द है। परन्तु आपत्ति की बात यह होती है कि वे सर्वदा बडे कामो मे व्यस्त रहने के कारण नित्य जीवन के छोटे-छोटे कामो की अवहेलना करते है। इसका कुप्रभाव उनके स्वास्थ्य, सासारिक सुख-शान्ति और सतान की शिक्षा दीक्षा पर पड़ता है। मैं एक ऐसे सुयोग्य युवक को जानता हूँ, जो सफलता-प्राप्ति की उत्कट भावना के वशीभूत होकर अपने नित्य कर्तव्य से भी विमुख हो गया है। वह महानता के उच्च शिखर पर पहूचने के लिए इतना व्याकुल और उन्मत्त-सा है, और अपनी समस्त

शक्तियों को उस एक उद्देश्य की ओर केन्द्रित करने में इस हद तक अपने को भुला बैठा है कि उसकी यह व्यस्तता और एकाग्रता रचनात्मक न होकर ध्वंसात्मक सिद्ध हो रही है। ऐसी स्थिति मे यह कहना उनुचित न होगा कि भविष्य के सुन्दर स्वप्न देखने और उन्हे वास्तव मे परिणत करने की चेष्टा करने वाले लोगो की भलाई भी इसी मे है कि वे 'आज' की उपेक्षा न करे, अर्थात भविष्य की योजनाओ को कार्यान्वित करने की चेष्टाओं के साथ-साथ वर्तमान परिस्थितियों और आवश्यकताओं को भी ध्यान मे रखा करे।

वास्तव में सफल जीवन का रहस्य 'आज' में रहने मे है जो लोग 'आज' में रहते है, अपनी वर्तमान परिस्थितियो को सुधारने पर ध्यान देते हैं, अतीत के अनुभवो से लाभ उठाकर अपने वर्तमान और भविष्य को उज्ज्वल बनाने की चेष्टा करते हैं, और काल्पनिक महल बनाने के साथ-साथ 'आज' धरती पर उन की नीव भी रखते है, वे अवश्य ही सफलता के दर्शन करते हैं। इसलिए आज' म रहने के सिद्धात की कभी उपेक्षा न कीजिए। हमेशा एक-एक कदम आगे बढिए, और जब एक चरण पूर्ण हो जाए, तभी दूसरे चरण का प्रारम्भ कीजिए। सरांश यह है कि इस प्रकार धीरे-धीरे आगे बढ़िए कि आपके आत्मविश्वास और आत्मसम्मान को आघात न पहुँचे, और आप केवल अनुभव ही न करे, बल्कि निश्चित रूप से कह सके कि आप व्यक्तिगत अध्यवसाए से अपना मार्ग प्रशस्त करसकते हैं। यही विश्वास, यही आत्मबल आपकी सफलता की भूमिका है। इनके सहारे आप निश्चय ही अपने लक्ष्य तक पहुंचेंगे।

प्रोत्साहन

ब्रिटिश पार्लियामेन्ट अपनी कुछ विशेष परम्पराओं के कारण प्रसिद्ध है, और जनतंत्री जगत के लिए प्रकाश-स्तम्भ का स्थान रखती है। जनतंत्रीय देशों मे इस संसद को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है, और जनतंत्र की रक्षा और विकास के लिए उसका अनुसरण किया जाता है। इस प्रतिष्ठित सभा की उत्तम परम्पराओ मे एक यह भी है कि इसके परिपक्व और अनुभवी सदस्य नवागतुकों को प्रोत्साहित करते है। जब कोई नया सदस्य अपनी पहली वक्तृता समाप्त करता है, तो पुराने सदस्य उनकी भूरि-भूरि प्रशसा करते है, और 'पिट के बाद सर्वोत्तम वक्तृता, आदि वाक्यो से उसका साहस बढ़ाते हैं। यह सद्व्यवहार इन तरुण सदस्यो के लिए, जो बड़ी उमगों के साथ पार्लियामेन्ट मे आते हैं, संजीवनी का काम करता है। वे अपनी पहली ही सफलता पर प्रसन्नता और सतोष का अनुभव करते है, तथा पहले ही दिन से ससद की कार्यवाही में साहस और विश्वास के साथ भाग लेने लगते है। उनमें जो युवकगण वास्तवि योग्यता रखते है, अथवा जो अपना सर्वस्व राजनीतिक जगत मे अपने लिए स्थान बनाने में लगा देते हैं, और दृढ संकल्प से काम लेकर कुछ बनकर दिखाना चाहते है वे अततोगत्वा अपने परिश्रम का पुरस्कार पाने मे सफल होते हैं।

यह प्रोत्साहन संसद के नए सदस्यो के लिए कितना लाभ दायक होता है, उसका अनुमान लगाने के लिए ब्रिटेन के प्रसिद्ध प्रधान मंत्री मि० ग्लैडस्टोन् के अनुभव पढिए, जो आपने अपने भाषण पर संसत्सदस्यों की प्रतिक्रिया के सम्बन्ध मे लिखे। आप लिखते है कि मैंने अपना पहला भाषण प्रायः एक घटे तक किया। मैं नही जानता कि मैने कुछ कहा। परन्तु मैं यह देख रहा था कि सभासद मेरे भाषण को बड़े ध्यान और रुचि से सुन रहे थे। और जब मैंने भाषण समाप्त किया, तो पुराने सदस्यों ने मुझे बधाई दी और मेरे मित्रगण भी सन्तुष्ट दीखते थे। कहना अनुपयुक्त न होगा कि ग्लैस्टोन् की यही सफलता उनकी महानता की नीव सिद्धि हुई।

ब्रिटिश संसद के इतिहास में बहुत कम अवसर ऐसे आए है, जब कुछ सदस्यों ने इस उच्च परम्परा का उल्लघन किया हो। एक बार जब तरुण बेंजमन् डिज्राइली अपना पहला भाषण करने के लिए खडा हुआ, तो कुछ सदस्यो ने व्यक्तिगत शत्रुता और जातीय पक्षाधता के वशीभूत होकर उसके भाषण में विघ्न डाला था। परन्तु स्वयं उसके अपने दल के बड़े नेताओं ने इस भूल का प्रतिकार किया, और बठक की समाप्ति पर डिज्राइली को सांत्वना दी। बाद में विरोधी दल के सदस्यो ने भी अपनी अनैतिकता का अनुभव किया और उन्होने डिज्राइली से अपने अशोभनोय आचरण के लिए क्षमा-प्रार्थना की।

ब्रिटेन के अधिकतर सुविख्यात ससदीय वक्ता इस सभा की इन्ही उच्च परम्परओ का परिणाम है। और जब हम मानवी मनोविज्ञान का अध्ययन करते हैं, तो इस सिद्धात की पुष्टि होती है कि मनुष्य वस्तुतः प्रशंसा और प्रोत्साहन का इच्छुक रहता है, और अपने परिश्रम की स्वीकृति प्राप्त करके प्रसन्न और संतुष्ट होता है। तब वह अपनी योग्यता का और

अधिक परिचय देने पर उद्यत ही नही होता, बल्कि कुछ करके भी दिखाता है। आपका बच्चा औसत योग्यता रखता है। गणित में वह कुछ कमजोर है। आप उसे स्वयं घर पर पढ़ाते है, परन्तु आपके प्रयत्न बराबर निष्फल हो रहे है। गणित किसी तरह ही वच्चे की समझ मे नही आता। स्वाभाविक है कि आप बच्चे को मदबुद्धि और आयोग्य समझे। परन्तु ९० प्रतिशत हालतो मे बात यह नही होती, बल्कि बच्चे की आयोग्यता का कारण स्वय आपका अपना रवैया होता है। आप निश्चय ही डाँट-डपट से काम लेते है, बराबर उनके कान खीचते रहते है अथवा अपशव्द बोलते है। उनको 'मूर्ख, अयोग्य कहना तो आपका नित्य नियम बन चुका है। स्पष्ट है कि ये सब उपाय असफल हो चुके है। अब तनिक रवैये मे परिवर्तन करके उसके सुफल भी देखिए। बच्चे को गणित के नियम नर्मी और प्रेम से समझाइए। उसे कहिए कि जो बात समझ मे न आए, बार-बार पूछे। स्वय आपको भी समझाने का ढग मालूम होना चाहिए। शिक्षा देना एक कला है। और सुयोग्य अध्यापक ही जानते हैं कि वच्चो को कोई बात किस तरह समझाई जाती है। आपको उस प्राणाली का ज्ञान होना चाहिए। इसके साथ ही जब आपका रुख स्नेहपूर्ण और नम्र होगा तो बच्चा शायद शुरू में तो इस परिवर्तन से कुछ विस्मित हो, परन्तु जब उसे विश्वास हो जाएगा कि आप सचमुच उसके सहायक और हितचिंतक है, तो वह आपसे कोई भी वात पूछने मे सकोच नही करेगा, और इसका परिणाम यह होगा कि गणित के वही नियम, जो बार-बार बताने और 'कान खीचने पर' भी उसकी समझ में नही आते थे, अव न केवल उसके कठस्थ हो जाएँगे, बल्कि वह उन्हे यथास्थान प्रयोग मे लाने के योग्य हो जाएगा। इस प्रकार कुछ ही दिनो मे उसका 'पिछड़ापन' दूर हो जाएगा।

प्रोत्साहन के महत्व से केवल वही लोग इन्कार कर सकते हैं, जो या तो स्वयं मूर्ख और अयोग्य है, अथवा स्वार्थी है। अयोग्य व्यक्तियों को प्राय. फटकार सुनानी पडती है, या कम से कम उन्हें आदर-सम्मान तो कभी नही मिलता। इसलिए वे दूसरों की प्रशंसा-प्रोत्साहन करना भी अनवश्यक समझते है। उल्टा निन्दा ही करते है, जिससे उनकी गुणशून्य आत्मा को कुछ तृप्ति मिलती है। दूसरी तरह के लोग वह है, जो सामुहिक जीवन का सम्मान नही करते, जो नितांत व्यक्तिवादी और स्वार्थी होते हैं। यदि वे स्वय सुखी और सम्पन है, उनका व्यवसाय उन्नतिशील है, अथवा नौकरी संकट में नही है, तो उनके लिए 'सब ठीक' है। उन्हें इस बात से कोई मतलब नही होता कि समाज के दूसरे व्यक्ति किस हाल म है, और किसे कितनी सहायता की आवश्यकता है। इस वर्ग के लोग प्रायः निर्दयी होते है, और सहानुभूति के स्थान पर उपेक्षा और कठोरता का व्यवहार करते है। यदि कोई अभावग्रस्त व्यक्ति इनके पास सहायता के लिए जाए, तो वे उल्टा उसके हृदय को व्यग्य और भर्त्सना के तीरों से छलनी करते है। इनमे कुछ तो ऐसे होते है, जिन्हें स्वयं अपने समय में इसी प्रकार का दुर्व्यवहार सहन करना पडा था, और सफलता-प्राप्ति के सघर्ष मे दूसरो से बहुत कम नि स्वार्थ सहायता अथवा प्रोत्साहन प्राप्त हुआ था। इसलिए प्रतिशोध-भावना एक प्रकार से इन लोगो की प्रकृति बन गई है, और दूसरो को दुखी और पीड़ित देखकर ये लोग खुश होते है। दूसरे वे लोग है, जो प्रकृति से तो सभ्रात और सहृदय है, परन्तु सम्पन परिवार में जन्म लेने के कारण, अथवा सौभाग्य से स्वय कभी विपत्तिग्रस्त नही हुए। वे जानते ही नही कि जीवन की कठिनाइयाँ क्या होती है, और समय का उलट फेर मनुष्य को किस प्रकार विवश और असहाय बना देता है। वे अनुभव ही

नही करते कि दुनिया में हजारों-लाखों व्यक्ति धिक्कार और तिरस्कार के नही, वल्कि सहायता और सहानुभूति के अधिकारी है।

यह अज्ञानता, विशेपकर उन लोगों की अज्ञानता, जो किसी के घाव पर सहानुभूति का फाहा रख सकते है, किसी के टूटे हुए दिल को प्रोत्साहन के शब्दों मे जोड मकते है, वस्तुत: वड़ी खेदजनक है। दुनिया में हजारो लोग ऐसे है, जिनकी जीवन नैया मफलता-तट तक पहुँचने से पहले आँधी और तूफान में घिर गई है। ये लोग अपना जीवन वनाने चेष्टाओं मे सर्वस्व लुटा वैठे हैं। अव ये सहानुभूति के पात्र हैं। जीवन-पथ के इन क्लान्त यात्रियों के लिए साहस वढाने वाले दो शब्द नई शक्ति का स्रोत वन सकते है। यदि इन्हे यह 'वरदान' उचित ममय पर मिल जाए, तो ये विनाश से वच सकते है, अन्यथा उनका दु.खद अत निश्चित है। तो क्या उन लोगों का, जो मार्ग की कठिनाइयो से भली भाँति परिचित है, अथवा जो कालचक्र की कठोरताओ से वचे हुए है, यह कर्तव्य नही कि वे अपने दृष्टि-कोण मे परिवर्तन करे, और दुर्दशाग्रस्त लोगो को सहायता और प्रोत्साहन को अपना नित्य नियम वनाएँ? अवश्य है, उनका नैतिक, मानुपिक मनुष्योति वल्कि पवित्र कर्तव्य है।

कहते है कि प्रोत्साहन का प्रभाव वनस्पति तक पर पडता है वनस्पति पर सगीत का प्रभाव तो सर्वज्ञात है। संगीत चूँकि हर्ष वर्द्धक और आदनन्ददायक होता है, इसलिए सम्भवत: पौधे उससे प्रभावित होते है। जीव-जन्तुओ पर प्रेम-भरे उत्साहवर्द्धक शब्दों का प्रभाव तो स्पष्टत: देखा जा सकता है। आप पालतु पशुओ को प्यार करे; उनका साहस वढाएँ, तो वे प्रसन्न होकर उछ-लने कूदने लगते है। वे आपकी भापा नही समझते, परन्तु आपके चेहरे के लक्षणो से आपकी आतरिक भावनाओं को पढ़

लेते है। और जब उन्हे विश्वास हो जाता है कि आप वास्तव मे उनसे प्यार करते है, तो वे उत्तरस्वरूप आपके प्रति कृतज्ञता और श्रद्धा का प्रदर्शन करने में सकोच नही करते।

'प्रेम भाषा और शब्दों के आधीन नही होता' अथवा दिल को दिल से राह होती है' प्रसिद्ध सूक्तिया है, और सत्य पर आधारित है। प्रेम का निवेदन और अभिव्यक्त के बिना भी विश्वास दिलाया जा सकता है। यही बात घृणा पर भी लागू होती है। आप किसी व्यक्ति के सम्बन्ध मे अपने मन की घृणा के विचारों से भर लीजिए, और चाहे आप अपनी इस मनो दशा से किसी को सूचित न कीजिए, परन्तु जिस व्यक्ति से आप घृणा करते है, वह आपके विचारो से प्रभावित हुए बिना नही रह सकेगा। तनिक विचार कीजिए कि जब मौन रहने की अवस्था मे भी आप अन्य अप्राणियों पर प्रभाव डाल सकते है, तो जब आप प्रकट रूप से अपने अच्छे या बुरे मनोभावो को अभिव्यक्ति करेगे, तो लक्ष्य व्यक्ति प्रभावित हुए बिना कैसे रह सकेगा। जब चेतनाहीन वनस्पति और बुद्धिहीन जीव-जन्तु भी प्रोत्साहन का प्रभाव ग्रहण करते है, तो भावनायुक्त मानव उससे प्रभावित हुए बिना कैसे रह सकता है। तो फिर क्या हमारा यह कर्तव्य नही कि यदि हम किसी को फूल नही दे सकते, तो कम से कम उस पर कॉटे तो न फैके।

निराशा, विकलता, भय और उदासीनता वर्तमान युग के चार अभिशाप है। इसमे संदेह नही कि भौतिक प्रगति ने हमे जितनी भी सुविधाएँ प्रदान की है, उनसे ज्यादा इन कुपरिणामो ने मानवी जीवन को सकटमय बना रखा है। कोई समय था, जब गरीब लोग 'खाल मस्त' रहा करते थे। परन्तु अब न धनिक चैन की वसी बजा सकते है और न निर्धन सतोप का जीवन बिता सकते है। आज पैसे वाले चिंता मे घुले जा रहे हैं कि जाने

कल भी इज्जत सलामत रहेगी या नही। और साधनहीनों को रात दिन यही फिक्र खाए जा रही है कि जीवन की आवश्यकताएँ कब पूरी होगी। सा ाँश यह है कि जिसे देखिए, चिन्तित, दुखी और अशांत है। परन्तु सुख शान्ति और सतोप का कही पता नही। विशेपज्ञो ने इस व्यापक अशान्ति का कारण ढूँढने की कोशिश की, तो वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि वर्तमात युग क्राति और परिवर्तन का युग है। इसलिए इस युग मे मातसिक विश्रृंखलता स्वाभाविक है। यदि यह परिस्थति किसी एक वर्ग तक सीमित नही। अमीर गरीव सभी परेशान है, इसलिए आज मनुष्य को आध्यात्मिक सहयोग की पहले से भी अधिक आवश्यकता है।

यदि आप पूँजीपति है; धन सम्पत्ति के स्वामी है, तो अपनी पूजी और धन के वरदानों के उन श्रमिको को भी सम्मिलित कीजिए, जिनके खून-पसीने की कमाई से आपके पास पूजी संग्रह हुआ है। यदि आपके पास रहने के लिए भव्य राज-प्रसाद है, तो इस वात का भी ध्यान रखिए कि आपके कर्मचारियों कार्य-कर्ताओ को सदैव इतना काफी पारिश्रमिक दीजिए, जो उपस्थित परिस्थितियो मे जीवन बिताने योग्य हो, अन्यथा पूँजी और श्रम का स्वाभाविक सघर्ष अपने चरम बिन्दु पर पहुँच कर स्वय आपकी वैसी ही दशा कर देगा। इसके अलावा आप गरीबों, अपाहिजो और असहाय लोगों की नि.स्वार्थ सहायता भी कीजिए। धनवान होना पाप नही है। धन का दुरुपयोग और धन समेटने की लालसा में गरीब मजदूरों और किसनो के अधिकारों को पद-दलित करना ही पाप है। और यह पाप ऐसा है जिसका दंड परलोक मे नही, इसी दुनिया में मिल जाता है।

पूजी और श्रम का संघर्ष वास्तव मे स्वार्थपरता और अभाव का सघर्ष है। जहाँ पूँजी इतनी लोभी और श्रम इतना अभाव ग्रस्त नही, जैसे अमरीका और इगलैड, वहाँ यह सघर्ष

भी इतना उत्कट और भंयकर नही है। कही तो संघर्ष का स्थान सहयोग ने ले लिया है। याद रखिये, आजका श्रमक विगत शताब्दी का दीन-हीन और निर्बल श्रमिक नही है कि मुट्ठी भर साधनयुक्त व्यक्तियों को धन समेटते देखकर उसे भगवान की इच्छा मात्र और अपनी दरिद्रता को पिछले जन्म के पापो का दुष्यपरिणाम समझे। आज वह वास्तविकता का ज्ञाता, शिक्षित, सबल और संगठित है। इसलिए आज पूँजीपतियो के एकाधिकार का समय नही रहा। आज यदि पूँजी पतिको जीवित रहना है, तो उसे समय के लेखे को पढ़ना होगा, और बदली हुई परिस्थितियों के अनुसार अपने आचार-विचार मे परिवर्तन करना होगा। जिन समुन्तर देशो के पूँजीपति इस तथ्य को समझ गए है, वे श्रम के सगठन और नित्य बढते हुए जीवन स्तर से भयभीत नही होते, बल्कि हैनरी फोर्ड की तरह उसे समाज की सर्वांगीण प्रकृति और समृद्धि की मुख्य प्रणाली मानते है। हैनेरी फ़ोर्ड का कहना था कि श्रमिको को सदैव उच्चतम वेतन देना ही हितकर होता है। लोगो की क्रय-शक्ति जितनी ज्यादा होगी, उतना ही उत्पादन और बढेगा, विक्रयण अधिक होगा, और परिणामतः पूँजी का लाभ और राशि बढेगी। हैनरी फ़ोर्ड के इस सिद्धांत का ही परिणाम है कि आज अमरीका मे हर पाँच व्यक्तियों में से तीन के पास मोटर कारे है। यदि हमारे देश के पूँजीपति भी इस सिद्धांत को अपना ले, तो वर्ग-सघर्ष का आज ही अन्त हो सकता है; और शायद फिर सार्वभौम युद्ध की सम्भावना भी सदा के लिए समाप्त हो जाए।

आज की अंशाति का यदि निर्पेक्ष भाव से विश्लेपण किया जाए तो ज्ञात होगा कि इसका मुख्य कारण द्वितीय महायुद्ध है। अणु उदजन बम, भूख वेरोजगारी और सामाजिक कलह सब इसी पुद्ध के 'उपहार' है। युद्ध से पहले जो वस्तु एक रुपय मे मिलती थी, अब चार रुपय मे भी दुर्लभ है। इस महगाई और

अभाव से मानवी शरीर के अलावा उसकी आत्मा भी भीषण रूप से प्रभावित हुई है। और इस परिस्थिति पर काबू पाने का एक मात्र उपाय है सांत्वना और प्रोत्साहन। आप किसी की आर्थिक सहायता कर सके या न कर सके, पर उसका प्रोत्साहन करने मे कृपणता से काम न ले। और जहाँ तक सम्भव हो सके उसे निराशा अस्थिरता, भय और उदासीनता के चगुल से मुक्ति लाभ करने मे सहायता दे।

प्रोत्साहन जीवन के हर क्षेत्र में और हर स्थल पर उपयोगी हैं। नन्ने बच्चे प्रोत्साहन से चलना सीखते है और जब पाठशाला मे जाने लगते है, तो प्रोत्साहन से परीक्षाओं में उत्तीर्ण होते है। वयस्क होने पर जब किसी कार्यालय, व्यापारिक संस्था या प्रशासनिक विभाग में काम करते है, तो उस समय भी प्रोत्साहन ही उनका मार्गदर्शक होता है। यदि आप किसी व्यापारिक सस्था के मालिक या व्यवस्थापक है, तो आपने जरूर अनुभव किया होगा कि कोई नवयुक जब पहली बार आपके यहाँ काम शुरूकरता है, तो प्रारम्भ मे वह कुछ हिचकिचाता सा रहता है और अपनी पूर्ण योग्यता का परिचय नही देता। उसे अशंका रहती है कि कही कोई भूल-चूक न हो जाए। और परिणामस्वरूप उसे नौकरी से जवाब ही मिल जाए। इसलिए वह अपनी सूझ-बूझ के अनुसार काम करने से कतराता है, और हर कदम पर निर्देशण का अपेक्षी रहता है। परन्तु यदि उसको प्रोत्साहन दिया जाए, तो वह शीघ्र ही संभल जाता है। उसे अपने पर विश्वास हो जाता है, और कुशल कार्यकर्त्ता सिद्ध होता है यदि आपने कभो इसका अनुभव नही किया, तो अब इसका प्रयोग करके देखिए। आपकी यह शिकायत निश्चय ही दूर हो जाएगी कि आपको काम के आदमी नही मिलते। बात यह है कि जब आप में काम के आदमी तैयार करने का उत्साह ही नही है, तो फिर आप उनके न मिलने की आशा क्यों रखते

हैं ?

सुयोग्य विद्वानों ने हतोत्साहन को मानव जाति का सब से बड़ा शत्रु कहा है। इसमें सदेह नही कि हतोत्साहन मनुष्य की योग्यताओं का नाश करने का सबसे प्रभावी साधन है । यदि आप किसी योग्य और अनुभवशील व्यक्ति के पीछे पड़ जाएँ और सब मिलकर उसे हर वक्त मूर्ख और अयोग्य कहना शुरु कर दे, तो निश्चय ही उसकी सब चतुराई समाप्त हो जाएगी । उसे अपने पर विश्वास नही रहेगा, और वह अनुभव करने लगेगा कि उसका कोई सुझाव सही और युक्ति सगत नही हो सकता। इसलिए या तो वह अपनी समझ से कोई सुझाव प्रस्तुत करने का साहस ही नही करेगा, या अगर कर्तव्य पालन के विचार से कुछ कहेगा भी, तो उसकी बात तुरत रद्द कर देने के योग्य होगी। कारण, भय और उद्विग्नता की अवस्था मे मस्तिष्क में उत्तम विचार नही आ सकता। जीवन-क्षेत्र मे ये जितने भी दुर्दशाग्रस्त लोग आपको दिखाई देते है, इनमे से अधिकतर के दुर्भाग्य का दायित्व उनके माता-पिता, अध्यापकों अफसरो या दोस्तो पर है, जो प्रोत्साहन की बजाए हतोत्साहन मे अधिक रस लेते थे । इसलिए यदि आप चाहते है कि आप मानवता के मान दड पर खरे सिद्ध हों, तो प्रोत्साहन को अपना जीवन दर्शन बनाइए, ताकि आप अपने कर्तव्य का उत्तम रीति से पालन कर सके। आप अपने बच्चो, दोस्तो और अधीनस्थ कर्मचारियों को अथवा जिन लोगों का कार-बार के सिलसिले मे आपसे मिलना जुलना होता है, उन्हे आशा और साहस का उपहार देने मे अनु-दार न बने। उत्साह, दान से आप की कोई हानि नहीं होगी, और दान पाने वाले का जीवन सार्थक हो सकता है।

यदि आप प्रोत्साहन के महत्व से परिचित है—प्रेम और सहानुभूति के शब्दो से पीड़ित हृदय को सान्त्वना दे सकते है ;

यदि आप उन नवयुवकों का जीवन बनाने में सहायता करते हैं, जो आपके अधीनस्थ हैं, और अपने बच्चों को भी आत्मविश्वासी बनाना अपना कर्तव्य समझते हैं, तो फिर एक और व्यक्तित्व को भी अपनी स्नेह-दृष्टि का पात्र समझिए। वह व्यक्तित्व स्वयं आपका है। जहां आप दूसरों को प्रोत्साहित करते है, वहाँ कभी-कभी अथवा जब भी आवश्यकता हो, स्वयं अपने को प्रोत्साहित करना भी जरूरी समझिए। आपको यह सुझाव शायद कुछ विचित्र दिखाई पडे, शायद आपके विचार में स्वयं अपना प्रोत्साहन सम्भव ही नही। जो व्यक्ति स्वयं शोकग्रस्त हो; जिसे निराशा और असफलता ने पंगु बना दिया हो, वह आप अपनी सहायता क्या कर सकता है? प्रकट मे आप की यह आपत्ति उचित ही है, परन्तु यदि आप यह सकल्प कर ले कि ऐसे अवसरो पर जब आपको चतुर्दिक अधकार ही दिखाई देगा, जब आप किसी उद्देश्य की पूर्ति में असफल रहेगे अथवा जब आपको पराजय का मुँह देखना पड़ेगा, तो आप उत्साहवर्द्धक विचारों की सहायता लेगे, और निराश व आत्मतुच्छता को अपने मन पर आधपत्य जमाने का मौका नही देगे, तो इस आचरण से आप अवश्य ही अपने को सहारा दे सकेगे, और अपने मित्रों सम्बन्धियो की अपेक्षा स्वय अपनी अधिक सहायता कर सकेंगे। कारण यह है कि मित्रगण आप के प्रति सहानुभूति तो प्रकट कर सकते है परन्तु वे कभी यह नही जान सकते कि आपका घाव कितना गहरा है। इसलिए उनके शब्दो को प्राय: औपचारिक ही समझा जाता है। परन्तु स्वय आपकी सहानुभूति सच्ची और निष्ठायुक्त होगी, क्योकि आप से ज्यादा कौन जान सकता है कि आपके दु ख और अशाति के कारण क्या हैं। इसके अलावा साहसप्रद विचारो के आगमन से शोकमय विचारो का ह्रास होत है।

कुछ गुणी और सहृदय पुरुष दूसरों से सहानुभूति करने और उनको प्रोत्साहन देने में तो कभी त्रुटि नही करते, परन्तु स्वयं अपने को इस कृपा का पात्र नहीं समझते। उन पर कोई विपत्ति आ पडे; कोई असफलता उनका दिल तोड दे, तो वे अपने को साहस प्रदान करने का कष्ट नही करते। वे अपने लिए वैसे ही उत्साहवर्द्धक शब्दों का प्रयोग नही करते, जिन से वे दूसरों का ढाढस बाँधते है। वे स्वय अपने को धीरज रखने और सकट मे पुरुषार्थ करने का उपदेश नही करते। कभी नहीं कहते कि 'इस बार पराज्य हो गई, तो क्या हुआ। मैं जान लगा कर लड़ा तो सही! इस असफलता से लाभ उठाऊँगा और उस समय तक लड़ता रहूँगा, जब तक विजय प्राप्त नही कर लेता। इससे भी ज्यादा दुर्भाग्य की बात यह है कि ये लोग अपनी सहायता और प्रोत्साहन की बजाए उलटा अपने को हतोत्साहित करते हैं। ये लोग असफलता पर अपने को कोसते हैं; कोई दुर्घटना हो जाए, तो आँसू बहाने बैठ जाते है। ये कभी हानि का प्रति-कार करने पर उद्यत नही होते, बल्कि जरा सा विघ्न पड जाने पर अपने को यह परामर्श देते है कि अब सफलता के लिए सघर्ष करना व्यर्थ है। इस प्रकार ये अपने विनाश को निकटतर लाते हैं।

संदेह नही कि ये सज्जन जो इस प्रकार का आचरण करते हैं, ऐसा अज्ञानतावश करते है। यदि उन्हे ज्ञात हो जाए कि ऐसे संकटमय अवसरों पर अपना प्रोत्साहन भी उतना ही आवश्यक होता है, जितना कि दूसरो का, तो वे ऐसे आत्महत्यासदृश आचरण के अपराधी कभी न बने। प्रश्न यह है कि ऐसी घातक अज्ञानता को रहने ही क्यो दिया जाए ?

यदि आप मनुष्य मात्र से अन्याय नही करते, तो आपका मानवतावाद वस्तुत. प्रशंसनीय है। मनुष्य वही है जो दूसरो के काम मे आए। यदि वह किसी की सहायता न कर सके, तो कम से कम इतनी सावधानी तो जरूर बरते कि उसके कारण किसी

की हानि न हो। परन्तु मैं आपसे थोड़ी सी और उदारता की माँग करता हूँ। जहाँ आप दूसरो से अन्याय नही करते, वहाँ स्वय अपने पर भी तो अत्याचार न करें। यदि आप अपनी अधिक सहायता नही कर सकते, तो अपने को कम से कम उतनी कृपा का अधिकारी तो समझे ही, जितनी कि आप दूसरो पर करते है। अर्थात अपने को आकरण ही नुकसान तो न पहुँचाएँ। यदि आप अपना प्रोत्सासन नही कर सकते, तो कम से कम अपने को सर्वदा हतोत्मासित भी तो न करते रहे।

'अपना सम्मान स्वय कीजिए' एक प्रसिद्ध उक्ति है। इस प्रकट सत्य का खंडन कभी नही किया जा सकता। मनुष्य मात्र को यह परमार्श इमलिए दिया गया है कि जव वह स्वय अपना सम्मान करेगा, तो अन्य लोग भी उसे सम्मान दृष्टि से देखेंगे। यही सिद्धांत प्रोत्सान के विपय में भी सत्य है। अर्थात आप को सर्वदा अपना प्रोत्साहन करते रहना चाहिए, ताकि लोग आप का उदाहरण दे कर कहा करे कि देखो, कितना साहसी पुरुष है। इस चर्चा से स्वय आपका साहस और उत्कृष्ट होगा और लोग भी आपका अनुमरण कर अपना साहस वनाए रखने की चेष्टा करेंगे।

मेरे एक मित्र हर वक्त अपना दुखडा रोया करते थे। एक दिन कहने लगे कि "सहानुभूति तो इस युग मे रही नही। अब कोई किसी के दुःख दर्द मे भाग नही लेता। अब तो स्वार्थपरता कटुता और कठोर हृदयता का चलन है। अब तो किसी के मुँह से सांत्वना के दो शब्द भी सुनने को नही मिलते। इसका कटु अनुभव मुझे इन्ही दिनो मे हुआ। यह तो आप जानते ही हैं कि मैं आजकल आर्थिक कठिनाइयो मे घिरा हुआ हूँ। इसलिए जब घर बैठे-बैठे जी घबरा जाता है, तो काफीहाउस में जा बैठता हूँ। परन्तु दुःख वहाँ भी पीछा नही छोड़ता। मित्र-गण व्यग्य-

बाण चलाते हुए आते है। वे मेरा ढाढस नहीं बंधाते, मुझे दृढ़ रहने का परामर्श नही देते, बल्कि मेरी दरिद्रता और विश्वास का उपहास करते हैं। इससे मेरी पीड़ा कई गुणा बढ जाती है। जब वह अपनी आत्मबीती सुना चुके, तो मैंने उनसे कहा कि वह अपने मित्रों को कोसने की बजाए स्वय अपने को दोषी समझें, क्योंकि जब आप स्वयं अपने को प्रोत्साहन नही देते, तो किसी को क्या पड़ी है कि आपको सांत्वना देने मे अपना समय नष्ट करे। इसके बाद मैंने उन्हे परामर्श दिया कि वह मित्रों मे पीड़ित 'शरणार्थी बनकर जाया करे, हर वक्त लोगो से यह आशा न रखे कि वे आपका बोझ अपने कधो पर उठाएगे। साधारणत: किसी पर प्रकट नही होने देना चाहिए कि आप पीड़ित और असहाए है। विशेषकर जब आप मित्रमन्डली मे जाएँ, तो अपने दुखडों को घर पर ही छोड़ जाएँ। यदि आप ऐसा करेंगे, तो आप को मित्रों की निर्दयता की शिकायत नही रहेगी। और यदि आप इतने ही शोकातुर है कि मित्रो के सामने प्रसन्नचित्त रहना आपके बस की बात नही, तो फिर आप मित्रमडली का वातावरण दूषित करने की बजाए किसी उद्यान मे जा बैठे, जहाँ फूल खिले हों, शीतल वायु मद गति से चल रही हो, और पक्षियो का हल्का कलरव सुनाई दे रहा हो वहाँ किसी एकान्त स्थान पर बैठकर फूलो की सुगधि का आनन्द लीजिए, स्वयं को उस सुन्दर वातावरण मे तल्लीन कर दीजिए, दु:ख और निराशा के विचारों को अपने मन से दूर कर दीजिए, और उनके स्थान पर आशा और प्रसन्नता के विचारों का बीजारोपण कीजिए। यह काम कठिन जरूर है, पर एक दम से असम्भव नही, बशर्ते कि आप धैर्य-दृढता की सहायता ले। स्मरण रखिए, आप शोक मय विचारों से उस समय तक मुक्ति-प्राप्त नही कर सकते, जब तक कि आप इच्छाशक्ति से काम न ले और अपने को

प्रोत्साहन न दे।

अपने को प्रोत्साहन देने का केवल यही लाभ नही होता कि मनुष्य दु.ख और शोक से मुक्ति प्राप्त कर लेता है, वल्कि इससे आत्मविश्वास की भावना को भी वल मिलता है। मनुष्य को विश्वास हो जाता है कि वह कठिनाइयों पर कावू पाने की शक्ति रखता है, उसमे परिस्थितियो को अनुकुल वनाने मे और संघर्ष करने का सामर्थ्य है, यह मनोवृत्ति व्यक्तिगत उन्नति के लिए परमावश्यक है इसलिए जव कभी आप पर विपत्तियो का पहाड़ टूट पडे, और आपके कदम डगमगाने लगे, तो उसी क्षण अपनी महत्ता का स्मरण कीजिए। इस अनुभव को पुनर्जीवित कीजिए कि आप इस धरती के विजेता मनुष्य हैं, आपको कोई परास्त नही कर सकता। इस विचार से आप का साहस पुनर्स्थापित हो जायेगा. आपका अपने पर फिर से विश्वास हो जाएगा। जब आप कठिनाइयो के आगे नत होने की वजाए वीरतापूर्वक उनसे दो-दो हाथ करने के लिए आगे वढेगे। और आप यह देख कर स्वयं चकित रह जाएँगे कि आपके इस संकल्प मात्र कठिनाइयों का किस तरह प्रभाव होता है। कठिनाइयाँ उसी समय तक भयानक होती है, जव तक आप उनसे डरते रहें। ज्यों ही आप उन्हे तुच्छ समझ कर पाँव तले रोदने के लिए आगे वढेगे, आपका पलड़ा भारी हो जाएगा और कठिनाइयाँ एकाएक स्वयं मेव समाप्त होती जाएँगी।

अपने को प्रोत्साहन कैसे दिया जा सकता है, और चारों ओर निराशा की घटाएँ छाई हो, तो आशा की किरण कैसे देखी जा सकती है? इसके लिए कुछ सुझाव प्रस्तुत किए जाते हैं। परन्तु उनसे लाभ तभी उठाया जा सकता है जब आप 'कर्म-मार्ग' पर अग्रसर हों। केवल सुन्दर विचारो और उत्तम सुझावों से कोई उद्देश्य कभी सिद्ध नही हुआ, न भविष्य मे होने की

सम्भावना है। इस लिए जो भी सुझाव रखे जाएँ, उन्हे कार्यान्वित करने का दृढ़ संकल्प कर लीजिए। फिर यह सम्भव नही कि आप इस अभियान में सफल न हों।

यदि आप दुनिया में पुरुषोचित जीवन व्यतीत करना चाहते हैं; यदि आपकी इच्छा है कि विकटतम परिस्थितियो में भी आपके कदम न डगमगाएँ, तो फिर आप अपने को कभी भी तुच्छ, नगण्य, निर्बल और असहाय न समझिए। आप अपने मन व मस्तिष्क को इस विश्वास से पुष्ट बनाइए कि आप हर मुश्किल, हर विपत्ति और हर सकट का मुकावला कर सकते है। केवल मुकाबला ही नही कर सकते, वल्कि उन्हे अपने सामने से हटा भी सकते है। याद रखिए, मनुष्य साधारणतः अपनी शक्ति और योग्यता के एक अल्प अश से हो काम लेता है। इस बात को बार-बार दुहराइए, ताकि आपको विश्वास हो जाए कि अभी आपके पास अतिरिक्त शक्ति का भंडार मौजूद है। जब आप किसी महत्वपूर्ण समस्या को हल करने में लगे हो, अथवा कोई कठिन काम सम्पन्न करना चाहते हो, तो तत्काल यह सकल्प कीजिए कि आप इस समस्या को हल करने अथवा कार्य को सम्पन्न करने के लिए इसके अतिरिक्त शक्ति-भडार से काम लेंगे, जो अभी तक व्यवहार मे नही आया। इसके बाद आप अपनी सफलता का विश्वास रखिए।

महापुरुषों की जीवनियों का अध्ययन भी आत्मविश्वास को सुदृढ़ बनाने और अपने को प्रोत्साहन देने के लिए उपयोगी होता है। जब हम साहसी और पराक्रमी पुरुषो के जीवन-वृत्त का अध्ययन करते है तो हमे ज्ञात होता है कि दुनिया मे कोई कठिनाई ऐसी नही, जिसका हल न निकाला गया हो। हम यह भी अनुभव करते है कि हमे दु.ख और पीडा सहन करनी पड़ता है, तो यह कोई नयी बात नही है। मनुष्यमात्र सृष्टि के पहले दिन

से ही विपत्तियों का मुकाबला करता आ रहा है, और उसने कभी पराजय स्वीकार नही की।

अपने को प्रोत्साहन देने के लिए उत्साह वर्द्धक वाक्यों की पुनरावृत्ति भी उपयोगी होती है। "जाको राखे साइयाँ" साहस है, तो आस है, "सफलता मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है" आदि वाक्यो को आत्मसात कर लीजिए। उन्हे अपने मानस पटल पर इस तरह अकित कर लीजिए कि निराशापूर्ण विचारों की बाढ़ भी उन्हे मिटा न सके। उन्हे केवल कठस्थ ही न कोजिए बल्कि उनके अभिप्राय: को अपने अत:करण का अंग बना लीजिए, उनकी सत्यता पर पूर्ण विश्वास कीजिए। एक नोट बुक रखिए, जिममें प्रसिद्ध लेखको और कवियो की उत्साहवर्द्धक सूक्तियाँ और सुभाषित लिखते जाएँ। इन्हे प्राय: पढा कीजिए, यहाँ तक कि वे आपके अचेतन मन मे घर कर जाएँ। जब कभी आप अनुभव करे कि पतन के विचार आप पर आक्रमण करने लगे है, तो इन सूक्तियों को आवृत्ति कीजिए। इन्हें बार-बार दुहराने से आप की नसो मे नवजीवन की स्फूर्ति का संचार होगा।

भय और आतंक

"मैं बालपन मे बड़ा डरपोक था। मैं उस पर लज्जा भी अनुभव करता था। मैं कई वर्ष तक कोई काम न कर सका, क्योंकि मैं समझता था कि दूसरे लोग हर काम को मुझसे बेहतर जानते है। दरअसल मुझ मे आत्म विश्वास का अभाव था। और यही मेरा दुर्भाग्य था। मै स्वय को संसार का सब से बड़ा मूर्ख और अज्ञानी व्यक्ति समझता था।" ये विचार जार्ज बर्नार्ड्शा के है, उस विश्वविख्यात कवि और नाटककारशा के, जिसने अपनी अमर कृतियो मे अपने विचारो की अभिव्यक्ति अपूर्व निर्भयता के साथ की है। उसने जिन विचारो का प्रचार किया, उनका एक बडा अश उसके देशवासियो की रुचि के अनुसार भी नही था। फिर भी वह बीसवी शती का सर्वोत्तम अंग्रेजी साहित्य-कार के रूप में प्रतिष्ठित हुआ। अपने को मूर्खतम व्यक्ति समझने वाला बर्नार्डशा जीवन के अंतिम दिनो वर्तमान युग के महापुरुषों में गिना गया।

बर्नार्ड्शा की तरह एक और निर्भीक विचारक और स्पष्ट भाषी दार्शनिक बर्टरन्ड रसल भी स्वीकार करता है कि जब उसकी अवस्था तेरह-चौदह वर्ष की थी, तो वह बहुत ही लज्जालु और डरपोक था। वह लिखता है कि एक बार ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री ग्लेडस्टोन् हमारे यहाँ पधारे। उस समय घर मे मेरे सिवा

और कोई नही था । मैं इतना आतंकित और विह्वल हो चुका था कि उनके सामने जाने की कल्पना से ही मेरे प्राण उडे जा रहे थे । आखिर जब मुझे विवश होकर उनके सम्मुख उपस्थित होना पड़ा, तो मैं उनके एक भी प्रश्न का उत्तर न दे सका ।" यही रसल् बाद में अपनी स्वतंत्र विचार पद्धति और नैतिक साहस के लिए प्रसिद्ध हुआ । और आज भी जब इसकी अवस्था ६० वर्ष के लगभग है, वह किसी न किसी नए आन्दोलन का नेतृत्व सँभालता रहता है । जाने कितनी बार उसे अपने विचारों के दडस्वरूप कारावास की याचना सहन करनी पड़ी है । परन्तु उसने कभी इतनी परवाह नही की । एक बार जेल से रिहा होने पर उसने लिखा कि 'जेल मे मुझे जो शान्ति मिली, वह और कही उपलब्ध नही हो सकती ।'

अधिनायकों में मसोलिनी ने अपनी आत्मकथा में साफ-साफ लिखा है कि भाषण करने से पहले उसे अपनी स्वाभाविक भीरुता पर विजय प्राप्त करनी पड़ती थी । इसी प्रकार सरोजनी नायडो ने भी स्वीकार किया है कि "मै बचपन मे अपनी बाह्य कुरूपता के कारण हीन-भावना से ग्रस्त थी । अधिक स्पष्ट शब्दो मे यो कहा जा सकता है कि मै भीरु थी ।" सरोजनी नायडो भारत की सर्वश्रेष्ट महिला वक्ता और कवित्रियों के रूप मे प्रसिद्ध हुई । इनसे बढकर स्वय राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने अपने अनुभवो मे लिखा है कि जब वह पहली बार न्यायालय मे वकालत करने के लिए खडे हुए, तो उन के मुँह से एक भी शब्द न निकला इस पर उन्होने अपने मवक्किल से लिए हुए फीस के रुपये तत्काल लौटा दिए परन्तु देखने की बात यह है कि गाँधीजो जैसे परम वीर पुरुष भी प्रारम्भ मे कितने भीरु थे ।

राजनीति के अलावा दूसरे क्षेत्रों में भी ऐसे व्यक्तियों का

अभाव नही है, जो किशोरावस्था मे लज्जालु, सकोची और हीन भावना-ग्रस्त रहे हैं, परन्तु बाद में उन्होने सदैव अदम्य साहस का प्रदर्शन किया। ऐसा लगता है कि शुरु मे भीरुता का परिचय देने वाले ही आगे चल कर विशेष साहसी सिद्ध होते हैं। सम्भवतः इसका कारण यह है कि अत्यधिक अनुभवशील होने के कारण वे शीघ्र ही समझ लेते है कि उन्हे जिस चीज से डर लगता है, उसका वास्तव मे कोई अस्तित्व नही है। और एक बार जब उन्हें विश्वास हो जाता है कि डरने का कोई कारण नही है, तो वे बडी आसानी के साथ अपनी प्रतिक्रियाओ पर काबु पा लेते हैं।

इतनी बात स्वयंसिद्ध है कि भय आतंक, भीरुता और हीन भावना किसी असाध्य रोग का नाम नही है। इस बीमारी से बड़े-बड़े महारथी भी बचपन और युवावस्था मे ग्रस्त रहे है। परन्तु ज्यों-ज्यों उनकी उम्र, ज्ञान और अनुभव की वृद्धि हुई, उन्होने इस निर्मूल भावनाओ से मुक्ति प्राप्त कर ली न केवल यही, बल्कि उन्होने ऐसे-ऐसे महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न किए कि दुनिया उनकी वीरता और साहसिकता पर चकित रह गई।

अब प्रश्न यह है कि यदि भय और घबराहट पर काबू पाया जा सकता है, तो इन्सानो की बहुत बडी सख्या उनसे मुक्ति लाभ करने में कठिनाई क्यों अनुभव करती है? मनोविज्ञान के विशेषज्ञो का कहना है कि भय और आतक के विषय मे वास्तविक कठिनाई यह है कि लोग इन्हे 'स्वाभाविक' समझते है, अर्थात जिस प्रकार बचपन मे अविकसित बुद्धि के कारण वे किसी बात से डरते थे, उसी प्रकार वयस्क होने पर भी डरते रहते है। ऐसे लोग शारीरिक दृष्टि से वयस्क हो जाने पर भी मानसिक और भावनात्म दृष्टि से बालक ही बने रहते है। वे जब जीवन क्षेत्र मे प्रवेश करते है, तो बचपन की आदत उनका

पीछा नही छोड़ती। उन्हे एक-एक पग पर अज्ञात भय के कारण कठिनाई अनुभव होती है। यदि वे तीक्ष्ण बुद्धि वाले हो,तो उन्हे शीघ्र ही इन कठिनाइयों की अस्तित्व-हीनता का ज्ञान हो जाता है, और वे उन की ओर से निश्चित हो जाते है। अन्यथा वे जीवन-सग्राम में वीरतापूर्वक भाग नही ले सकते, और परिणा-मत उन पुरस्कारो से वचित रहते है, जो उनसे भी कम योग्यता रखने वाले लोग केवल अपने साहस और आत्मबल के सहारे प्राप्त कर लेते है।

आधुनिक मनोविज्ञान के विशेषज्ञ आत्मज्ञान, अर्थात अपने अतीत के अध्ययन और निरीक्षण पर इस लिए जोर देते है ताकि मनुष्य को यह अनुभव हो सके कि उसकी असफलता का दायित्व उसकी परिस्थितियो और कठिनाइयो से ज्यादा स्वय उसके विचारो और मिथ्या धारणाओ पर है। और यह कि वह स्वय अपना सुधार करके अपनी परिस्थितियो का भी सुधार कर सकता है।

यदि आप भय और आतक अथवा पराजय-वादी मनोवृत्ति का शिकार है, और किसी महत्वपूर्ण कार्य मे केवल इस डर से भाग नही लेते कि कहीं आपको असफलता का मुँह न देखना पड़े, तो आप अवश्य ही दु खी और शोकग्रस्त रहते हैं। आप इस मनोदशा के कारणो का पता लगासकते हैं। उसके लिए आपको अपने अतीत का सिंहावलोकन करना चाहिए। आप अपने वच-पन की अवस्थाओ और घटनाओ को स्मरण कीजिए। यदि आपने निर्पेक्ष होकर अपने अतीत की पडताल की, तो आप पर प्रकट होगा कि आप आज भरी सभा मे वोलने का साहस इस-लिए नही करते, कि जव आप प्राथमिक शिक्षालय में पढते थे, और कभी अपने सहपाठियो के सामने वोलना चाहते थे, तो अध्यापक आप को टोक दिया करते थे, और सहपाठी आप पर

हँसा करते थे। या यदि आप हीनभावना से ग्रस्त है, तो केवल इसलिए कि माता आप से दूसरे बच्चो की अपेक्षा कम प्यार करती थी, और आपके बडे भाई-बहन बात-बात पर आपको पीटा करते थे। यदि आप सकटो का सामना करने मे डरते है, तो उसका एक कारण यह हो सकता है कि आप अपने माता-पिता के लाड़ले रहे होगे, और आपने बचपन मे सकट और विपत्ति का नाम तक न सुना होगा। यदि आप जीवन-क्षेत्र में अपना मार्ग स्वय बनाने की कला से अनभिज्ञ है, तो उसका कारण यह है कि बचपन में माता-पिता ने आपकी हर कामना पूरी की और आपने जो कुछ भी चाहा, वह आपको विना प्रयास के मिल गया। साराश यह कि जब आप अपने अतीत का ध्यानपूर्वक विश्लेषण करेंगे, तो अपने वर्तमान दोषो का सम्बध बाल्यावस्था की किसी आदत या घटना से जुडा हुआ पाएँगे।

इस आत्म-निरीक्षण से आप पर यह तथ्य स्पष्ट हो जाएगा कि यदि आप आज कठिनाइयों से डरते है, तो उनका कारण यह नहीं कि उन पर विजय प्राप्त करना वास्तव मे बडे जोखिम का काम है, अथवा आप इनपर काबू पाने की योग्यता नही रखते, बल्कि असल कारण एक अस्पष्ट सा भय है, एक मिथ्या धारणा जिसने बचपन मे उस समय की परिस्थितियो के अनुसार जन्म लिया था, परन्तु जो अब बिलकुल निराधार और निरर्थक होकर रह गई है। इस तथ्य को समझ लेने के बाद आप अपना सुधार बड़ी सहजता से कर सकते है। अब आप बच्चे नहीं रहे, जो किसी के सहारे के अपेक्षी हो, बल्कि अब आप स्वय दूसरो के लिए सहारा है। इस प्रकार आप अपनी वास्तविकता से अवगत होकर अपने पर विश्वास करने के योग्य बन सकेंगे और अपने जीवन का निर्माण कर सकेगे।

बाल-सुलभ भावनाओं के अतिरिक्त समाज के डर से भी

मनुष्य बहुधा अपने को पहचानने में असमर्थ रहता है। "यह बात अच्छी नहीं, क्योंकि लोग इसे अच्छी दृष्टि से नही देखते या अमुक काम किया गया, तो लोग क्या कहेंगे", आदि इस प्रकार के विचार भी मनुष्य को वहुधा अपनी पसन्द का काम करने से रोक देते हैं। दूसरो की भावनाओ और समाजिक मर्यादाओ का आदर करना अच्छी बात है। परन्तु इस विषय मे मध्यम मार्ग को अपनाना ही उचित होता है। समाज मे रहते हुए समाज के केवल उन्ही नियमो का पालन करना चाहिए, जो देशोन्नति के लिए हितकर हो, और आत्मज्ञान और आत्मोत्थान के मार्ग में वाधक न हो। समाज मे वहुत सी रूढ़ियाँ और कुप्राथाएँ भी चलती हैं, और व्यक्ति पर कुछ ऐसे प्रतिवन्ध भी रहते हैं, जिनका पालन किसी दृष्टि से भी श्रेयस्कर नही हो सकता। ऐसे नियमों अथवा प्रतिवन्धो को शिरोधार्य नही करना चाहिए, समाज की कुछ परम्पराएँ पतनोन्मुख होती है। ऐसी परम्पराओ का अनुसरण कैसे प्रशसनीय हो सकता है ? यदि समाज उन्नतिशील भी हो, तो भी विना सोच-विचार के भेड़चाल चलने में कोई बड़ाई नही है। लकीर के फकीर वनकर आप अपने भीतर के महान पुरुष को कभी जागृत नही कर सकेंगे। यही वात परम्पराओं के विषय मे भी सही है। एक बच्चे को वचपन ही से परम्पराओं के सम्मान और अनुसरण का पाठ पढ़ाया जाए, तो वह सियाना होकर बुराई को देखते हुए भी कुछ बोल नहीं सकता। उसके विरुद्ध प्रतिवाद नही कर सकता। ऐसी अवस्था में वह कोई मौलिक वात कैसे पैदा कर सकता है ?

कुछ लोग अपने जीवन की दशा नही वदल सकते, कोई नया विचार प्रस्तुत नही कर सकते, अथवा किसी अच्छे सिद्धांत को स्वीकार करने मे संकोच करते हैं, क्योंकि वे पुराने विचारों और अन्धविश्वासो का परित्याग करना नही चाहते, उन्हे उन विचारों

और सिद्धांतों के मिथ्या होने का विश्वास हो भी जाए तो भी वे उनसे चिमटे रहते है, ताकि कोई यह न कहे कि यह लोग भ्रष्ट हो गए है, और समाज मे बैठने योग्य नही रहे है।

अब इस आइने में अपना चेहरा और उसकी विशेषताओ को देखिए। यदि आपको एक ऐसे मनुष्य का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है, जो आत्मविश्वासी, वीर और साहसी है, जो अपने भाग्य का स्वयं निर्माता है, जिसके चेहरे पर भय आतक का चिन्ह तक नही, जो 'असम्भव' शब्द से अनभिज्ञ है, जो पराजय स्वीकार नही करता, हथियार नही डालता, जो आखिर दम लडता है, जो स्वयं को एक महान शक्ति का साझीदार समझता है,और अपना पूरा हक लिए बिना समझौता नही करता, तो फिर आपको अपने पर गर्व करने का पूर्ण अधिकार है। और मुझे विश्वास है कि आप अपने लक्ष्य तक पहुँच कर ही रहेगे, और मनुष्य होने के नाते आप पर जो दायित्व है, उसे पूरा करके ही रहेगे।

परन्तु यदि यह चित्र किसी ऐसे इन्सान का है, जो देखने में तो जवान है, परन्तु उसके चेहरे पर धैर्य-दृढता के लक्षण नही; उसकी रगों मे जीवन का गर्म लहू तरगित नही, जो भावनाओ और विचारों की दृष्टि से अभी अबोध बालक ही है, जो एकान्त प्रिय है ; किसी सभा-समाज में जाता है, तो सबसे अलग-अलग अंतिम पंक्ति में बैठता है, जो दूसरों के सहारे जीना चाहता है, और सहारा न मिले, तो हताश हो जाता है—यदि यह चित्र आपका है, तो आइना तोड़ने की कोशिश न कीजिए, और मनोवैज्ञानिको को बुरा भला न कहिए। यदि आइने मे आप को किसी हारे हुए दुर्दशा-ग्रस्त मानव की आकृति दिखाई देती है, तो यह आइने का कसूर नही, आइने का तो काम ही यह है कि वह आपको आपकी वास्तविक आकृति दर्शादे। इसलिए आइने को शत्रु समझने की बजाए अपना मित्र समझिए, ऐसा मित्र, जो

आपको धोखा नही देता ; आप झूठ नही बोलता । इसके सिवा आपको और कौन बतलाएगा कि आप अपनी हीन भावनाओं और भ्रांत अचारण से एक अच्छे भले इन्सान को विनाश मार्ग पर लिए जा रहे है।

मनोविज्ञान के ज्ञाताओ ने यदि आपको अपने अतीत का दर्पण देखने का परमार्श दिया है, तो इसलिए नही कि आप लज्जित और दुखित हों, वल्कि केवल इसलिए कि आप अपने सम्वन्ध मे यथार्थ से परिचित हो जाएँ। जीवन का रहस्य जानने वाले ये विशेषज्ञ आप को दुःख देकर खुश नही होते, वल्कि वे आपके सहायक और पथदर्शक वनना चाहते है। वे आपको वताते है कि जीवन-तरणि को मझधार से निकाल कर सफलता तट तक कैसे ले जाया सकता है। इसलिए उन से झगडने की वजाए उनका सहयोग लीजिए। और उनकी सहायता से इन खंडहरो पर, जो आपको अपने अतीत के दर्पण में दिखाई देते है, भव्यशाली नए भवन का निर्माण कीजिए।

इस लेख के प्रारम्भ मे मैंने कुछ प्रसिद्ध व्यक्तियों के उदाहरण देकर यह सिद्ध करने की चेष्टा की है कि भय और आतक तथा हीन-भावना का प्रतिकार किया जा सकता। यदि आप चौवीसो घटे भयभीत रहते हैं, और जरा से कष्ट पर हतप्रभ हो जाते है, तो अनुसधान कीजिए कि आप पर इस मनस्थिति का आक्रमण कव और कैसे हुआ। और जव आप अपने अतीत पर दृष्टि पात करेगे, तो आप पर प्रकट होगा कि इसका उत्तरदायी आपका वचपन है। यह निश्चय कर लेने के वाद अपने से कहिए, 'पर यह तो उन दिनो की वात है, जव मैं निर्वल और अवोध वालक था। अव तो मै वयस्क हूँ, सवल और सवुद्धि हूँ। अव मै अच्छे-वुरे का विचार कर सकता हूँ। फिर मै क्यो अपने को हीनतर और तुच्छ समझुं। इस मौखिक प्रयास के वाद आप

क्रियात्मक प्रयास भी कीजिए। मित्रमन्डली में मन की बात खुल कर कहिए। जब किसी सभा में बैठिए, तो वार्तालाप और विचार-विनिमय में भाग लीजिए। अपना मत नि.संकोच व्यक्त कीजिए, आलोचना से भयभीत न होइए। मित्रों और विपक्षियो से अकारण ही आतकित रहने की आदत पर सयत्न काबू पाइए। यदि आपके नगर में कोई विचार गोष्ठि है, तो उस के सदस्य बन जाइए और वाद-विवाद मे खुल कर हिस्सा लीजिए शुरू-शुरू मे आपको अवश्य कुछ भय अनुभव होगा, परन्तु एक —दो बार की चेष्टा के बाद ही आप यह देख कर स्वय आश्चर्य करने लगेंगे कि दूसरों को अपनी बात सुनाना कितना सहज और स्फूर्तिदायक होता है।

प्रसिद्ध सेनापति डग्लस् मैकार्थर ने लिखा है कि वीरता का तात्पर्य यदि यह है कि भय और डर का अनुभव तक न हो, तो फिर मैंने आज तक कोई वीर पुरुष नही देखा। ससार मे शायद ही कोई इन्सान हो, जो भय से पूर्णतया मुक्त हो चुका हो। हाँ, वह मनुष्य अवश्य शूरवीर है, जो भय के बावजूद अपना अभियान जारी रखने का सामर्थ्य रखता हो, "इस तथ्य को हृदयंगम कर लीजिए, और संकट का मुकाबला करते समय अपने सामने रखिए। आप में और 'बडे लोगो, मे इसके सिवा और कोई अतंर नही कि उन्होंने युवावस्था में प्रवेश करने के बाद बालपन की आदतो का परित्याग कर दिया, जब कि आप अभी तक उनके प्रभाव से मुक्त नही हो सके। आप अभी तक बच्चो की तरह डरते, बच्चों की तरह सोचते और बच्चो की तरह घबरा उठने है। आदमी उम्र की दृष्टि से जवान हो सकता है, परन्तु जरूरी नही कि वह भावनाओ और विचारो की दृष्टि से भी परिपक्व हो चुका हो। इसलिए आप सबसे पहले अपने इस दोष को दूर कीजिए, और पूर्णदर्शी बनिए। जीवन को कार्य न

समझिए, अपने को क्षुद्र और निर्बल न जानिए। अपने जीवन उद्देश्य से अवगत होइए, और उसकी पूर्ति के साधन जुटाइए।

मनोविज्ञान के विशेषज्ञो का सर्वसम्मत निर्णय है, कि मानवी जीवन का उच्चतम लक्ष्य "मनुष्यता की पूर्ति है" और इस लक्ष्य की प्राप्ति तभी हो सकती है जब मनुष्य दृष्टिसम्पन्न हो। ऐसे मनुष्य की परिभाषा यों की गई है कि वह अपने मस्तिष्क से काम लेता है, अपने को क्षुद्र और निर्बल नही समझता और जीवन से जाने अनजाने निराश नही होता। इसलिए यदि आप सफलता के अभिलाषी है,तो दृष्टिसम्पन्न बनिए। किसी भी उद्देश्य की पूर्ति और किसी भी प्रयास मे सफलता निर्भर करती है आत्मविश्वास पर। परन्तु जिस मस्तिष्क पर भय का साम्राज्य होगा, वहाँ आत्मविश्वास के लिए स्थान कहाँ ? इसलिए यदि आप वर्तमान दुर्दशा, दरिद्रता और दुश्चिता से मुक्ति प्राप्त करने के इच्छुक हैं, तो सबसे पहले भय और आतक पर विजय प्राप्त कीजिए। और इसका एक मात्र उपाय यह है कि जीवन सग्राम मे क्रियात्मक भाग लीजिए। अपने को सबल समझिए, अपनी स्थिति और योग्यता का मूल्यांकन कीजिए। अपनी त्रुटियों और दोषो का सुधार कीजिए और एक-एक पग आगे बढ़ने की पद्धति अपनाइए। कठिनाइयो से कभी न डरिए, क्योंकि डर कर आप उन से बच नही सकते। संकटों का सामना कीजिए, अपनी योग्यता और क्षमता के अनुसार अपना लक्ष्य निर्धारित कीजिए और उस तक पहुँचने के प्रयत्नों में लग जाइए। यदि आपका लक्ष्य ठीक है, तो आपके सफल न होने का कोई कारण ही नही हो सकता।

स्वभाव में परिवर्तन

आत्मविश्वास की पुनर्स्थापना के लिए स्वभाव में परिवर्तन का बड़ा महत्व है। कुछ लोग अपनी वास्तविकता से परिचित होते है। उन्हे पता होता है कि वे अपने पर विश्वास करके बड़ी से बड़ी सफलता प्राप्त कर सकते है। परन्तु स्वभाव और प्रवृ-तियाँ उनकी उन्नति मे बाधक हो जाती है। अपनी कुछ आदतो के कारण वे उन्नति की कोई योजना ही तैयार नही कर पाते। और यदि इस कठिनाई को पार कर भी जाएँ, तो योजनाओ को कार्यान्वित नही कर सकते।

मै एक लेखक को जानता हूँ, जिसने आज से बीस वर्ष पूर्व निबन्ध लेखन आरम्भ किया था। उसके लेख देश की उच्च कोटि की पत्रिकाओ में प्रकाशित होते थे, और उन्हे बड़े आदर की दृष्टि से देखा जाता था। उन दिनो मे, जब कि अभी हमारे देश मे पत्र-पत्रिकाओ की ओर से पारिश्रमिक देने का रिवाज नहीं पड़ा था, उस से कितने ही सम्पादक उचित पारिश्रमिक के प्रस्ताव के साथ लेख भेजने का अनुरोध किया करते थे। उस को अपनी योग्यता पर गर्व भी था, और अपनी लेखनी पर अटल विश्वास था। उसके आत्मविश्वास का कुछ अनुमान इस घटना से लगाइए कि एक बार उसने एक पत्रिका की लेख प्रतियोगिता मे भाग लेते हुए अपने मित्रो को पहले ही से कह दिया था कि स प्रतियोगिता मे प्रथम पुरस्कार उसका होगा और वास्तव

में ऐसा ही हुआ। जब पुरस्कार पाने वालों के नाम प्रकाशित हुए, तो सबसे ऊपर उसी का नाम था।

जिस लेखक का प्रारम्भ इतना आशावर्द्धक हो, उसका अंत कितना भव्य होना चाहिए, यह आप स्वयं सोच सकते हैं। परन्तु आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि इस लेखक को आज भी बहुत कम लोग जानते हैं, वह बीस वर्ष तक लेख लिखते रहने के बावजूद प्रसिद्ध लेखक नही बन सका। आज उसके घनिष्ठ मित्रों के सिवा और कोई भी नही जानता कि उसे बीस वर्ष पहले भी अपने लेखों का परिश्रमिक मिलता था।

इस लेखक की इस निराशाजनक स्थिति का कारण क्या है? एक शब्द मे कहना हो, तो यह उसका आलस्य है। वह स्वभाव से ही आलसी और आरामतलब है। जब उसका एक लेख किसी पत्रिका मे प्रकाशित हो जाता था, तो फिर महीनों तक वह नया लेख लिखने का ख्याल भी नही करता था। इस बीच किसी सम्पादक का पत्र मिलने पर वह जी कड़ा करके कुछ बैठ भी जाता, तो नया लेख तीन-चार महीने से पहले पूरा होने मे नही आता था। कभी-कभी तो वह साल-साल भर तक एक पंक्ति भी नही लिखता था। सभी अच्छे लेखक कुछ लिखने के लिए नई सूझ की प्रतीक्षा करते हैं। परन्तु ऐसा बहुत कम होता है कि एक कुशल लेखक को साल भर तक कुछ सूझे ही नहीं। यह लेखक तो लिखने की बात सिरे से सोचता ही नही था। इसका परिणाम वही हुआ, जो हो सकता था। अर्थात वह आज भी वही है, जहाँ से चला था, जबकि उससे कही कम योग्य और अपरिपक्व लेखक देश के प्रतिष्ठित साहित्यकारों में गिने जाते हैं।

अभी पिछले दिनो एक पुराने जानकार से संयोगवश भेंट हो गई। पन्द्रह वर्ष पूर्व जब वह सेना मे भरती हुआ था, तो

उसकी चतुराई, असाधारण वोध-शक्ति, अपार साहस और आकर्षक व्यक्तित्व का विचार करते हुए मेरा विश्वास था कि वह पाँच-सात वर्षों में ही किसी ऊँचे पद पर पहुँच जाएगा। परन्तु मुझे यह देखकर वडा आश्चर्य हुआ कि वह दुर्दशा और निराशा की मूर्ति बना हुआ था। पूछने पर पता चला कि वह आजकल कोई भी काम नही कर रहा है, और कई हजार रुपये का देनदार है। बाद में उसके एक मित्र से सारी कहानी सविस्तार सुनने को मिली। उसने एक साल के भीतर ही सेना से त्याग-पत्र देकर अपने गाँव मे खेती बारी शुरू की थी। परन्तु शहरी आदतो के कारण वह खेती-बारी मे सफल न हो सका। इसपर उसने अपनी पैत्रिक भूमि को वेच, करीव के कस्वे में कपड़े की दुकान कर ली। परन्तु छ महीने भी वीतने न पाए थे कि दुकान बेच कर पुलिस में भरती हो गया। वहाँ किसी अफसर से झगडा होने पर नौकरी छूट गई, तो जीवन-बीमा का काम शुरू कर दिया। उसमें असफल हुआ, तो ऊनका कारवार आरम्भ किया। इसी ऊन के धन्धे मे उसे हजारों का घाटा हुआ। और तभी से ...जब मुझे यह व्योरा मालूम हुआ, तो उसकी दुरावस्था पर मेरा आश्चर्य दूर हो गया। मुझे सभझते देर न लगी कि वह अपने दुर्भाग्य के लिए स्वयं ही उत्तरदायी था। इसलिए नही कि उसने अपना जीवन वनाने की चेष्टा नही की, वल्कि इसलिए कि वह स्थिरमन नही था, और किसी काम को भी मन लगा कर नही कर सकता था।

दुनिया मे कितने ही लोग केवल इसलिए सफल नही होते और उन्हे अपनी योग्यता और चेष्टाओ का उचित पुरस्कार नही मिलता, क्योकि वे कुछ ऐसी आदतों के गुलाम है, जो उन्हे अपने पैरों पर खड़ा होने नही देती। उनका पालन-पोषण और शिक्षण सही ढ़ग से नही हुआ, इसलिए उनके चरित्र में कुछ ऐसी

त्रुटियाँ रह गई हैं, जो उनकी उन्नति के लिए बाधक बनी हुई है। उनका सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह है कि वे न तो अपनी आदतों को बुरा समझते हैं और न उनमे सुधार और परिवर्तन ही करने के लिए तैयार है।

कुछ लोग, जो जीवन के उद्देश्य और अपनी योग्यताओं का ज्ञान रखते है, और बड़े काम करना चाहते है, वे जब देखते हैं कि उनकी कुछ आदते उनकी प्रगति मे बाधक हो रही है, तो वे उनका परित्याग करने का सकल्प कर लेते हैं। परन्तु जब थोडे दिनो के प्रयत्न से आदत नही छूटती, तो वे उतावलेपन से समझ लेते हैं कि आदतो से पिंड छुडाना असम्भव है। इस प्रकार अपनी योग्यता का उचित मूल्य प्राप्त नही कर सकते।

जो लोग अपने को नही पहचानते, कोई उज्ज्वल ध्येय अपने सामने नही रखते, वे यदि आजीवन आदतो के गुलाम रहे, और इस दासता को किसी प्रकार भी अपमानजनक न समझे, तो ऐसे लोगो को सचमुच क्षम्य समझना चाहिए, परन्तु जो लोग अपने भविष्य को उज्ज्वल बनाना चाह: है, और यह भी जानते है कि वे अपने बाहुबल से स्वय अपना भाग्य बना सकते हैं, वे भी अपनी आदते बदलने में असफल क्यों हों, जबकि वे भली-भाँति जानते हैं कि सफलता-प्राप्ति के लिए आदतो मे परिवर्तन आवश्यक है, और वे उसके लिए क्रियात्मक प्रयत्न भी करते हैं? इसका उत्तर यह है कि उनमे से अधिकतर इस भ्राँति मे पड़े हुए हैं कि आदतो में परिवर्तन सम्भव ही नही। उन्होने कही से यह वच[illegible] सुन रखा है कि आदते इन्सान के साथ मरघट तक जाती हैं और वे इसे सत्य मानते है। इसलिए वे आदतों मे परिवर्तन की कोई कोशिश नही करते। बस जब कभी जोश मे आते हैं, तो बिना सोचे-समझे फ़ैसला कर डालते हैं कि अब आइन्दा क आदत से दूर का भी सम्बन्ध नही रखेगे। परन्तु जब उस

पर अमल करने का समय आता है, तो वे उसे कल पर टालते जाते है, अथवा अनिच्छा से डरते-डरते कदम उठाते है। आप जानते ही हैं कि जो काम डरते-सहमते किया जाए, उसमे कभी मनो-वांछित फल नही मिल सकता। ये लोग चूँकि असफलता के विचारों को अपने मन से निकाल नही सकते, इसलिए वे आदतों पर विजय पाने के प्रयास से विरले ही सफल होते है।

इसमें सदेह नही कि आदतों को वदलना अति कठिन है। परन्तु यह सोचना कि किसी आदत से पीछा छुड़ाया ही नही जा सकता, अज्ञानता तो है ही, आत्मवचना भी है। और इस प्रकार के तर्क केवल वही लोग उपस्थित करते हैं, जो अपनी किसी आदत को लोक-प्रसिद्ध कम्बल की भाँति स्वय ही नही छोड़ना चाहते। जो लोग आदतों की दासता से मुक्ति-लाभ करके अपने जीवन में उचित और हितकर परिवर्तन करना चाहते है, उन्हें सबसे पहले अपने इस सिद्धांत अथवा विश्वास को तिलांजली देनी होगी कि आदतों में परिवर्तन सम्भव ही नही है। इस शिला को तोड़ने के बाद उन्हे ध्यानपूर्वक यह देखना चाहिए कि कौनसी आदत उनकी उन्नति की सम्भावनाओ को अधकारमय बना रही है। इस अनुभव की उपलब्धि के लिए यथार्थवाद से काम लेना चाहिए, और अपने सब आचार-विचार की अच्छी तरह समीक्षा करनी चाहिए। कुछ आदते प्रकट में हानिकर नही दीखती, और नैतिक दृष्टि से भी उन्हे निन्दनीय नही समझा जाता, परन्तु जरा गहन दृष्टि डाली जाए तो पता चलता है, कि वे उन्नति की स्वाभाविक गति को मद करती हैं इसलिए उन्हें भी त्याज्य आदतो की सूची मे रख लेना चाहिए, जब यह सूची तैयार हो जाए, तो नई आदतो से शुरू करके धीरे-धीरे पुरानी आदतों तक पहूँचना चाहिए, और एक वक्त में अपना सारा ध्यान किसी एक आदत विशेप को छोड़ने पर

केन्द्रित रखना चाहिए। एक साथ सारी आदतों को बदल देना बहुत मुश्किल होता है इसलिए एक-एक करके शत्रु को परास्त करना ही बुद्धिमता है। इस काम मे उतावला कभी नहीं होना चाहिए।

आदतों पर विजय पाने में असफलता का सबसे खेदजनक पहलू यह है कि उसके बाद व्यक्ति को अपने पर विश्वास नही रहता। वे समझने लगता है कि वह स्वयं अपना कर्त्ता नही है, बल्कि परिस्थितियाँ और घटनाएँ तथा उसकी आदते ही सब कुछ है, वह तो केवल उनके आदेशों का पालन करने वाला सेवक मात्र है। इस प्रकार आदतो के परित्याग का रोज-रोज सकल्प करने और उसको कार्यन्वित करने मे असफल रहने से फ़ायदे की बजाए, उल्टा नुकसान हो जाता है। इसलिए आदतो को बदलने मे जल्दी न कीजिए और खूब सोच-समझ कर जब एक बार किसी आदत को छोडने का इरादा करे, तो उसे पूरा किए बिना दम न लें। सकल्प करके पूरा न करना सकल्प न करने से भी ज्यादा अहितकर है। इसलिए आदतों के विषय में कभी अपना संकल्प न तोडिए, अन्यथा आदत तो और सुदृढ़ होगी ही उल्टा आपके आत्मविश्वास की अपार हानि होगी।

आदतो का परित्याग करने के विषय में बहानेबाजी से कभी काम न कीजिए। कुछ लोग अपनी किसी आदत को हानिकारक तो समझते हैं, पर उसे छोड़ने पर तैयार नही होते। जब उनसे इसका कारण पूछा जाए, तो झट उत्तर देते है कि इस आदत को छोडने से उनके स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ने की सम्भावना है। मेरे एक मित्र अपने अत्यधिक धुम्रपान की शिकायत करते रहते है। परन्तु जब उनसे कहा जाए कि इस आदत को छोड़ क्यो नही देते, वह सहज ही मे उत्तर देते हैं कि छोड़ तो दूँ, लेकिन डाक्टर कहते हैं कि तमाकू छोड़ देने से मुझे हृदय

रोग होने की आशंका है। आदतों से चिमटे रहने वाले बहुत से लोगों का ऐसा रवैया होता है। वे किसी आदत को छोड़ने की हामी भर लेते है, लेकिन उसे पूरा नही करते, और पूछने पर अपने को निर्दोष सिद्ध करने के लिए कोई न कोई बहाना घड़ लेते है। यह बहानेबाजी उनके चरित्र को दूषित कर देती है, उनके आत्मविश्वास की हानि करती है और उन्हे कर्ममार्ग पर अग्रसर होने से रोक देती है। बल्कि सच बात यह है कि वे अपनी दूसरी हानिकर आदतों मे एक और बहानेबाजी की वृद्धि कर लेते है, जो पग-पग पर उनका रास्ता रोकती है। जब भी वह किसी काम को हाथ में लेने का संकल्प करते है, तो यह नई आदत तत्काल बीच मे आ खड़ी होती है, और उन्हें सहारा देती है कि उस काम को कल पर या फिर किसी दिन के लिए उठा रखें।

निमित्त-साधन की तरह आत्मवंचना भी आदतो के परित्याग मे बाधक होती है। आदतो को छोड़ने में बहुत बार केवल इसलिए सफलता नही मिलती कि आत्मवचना हमे सात्वना देने के लिए मौजूद होती है। आप रोज सिनेमा देखते है और कभी कभी ख्याल आता है कि यह पंसे और समय दोनों का अपव्यय है। परन्तु तभी आत्मवचना दिलासा देती है कि हिन्दुस्तानी फ़िल्मे देखना तो शायद फ़जूलखर्ची है, क्योकि उनमे बकवास के के सिवा और कुछ नही होता, लेकिन अग्रेजी फिल्मो के बारे मे यही बात नही कही जा सकती। उनसे साधारण ज्ञान की वृद्धि होती है, और आदमी घर बैठे सारी दुनिया की सैर कर लेता है। फिर मनोरंजन ही तो है। यदि दिन भर की मेहनत के बाद शाम को थोडा सा आराम भी न किया, तो फिर कमाने की जरूरत ही क्या है। यदि आप अपना सुधार करना चाहते है, तो आत्मवंचना के इस भ्रमजाल को तोड़ दीजिए, और अपने किसी

कृत्य का औचित्य मिथ्या सात्वना में तलाश न कीजिए। अपनी कमज़ोरियो का निर्पेक्ष निरीक्षण कीजिए, और उन्हे दूर करते समय 'केवल एक बार' या 'बस आज' की रिआयत से फायदा न उठाइए। क्योंकि यदि आप ने 'एक छूट' या 'एक दिन की क्षमा' की आड ली, तो फिर आपका जी चाहेगा कि इसी छूट या क्षमा से फिर एक बार लाभ उठाएँ और इस तरह आपका 'केवल आज' रोज-रोज आकर 'सदा' का पर्याय बन जाएगा।

हानिकारक आदतो से पिंड छुड़ाने का सर्वोत्तम उपाय यह है कि उनके स्थान पर लाभदायक आदते अपनाई जाएँ,ताकि पुरानी आदतो के फिर से जड़ पकड़ने की सम्भावना ही न रहे। बहुधा मनुष्य क्षुद्र विचारो अथवा अहितकर आदतो से केवल इसलिए मुक्ति लाभ नही कर पाता कि वह छोड़ने के बाद भी उनकी जगह ख़ाली छोड़ देता है। आदते जब देखती हैं कि उनकी जगह लेने वाला कोई नही आया, तो वे पुन: लौट आती हैं। इसका इलाज यह है कि एक बुरी आदत को छोड़ कर उसकी जगह एक अच्छी आदत अपनाई जाए। उदाहरण के लिए यदि आपका अधिकाश समय कल्पना के महल बनाने मे व्यतीत होता है, तो इस आदत को छोड़ने के लिए कोई अच्छी किताब पढिए, अथवा किसी विषय पर कुछ लिखने की चेष्टा कीजिए। यदि आप अर्थाभाव का शिकार हैं और हर वक्त इसी ग़म में घुले जा रहे है, तो अवकाश के समय मे कोई लाभदायक व्यवस्थाएं सोचिए। इस तरह आप हवाई किले बनाने की आदत से छुटकारा हासिल कर सकते हैं।

मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानता हूँ, जो पन्द्रह-बीस वर्ष पहले गर्मियो मे कि जब सब कोठियों वाले पहाड़ों पर चले जाते थे, घूम फिर कर ख़ाली कोठियो का निरीक्षण किया करता था। एक बार मैंने उनसे इस आदत के बारे में पूछा, तो कहने लगा

कि वह कोठियों की बनावट को देखता है, ताकि जब वह शीघ्र ही अपनी कोठी बनवाए, तो उसका नक्शा सबसे अच्छा हो। मैं उसको महत्वाकांक्षा की प्रशंसा किए बिना न रह सका।

लेकिन पिछले दिनो मुझे उन सज्जन से मिलने का फिर संयोग हुआ। आप एक सप्ताहिक पत्र जिसका सम्पादन भी शायद आप स्वय ही करते थे, बाजार मे बेच रहे थे। आप उस पत्र के मालिक नही थे, बल्कि वैतनिक कर्मचारी थे, और वेतन भी आप को नकद नहीं, बल्कि 'माल' के रूप मे मिलता था। अर्थात आपको प्रति सप्ताह पत्र की साठ प्रतियां मिल जाती थी जिन्हें बेच कर आप अपना गुजारा कर रहे थे। मैंने उन्हे उनकी पुरानी आदत की याद दिलाई, तो कहने लगे कि हाँ, कोठियों के चक्कर तो मैं अब भी लगाता हूँ। दरअसल मेरा पत्र बिकता ही कोठियों में है। इसका सम्पादक-पद संभाले अभी मुझे थोड़े ही दिन हुए हैं। मगर पत्र दिन दूनी रात चौगनी तरक्की कर रहा है। बस अब दिन दूर नही, जब मै अपनी पसन्द की कोठी बनवा लूँगा।" कह कर वह चलते बने।

मैं व्यक्तिगत रूप से जानता हूँ कि इस आदमी के मस्तिष्क में कोई विकार नहीं है। केवल इतनी बात है कि वह सपनो की दुनिया में रहता है। उसने अपने लिए सपनों की एक दुनिया बना रखी है, जो बहुत ही सुन्दर और बहुत ही सुखद है। परंतु कल्पना जगत में रहते हुए वह अपने लिए कोठी तो दूर, एक झौपड़ी भी नही बना सका। इस उदाहरण से प्रकट है कि उन्नति के लिए केवल सपने देखना ही काफी नही है। कल्पना महलों की ठोस धरती पर नीव रखने और दीवारे खड़ी करने की जरूरत है,

बीसियों काम ऐसे है, जिन्हे आप अपने खाली समय मे करके अपनी आप की वृद्धि कर सकते है आपके देखते ही देखते कमरों

ने शाम के समय कालेज मे पढ़कर वकालत पास करली है, और अव सफल वकोलो मे गिने जाते है। कितने ही नार्मल पास अध्यापको ने घर वैठे डिग्रियाँ प्राप्त की है, और अव कालेजो में प्रोफेसर है, या सरकारी अफ्सर वन चुके है। इसलिए वुरी आदतों के स्थान पर अच्छी आदतें अपनाने में त्रुटि न कीजिए।

मनोविज्ञान के विशेशज्ञो का कहना है कि आदतो में परिवर्तन के लिए अपने सकल्प की घोषणा करते रहना भी उपयोगी होता है। इसमें सदेह नही कि व्यक्ति जव अपने मित्रों और सम्वधियों के सामने कोई शपथ ग्रहण करता है, तो यथासाध्य उस पर दृढ रहने की चेष्टा भी करता है। मनुष्य स्वभावत. इस वात को पसन्द नही करता कि उसे हठी और अविश्वसनोय समझा जाए। अवश्य इस विपय मे कुछ लोगो की दृढ़ता हठधर्मी की हद तक भी वढ़ जाती है, जो फ़ायदे का वजाए उल्टा नुकसान करती है। इस लिए व्यर्थ की कस्मे नही खानी चाहिएँ, और यदि कभी भावावेश मे ऐसा हो जाए, तो वुद्धिमता से काम लेकर उसमे परिवर्तन करने की क्षमता होनी चाहिए।

इतनी वात हमेशा याद रखिए कि अाप मनुष्य है, और आप को विचार और सकल्प को असीम शक्ति प्रदान की गई है। आप जो चाहे कर सकते है, और जिस आदत को चाहे वदल सकते हैं। आप किसी काम को सम्पन्न करने, अथवा उद्देश्य को सिरे चढ़ाने का संकल्प करले, तो दुनिया की कोई ताक़त आपको सफलता प्राप्त करने से रोक नही सकती। आदतों में परिवर्तन तो मामूली वात है, आप चाहे, तो कठिन से कठिन अभियान में भी सफल हो सकते हैं। जरूरत केवल इतनी है कि आप दृढ़ता से काम ले।

सोचिए और आत्मविश्वासी बनिए

सोच विचार और आत्मविश्वास मे अटूट सम्बंध है। मनुष्य को तब तक अपने पर विश्वास नही हो सकता, जब तक कि वह किसी काम को उत्तम रीति से करने की योग्यता न रखता हो। और योग्यता तभी पैदा हो सकती है, जब वह अपनी समस्याओं का हल और अपनी सफलता के उपाय ढूढ़ सकता हो। दुनिया में ऐसे लोगों की कमी नही जिनके पास पूंजी भी है,और वे सुशिक्षित भी हैं। परन्तु वे कोई उल्लेखनीय उन्नति नही कर सके, जबकि उनके मुकाबले पर कितने ही ऐसे लोग मौजूद है, जो उक्त सुविधाएँ नहीं रखते, अर्थात न तो किसी विश्वविद्यालय के सनातकोत्तर शिक्षा प्राप्त किए हुए है, न जीवन-क्षेत्र में प्रवेश करते समय उनके पास पूंजी होती है। परन्तु वे कला-कौशल, विज्ञान व उद्योग अथवा व्यापार-जगत मे प्रसिद्धि प्राप्त करते है। उन में से कुछ ऊँचे पदों पर पहुँचते है, और कुछ वड़े-वडे कारखानों के मालिक बनते है। अतीत के महापुरुषो में वहुसंख्या उन लोगों की है, जो निर्धन परिवारों में जन्म लेने के वावजूद अपने महान कृत्यों के कारण प्रसिद्ध हुए है, और आज तक उनका नाम सम्मान के साथ लिया जाता है, जवकि उनके समकालीन धनिकों और सृष्टिपुत्रों के नाम तक से कोई परिचित नही है। इस अंतर का कारण केवल यह है कि उत्तरोक्त श्रेणी के लोग

सोच-विचार का कष्ट नही करते थे, जबकि पूर्वोक्त लोग चिंतन-मनन को अपने जीवन की बहुमूल्य निधि समझते थे,और उसी के सहारे प्रसिद्धि-शिखर पर पहुँचने में सफल हुए।

यों तो इस दुनिया मे ऐसे व्यक्तियो की संख्या कम ही होगी, जिन्हे प्रसिद्धि और नाम, यश की लालसा न हो, परन्तु मुश्किल यह है कि अधिकतर लोगों को यह मालूम ही नही होता कि वे अपने को पहचान कर और अपनी योग्यता से काम लेकर बड़े-बडे काम कर सकते है। इसकी बजाय वे स्वयं को सदैव तुच्छ, निर्बल और अयोग्य ही समझते रहते हैं। उनके विचार में कोई उपयोगी आविष्कार अथवा उत्कृष्ट कल्पना उनके बस की बात नही, इसलिए वे सदैव दूसरो पर निर्भर किए रहते हैं, और दूसरों की योग्यता देख ईर्षा अनुभव करते हैं।

उन्हे कहा जाए कि यदि वे सोचने-समझने का कष्ट करें, और परिश्रम का मार्ग अपनाएँ तो दुनिया के बड़े से बड़े सफल व्यक्ति के समतुल्य बन सकते है, तो वे तुरन्त उत्तर देते है कि यह असम्भव है हम जैसे अज्ञानी अयोग्य व्यक्ति महापुरुषों की पंक्ति मे कैसे बैठ सकते है, विशेषकर जब हमें महानता प्राप्त करने के अवसर ही प्राप्त नही है। इन बेचारों को पता ही नही होता कि सृष्टिकर्त्ता ने प्रत्येक मनुष्य को सोचने समझने की शक्ति प्रदान कर रखी है, जिससे यदि सही काम लिया जाए,तो मनुष्य आश्चर्य-जनक कार्य कर सकता है। दरअसल यह उनकी अज्ञानता ही है, जो न तो उन्हे अपनी वास्तविकता का ज्ञान प्राप्त करने देती है, और न अपने पर विश्वास करके कोई मूल्यवान कार्य करने के योग्य बनने देती है। इसलिए वे दुनिया के बाजार में तुच्छ, अयोग्य और निर्धन बनकर रहते हैं, और इसी अवस्था में अंतिम यात्रा करते है।

'जो सोचते है, वे करते हैं', 'जो चिंतन मनन के अभ्यस्त होते

है। वे सफलता के द्वार मे प्रवेश करते है। अपने मन में डूबकर पाले सुराग़ै जिन्दगी, 'सोचिए और धनवान बनिए' इत्यादि कथनों की सत्यता से केवल वही लोग इन्कार कर सकते हैं, जो स्वयं सोच-विचार के अभ्यस्त नही है, और जो नही जानते, कि मनुष्य को प्रकृति ने असाधारण बौद्धिक शक्ति प्रदान की है। परन्तु जो लोग मानवी महानता को स्वीकार करते है, उन्हे इन उक्तियों की सत्यता पर विश्वास करने मे आपत्ति नही होनी चाहिए, और उन्हें केवल इस तथ्य को स्वीकार ही नही करना चाहिए, बल्कि स्वयं भी सोच-विचार की आदत डालनी चाहिए। ताकि अपने परिश्रम का उपयुक्त पुरस्कार प्राप्त कर सके।

वास्तविकता यह कि हमारा जीवन हमारे विचारो का प्रतिबिम्ब होता है। हमारा सुख-असुख, सफलता या असफलता हमारे विचारों पर निर्भर करती है। जो लोग अपना कार्य मार्ग सोच समझ कर चुनते है, अपने व्यवसाय को उन्नत करने के विषय मे गहन विचार करते है, वे अवश्य ही सफल होते है। उन्हें चूँकि विश्वास होता है कि उन्नति का जो मार्ग उन्होने अपनाया है, वह सीधा सफलता के रग-महल को जाता है, इस लिए वे संघर्ष में कोई कसर नही उठा रखते। परन्तु जो लोग सोच-विचार को कोई महत्व नही देते, और बिना सोचे-समझे किसी कारबार मे पूंजी लगा देते है, वे शायद ही कभी सफलता का मुँह देख पाते है। परन्तु याद रखिए, मनोवाछित परिणाम केवल उसी सोच-विचार के हो सकते है, जो स्वस्थ और सुस्थित हो, और जिस से लाभ उठाने के लिए आवश्यक सामग्री भी जुटाई गई हो। इस बात को समझने के लिए एक उदाहरण लीजिए।

मोहन यह लेख पढ़ता है, और सोच-विचार के महत्व से प्रभावित होता है। इसके बाद वह तुरंत ही इस समस्या पर

विचार शुरू कर देता है कि उद-जन् बम से भी ज्यादा विनाशकारी अस्त्र कैसे बनाया जा सकता है। मोहन विज्ञान का विद्यार्थी नही है। उसे यह भी मालूम नही कि 'आणविक शक्ति' क्या होती है, और कहाँ से और कैसे उपलब्ध की जा सकती है। न उसे यह पता है कि उदजन् बम क्या होता है, और उसे कैसे तैयार किया जाता है। परन्तु वह विचार करने लगा है उदजन बम से भी ज्यादा विध्वंसक बम बनाने की समस्या पर अब आप ही बताइए कि ऐसे सोच-विचार का क्या परिणाम निकल सकता है। वह चाहे घटो इस समस्या पर सिर खपाता रहे, पर उसकी मेहनत अकारथ ही जाएगी। इसलिए नही कि मोहन सोच-विचार की क्षमता नही रखता, अथवा बौद्धिक योग्यता मे किसी से हीनतर है, बल्कि इसलिए कि मोहन ने इस प्रकार की समस्याओ पर विचार करने के लिए आवश्यक सामग्री अर्थात उपयुक्त ज्ञान उपलब्ध नही किया। अब वह हजार सिर पटके, लाख विचार सागर मे डुबकी लगाए, पर 'नए आविष्कार' के मुक्ता उसके हाथ नही आएँगे।

मनोविज्ञान के विशेषज्ञों का कहना है कि मानवी मन की दो दशाएँ अथवा परते होती हैं। एक दशा वह है, जिसकी गति-विधि मे हम अवगत रहते हैं। इसे ज्ञान अथवा चेतना कहते हैं। इसके माध्यम से हम वस्तुओ के सम्बन्ध मे जानकारी अथवा अनुभव प्राप्त करते है, और अपनी इच्छा, संकल्प अथवा विचार की अभिव्यक्ति करते है। जब हम जागृत अवस्था में होते है, तो हमारी चेतना क्रियाशील रहती है। दूसरी दशा को अचेत मन कहते हैं। इस की प्रक्रियाओ से हम अनभिज्ञ रहते है। परन्तु इसी के द्वारा हमारे शरीर की विभिन्न आंतरिक क्रियाएँ सम्पन्न होती है।

हमारा चेतन मन इन्द्रियो द्वारा जो ज्ञान उपलब्ध करता

है, वह अचेतन मन में संचित होता रहता है, जहाँ से उन्हें आवश्यकता पड़ने पर चेतना स्तर पर लाया जा सकता है। अचेतन मन एक प्रकार का गोदाम है, जहाॅ जीवन की अनुभूतियाँ, स्मृतियाॅ और अभिलाषाएँ सुरक्षित रहती है। इस गोदाम के एक कोने मे एक 'कार्यालय' है, जहाँ विचारो का निर्माण होता है। इन विचारों के लिए 'कच्चा माल' वे अनुभूतियाँ और जानकारी हैं, जो अचेतन मन में सुरक्षित रहती है। इस से स्पष्ट है कि अचेतन मन में जिस प्रकार की सामग्री संचित रहेगी, वैसे ही हमारे विचार होगे। यदि कपडे के कारखाने में अच्छी रूई प्रयुक्त होगी, तो अच्छा कपड़ा तैयार होगा। इसके विपरीत यदि कपास घटिया किस्म की होगी, तो उत्तम कोटि का कपड़ा तैयार होने की आशा नही की जासकती। इसी तरह हमारे विचार उतने ही अच्छे या बुरे हो सकते है, जितनी अच्छी अनुभूतियाँ और सद-ज्ञान हमारे अचेतन मन मे संगृहीत रहेगे।

यदि आप चाहते है कि उत्तम विचार, और सुझाव सोच सके, तो फिर अपने अचेतन मन के संग्रहालय को सद-ज्ञान से पूर्ण करने में खूब परिश्रम कीजिए। जिस समस्या का हल आप मालूम करना चाहते है, पहले उनके सम्बन्ध में पूरी जानकारी प्राप्त कीजिए। और फिर उस पर सचेत रूप से खूब सोच-विचार कीजिए। उसके बाद अपनी सारी जानकारी और चिंतन के परिणामो को अचेतन के सुपुर्द कर दीजिए। बाकी काम वह स्वयं ही कर लेगा।

दुनिया मे जितने भी प्रसिद्ध वैज्ञानिक, विद्वान, आविष्कारक और साहित्यिक हो गुजरे है, उनको सफलता और महानता का रहस्य यही है कि वे अपने अचेतन मन को उत्तम कोटि की सामग्री उपलब्ध कराते थे। वे वर्षो तक गहन अध्ययन में संलग्न रहते थे, और ज्ञान-विज्ञान की जिस शाखा मे उन को

रुचि थी, उसके सम्बन्ध में उन्होने प्राय' सभी प्राप्य जानकारी उपलब्ध की, प्रामाणिक पुस्तको का अध्ययन किया, अपने समकालीन विद्वानो से विचार-विनिमय किया, अनिर्णत समस्याओं पर दीर्घ काल तक चिंतन किया, और उसके वाद अपने सारे ज्ञान और निष्कर्षो को अचेतन मन के समर्पित कर दिया जहाँ से वे नए आविष्कारो और रचनाओ का अंतिम रूप धारण करके चेतना पटल पर प्रकट हुए । इन महानुभावों को सफलता इस तरह मिली ।

ज्ञान-विज्ञान की तरह व्यवसाए में सफलता के लिए भी इसी सिद्धान पर आचरण किया जाता है, भारत के प्रसिद्ध वैज्ञानिक और उद्योगपति श्री विश्वेश्वरिया लिखते हैं कि उत्तम विचारो और दुर्लभ सुझावों की सम्पत्ति प्राप्त करने के लिए अधिकाधिक जानकारी उपलब्ध करने का प्रयत्न कीजिए । अपने अचेतन मन के लिए उत्तम कोटि का कच्चा माल संचित कीजिए और उसपर देर तक विचार कीजिए । यदि आप ने अपने जीवन पथ का चुनाव करने मे गलती नही की, अपने काम मे रुचि लेते है, और उसे सम्पन्न करने की योग्यता रखते है, तथा अपनी समस्याओ को हल करने मे इस सिद्धांत पर चलते हैं, जिनका स्पष्टीकरण ऊपर किया गया है, तो फिर आप कठिन से कठिन समस्या का भी हल निकाल सकते है ।

इस विवरण से यह निष्कर्ष निकलना अनुचित न होगा कि प्रसिद्ध और महानता किसी की जागीर नही है । जो लोग संघर्ष करेंगे अपने अचेतन मन को उत्तम प्रकार का 'कच्चा माल, उपलब्ध कराएगे, और अपने मनपसन्द विषय अथवा व्यवसाए मे उन्नति और सफलता की सम्भावनाओ पर विचार करेंगे, वे कठिन समस्याओं का समाधान करने में असफल नही होंगे । यहीं इस तथ्य को भी दृष्टिगत रखना चाहिए कि अचेतन

मन तक प्रत्येक मनुष्य की पहुँच सम्भव है। इसका प्रमाण यह है कि कभी कभार आप को ऐसी कठिनाई आ पडती है कि उस से निकलने का कोई मार्ग ही सुझाई नही देता। परन्तु अंततः आप अपने सार्मथ्यानुसार कोई रास्ता निकाल ही लेते हैं। इससे भी ज्यादा सरलबोध प्रमाण यह हैं कि किसी प्रिय मित्र का नाम भूल जाते है। आप दिमाग पर जोर देते है, और नाम याद करने की लाख चेष्ठा करते है, परन्तु आप के सब प्रयत्न विफल होते है। कुछ दिन वाद वाग में टहलने अथवा स्नान करते समय आप को अनायास ही वह नाम याद आजाता है। जिसका अर्थ वह है कि यह नाम आपके अचेतन मन मे सुरक्षित था, और वहाँ से आप को हर वक्त सहायता मिल सकती है। इसलिए इस भ्रम मे कभी न रहिए कि अचेतना तक पहुँच केवल महापुरुषो के वश का बात है। इस चेतावनी की आवश्यकता है क्योकि दुनिया मे अधिकतर लोग केवल इसलिए अपनी योग्यता का प्रदर्शन नही कर सकते, और कोई वड़ा काम सम्पन्न नही कर सकते क्योंकि उनके ख्याल मे ज्ञान-विज्ञान और मौलिकता के जगत में नाम अर्जित करना प्रत्येक व्यक्ति का काम नही। यह योग्यता ईश्वर-दत्त ही होती है, और इस मे व्यक्तिगत चेष्टा का कोई हाथ नही होता।

इस भ्रम मे कभी मत पडिए। आप चाहे, और परिश्रम करे तो पिछले महापुरुषो की तरह आप भी मौलिकता और नवीनता के क्षेत्र में अपने अपूर्व कृत्यों से सारी दुनिया को आश्चर्यचकित कर सकते है। परन्तु आपको यह सम्मान अभी प्राप्त होगा, जब आप पहले अपने अन्दर आविश्कार-क्षमता पैदा करे, विश्वविख्यात वैज्ञानिकों और विद्वानों की तरह ज्ञानोपार्जन करे, और अपने प्रिय विषय पर सोच विचार करे। यदि अब तक आप कोई महत्वपूर्ण कार्य नही कर सके, तो इसलिए नही कि

आप असमर्थ या अयोग्य हैं, और आविश्कार की क्षमता नही रखते, वल्कि इसलिए कि अभी तक आपने उस निधि का उपयोग नही किया, जो प्रकृति ने आपको वड़ी उदारता के साथ प्रदान की है। इस धारणा की पुष्टि न्यूटन की सफलता से होती है।

सर आईज़िक न्यूटन ने जव एक पके हुए मेव को धरती की ओर गिरते देख कर गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत का आविष्कार किया था, तो उस समय तक हजारो व्यक्ति दरख्तों से फल गिरते देख चुके थे। परन्तु किसी ने कभी उसका कारण मालूम करने का कष्ट नहीं किया था। उन लोगो ने अपने अचेतन मन को ऐसा 'कच्चा माल' उपलव्ध नही कराया था, जिसकी सहायता से वे पके हुए फल को टूट कर गिरते देख अपने से प्रश्न करते कि ऐसा क्यों होता है। उनके लिए इस मे कोई अचंभे की वात नही थी। इसलिए उनके अचेतन मन ने इसका उत्तर देने की आवश्यकता भी अनुभव नही की। परन्तु न्यूटन 'क्यो' कहे विना न रह सका कारण वह वर्षो से अपने ज्ञान-भंडार को भर रहा था, और उसने अपने अचेतन मन के गोदाम को उत्कृष्ट प्रकार के 'कच्चे माल' से परिपूर्ण कर रखा था। अतः जव उसने अपने मन से प्रश्न किया, तो उसे सही उत्तर मिलने मे देर न लगी।

मि० वर्टरैंड रसल कहते हैं कि जव मैं किसी गूढ़ विषय पर लेखनी उठाना चाहता हूँ, तो पहले उसपर अच्छी तरह विचार करता हूँ, और अपनी पूरी वौद्धिक योग्यता तो उसके सव रहस्यो की जानकारी प्राप्त करने पर लगाता हूँ। उसके वाद उस विषय और उस पर अपने सोच-विचार के परिणामों को अचेतन मन के सिपुर्द कर देता हूँ। इन उदाहरणों से प्रकट है कि न्यूटन और रसल की सफलता उनके सोच-विचार की देन है। और सोच-विचार की शक्ति अमीर-गरीव सवके लिए

प्राप्य है।

सोच-विचार के लिए चुनाव अत्यन्त महत्व रखता है। इस अध्याय के प्रारम्भ में मोहन का उदाहरण दिया गया है, जो विज्ञान का विद्यार्थी न होने पर भी अपनी विचार शक्ति एक ऐसी समस्या पर व्यय करता है, जिस का उसे कुछ भी ज्ञान नही है। परिणामतः कुछ भी उसके पल्ले नही पडता। इसलिए यदि आप सोच-विचार करने को तैयार है, तो मोहन का अनुसरण कीजिए। और केवल उसी विषय या काम में अपनी योग्यता का प्रदर्शन करने की चेष्टा कीजिए, जिसके सम्बन्ध में आपको पर्याप्त जानकारी प्राप्त हो, अन्यथा आपको सफलता नहीं मिलेगी। यदि न्यूटन गुरुत्वाकर्षण का सिद्धात आविष्कृत करने की बजाए कोई नाटक या महाकाव्य लिख कर प्रसिद्धि के रंग-महल मे प्रवेश करने की चेष्ट्रा करता, तो शायद आज उसका नाम भी किसी को मालूम न होता। इसलिए पहले अनुकूल जानकारी प्राप्त कीजिए, और उसके बाद अपनी सारी शक्ति और साधन उसमें सफल होने पर लगा दीजिए। उदाहरण के लिये यदि आप उच्च कोटि के साहित्यिक बनने की योग्यता रखते है, तो आपको राजनीति पर अत्यधिक विचार आरम्भ नही करना चाहिए, बल्कि साहित्य का अध्ययन करना चाहिए,

सोच-विचार के अच्छे परिणाम कभी-कभी इसलिए नही निकलते कि व्यक्ति किसी समस्या पर विचार आरम्भ करता है तो बीच में कोई और काम आ पडता है, जिसे टाला भी नहीं जा सकता। उससे निवृत्त होकर जब फिर विचार शुरु करता है। तो विचारों की शृंखला जोड़ने में बड़ी कठिनाई होती है। इस उलझन से बचने का उत्तम उपाय यह है कि जब आप किसी महत्वपूर्ण विषय पर विचार करने बैठे, तो अपने विचारों की लिपि-वद्ध करते जाएँ। बेहतर तो यह है कि कागज को दो

भागो मे बाट ले, और उन में अनुकूल और प्रतिकूल दोनो तरह के विचार लिखते जाए। ताकि जब पुनर्विचार का समय आए, तो एक ही नजर मे मालूम हो जाए कि आप कहाँ तक पहुँच चुके थे। यह क्रम यदि कई दिन तक जारी रहे तो भी कोई हर्ज नही। ऐसे विचारो को अवश्य रद्द कर देना चाहिये, जो बाद के सोच-विचार से त्रुटिपूर्ण सिद्ध हो, और उन के स्थान पर नए विचार लिखने चाहिए। जब आप अनुभव करे कि नवीन विचारो का क्रम रुक गया है, तो एक बार फिर अपने सब विचारो की समीक्षा करे—और फिर इस सारी सामग्री को अपने अचेतन के सपुर्द कर दे, और कुछ दिनो के लिये उस समस्या को बिल्कुल भूल जाएँ। कुछ विशेषज्ञो का कहना है कि लिपिबद्ध विचारो के मसोदे को फेंकना नही चाहिये, बल्कि किसी सुरक्षित स्थान पर रख देना चाहिये, ताकि आवश्यकता पड़ने पर उसका अध्ययन किया जा सके।

यहाँ पहुँच कर चेतना का कार्य समाप्त हो जाता है। अब अचेतन मे विचार परिपक्व होते है, और किसी भी समय समस्या का हल या सही सिद्धांत चेतना स्तर पर प्रकट हो सकता है, यदि कुछ दिनो तक आपके प्रयत्न सफल न हो, तो घबराने की कोई जरूरत नही है। हतास होने की बजाए अपने विचारों पर फिर एक बार दृष्टिपात कीजिए। हो सकता है कि इस तरह कुछ और पक्ष प्रकाश मे आए, और वही निर्णायक सिद्ध हो।

ठोस सोच-विचार के लिए मित्रो, सम्बन्धियो और सहयोगियो के साथ विचार-विनिमय भी लाभप्रद होता है। बडी-बड़ी सरकारी और गैरसरकारी संस्थाओ की ओर से सम्मेलन और विचार-गोष्ठियां इसी उद्देश्य के दृष्टिगत आयोजित की जाती है, विचार-विनिमय के समय सब पक्षो की बात ध्यान से सुनिए उनके मतो का विश्लेषण कीजिए। आपके सुझाव पर जो

आपत्तियाँ उठाई जाएँ, उनका उत्तर देने की चेष्टा कीजिए। इस विधि से सोचने पर आपके अचेतन को निर्णय करने में बड़ी सुविधा होगी।

जब किसी समस्या पर देर तक विचार करने से मस्तिष्क क्लान्त हो जाए, और अधिक विचार करने को जी न चाहे, तो दिमाग पर अकारण जोर न डालिये, बल्कि तत्काल अपना ध्यान किसी दूसरे कार्य में लगाइये। थकावट सोच-विचार की दुश्मन है शिथिल मस्तिष्क से यह आशा नहीं रखनी चाहिये कि वह सोच-विचार का काम उत्तम रीति से कर सकेगा। अचेतन तभी काम कर सकता है जब मस्तिष्क स्वस्थ अवस्था मे हो।

यह काम प्रारम्भ मे बहुत कठिन मालूम होगा। यह भी सम्भव है कि प्रारम्भ मे आपके इच्छा के अनुसार कोई सुखद परिणाम न निकले परन्तु ज्यों-ज्यों आपको सोच-विचार का अभ्यास होता जाएगा त्यों-त्यों आप अपना काम सरल पाएँगे, और सहज ही में अपनी समस्याओं का हल निकाल लेंगे।

"खूब सोच-विचार के बाद समस्या को भूल जाइये, आमोद प्रमोद, पर्यटन या और किसी मनोरंजक क्रीडा मे भाग लीजिए—मैं इस बात को फिर दुहारता हूँ, और आपको परामर्श देता हूं कि विश्राम, मानसिक शान्ति और चिंताशून्यता को कभी महत्वहीन समझिये। इन्ही क्षणो मे आपकी विचार शक्ति पुनर्जीवित होगी। चन्द क्षणो मे जब आप आरामकुर्सी पर लेटे होंगे और अतीत की किसी सुहावनी अनुभूति अथवा सुखद घटना स्मृति से मन बहला रहे होंगे—अवकाश और बेकारी के यही क्षण आपके लिये हितकर सिद्ध होंगे।

इस सिद्धांत को सभी मनोविज्ञान-विशेषज्ञ पुष्टि करते हैं। वे कहते है कि कोई अछूता विचार या नवीन सुझाव का आविष्कार करने के लिए आवश्यक है कि जब मनुष्य समस्या पर

भागो मे बाट ले, और उन मे अनुकूल और प्रतिकूल दोनो तरह के विचार लिखते जाए। ताकि जब पुनर्विचार का समय आए, तो एक ही नजर मे मालूम हो जाए कि आप कहाँ तक पहुँच चुके थे। यह क्रम यदि कई दिन तक जारी रहे तो भी कोई हर्ज नही। ऐसे विचारो को अवश्य रद्द कर देना चाहिये, जो बाद के सोच-विचार से त्रुटिपूर्ण सिद्ध हो, और उन के स्थान पर नए विचार लिखने चाहिए। जब आप अनुभव करें कि नवीन विचारो का क्रम रुक गया है, तो एक बार फिर अपने सब विचारो की समीक्षा करे—और फिर इस सारी सामग्री को अपने अचेतन के सपुर्द कर दे, और कुछ दिनो के लिये उस समस्या को बिल्कुल भूल जाएँ। कुछ विशेषज्ञो का कहना है कि लिपिबद्ध विचारो के मसोदे को फैंकना नही चाहिये, बल्कि किसी सुरक्षित स्थान पर रख देना चाहिये, ताकि आवश्यकता पड़ने पर उसका अध्ययन किया जा सके।

यहाँ पहुँच कर चेतना का कार्य समाप्त हो जाता है। अब अचेतन मे विचार परिपक्व होते हैं, और किसी भी समय समस्या का हल या सही सिद्धात चेतना स्तर पर प्रकट हो सकता है, यदि कुछ दिनो तक आपके प्रयत्न सफल न हो, तो घबराने की कोई जरूरत नही है। हताश होने की बजाए अपने विचारो पर फिर एक बार दृष्टिपात कीजिए। हो सकता है कि इस तरह कुछ और पक्ष प्रकाश मे आए, और वही निर्णयक सिद्ध हो।

ठोस सोच-विचार के लिए मित्रो, सम्बन्धियो और सहयोगियो के साथ विचार-विनिमय भी लाभप्रद होता है। बड़ी-बड़ी सरकारी और गैरसरकारी संस्थाओ की ओर से सम्मेलन और विचार-गोष्ठिया इसी उद्देश्य के दृष्टिगत आयोजित की जाती है, विचार-विनिमय के समय सब पक्षो को बात ध्यान से सुनिए उनके मतो का विश्लेषण कीजिए। आपके सुझाव पर जो

आपत्तियाँ उठाई जाएँ, उनका उत्तर देने की चेष्टा कीजिए। इस विधि से सोचने पर आपके अचेतन को निर्णय करने में बडी सुविधा होगी।

जब किसी समस्या पर देर तक विचार करने से मस्तिष्क क्लांत हो जाए और अधिक विचार करने को जी न चाहे, तो दिमाग पर अकारण जोर न डालिये, बल्कि तत्काल अपना ध्यान किसी दूसरे कार्य मे लगाइये। थकावट सोच-विचार की दुश्मन है शिथिल मस्तिष्क से यह आशा नही रखनी चाहिये कि वह सोच-विचार का काम उत्तम रीति से कर सकेगा। अचेतन तभी काम कर सकता है जब मस्तिष्क स्वस्थ अवस्था में हो।

यह काम प्रारम्भ मे बहुत कठिन मालूम होगा। यह भी सम्भव है कि प्रारम्भ में आपके इच्छा के अनुसार कोई सुखद परिणाम न निकले परन्तु ज्यों-ज्यो आपको सोच-विचार का अभ्यास होता जाएगा त्यो-त्यो आप अपना काम सरल पाएँगे, और सहज ही मे अपनी समस्याओ का हल निकाल लेगे।

"खूब सोच-विचार के बाद समस्या को भूल जाइये, आमोद प्रमोद, पयटन या और किसी मनोरजक क्रीडा मे भाग लीजिए—मै इस बात को फिर दुहारता हूँ, और आपको परामर्श देता हूं कि विश्राम, मानसिक शान्ति और चिताशून्यता को कभी महत्वहीन समझिये। इन्ही क्षणो मे आपकी विचार शक्ति पुनर्जीवित होगी। चन्द क्षणो मे जब आप आरामकुर्सी पर लेटे होगे और अतीत की किसी सुहावनी अनुभूति अथवा सुखद घटना स्मृति से मन बहला रहे होगे—अवकाश और बेकारी के यही क्षण आपके लिये हितकर सिद्ध होगे।

इस सिद्धात को सभी मनोविज्ञान-विशेषज्ञ पुष्टि करते हैं। वे कहते है कि कोई अछूता विचार या नवीन सुझाव का आविष्कार करने के लिए आवश्यक है कि जब मनुष्य समस्या पर

संतोपजनक रूप से विचार कर चुके, तो कुछ देर के लिए उसे भूल जाए, और अपना ध्यान किसी और दिशा में लगाए। एक पाश्चात्य विद्वान लिखता है कि "बुद्धिमान् विचारक किसी शास्त्रीय समस्या पर इतना विचार नही करता कि मस्तिष्क की शक्तियो का अन्त हो जाये, और न किसी समस्या पर विचार करने के तुरन्त वाद किसी कठिनतर समस्या पर आरम्भ करता है।" दूसरे विचारको और उपाय-शास्त्रियों के कथन और आचरण से भी इस दृष्टि-कोण की पुष्टि होती है।

अमरीका के भूत पूर्व प्रधान मि० ट्रूमैन अपनी डायरी में लिखते है कि मै क्षोभ से साधारणतः कम ही प्रभावित होता हूँ। परन्तु प्रधान रूज़वेल्ट की मृत्यु से मुझे वस्तुतः वहुत ही आघात पहुचा। और यह देखते हुए इसकी और वृद्धि हुई कि प्रधान-पद का भारी वोझ अव मेरे कधो पर पड़ने वाला था। मुझे मालूम नही था कि जिस व्यक्ति को सारा देश देवता समान पूजता है, उसके निधन पर देश-वासियो की क्या प्रतिक्रिया होगी, और न मुझे इस वात की जानकारी थी कि इस महान दुर्भाग्य का युद्ध की गति, युद्धोपयोगी सामग्री की तैयारी और अन्य महत्त्वपूर्ण समस्याओ पर क्या प्रभाव पड़ेगा। यह तो मैं जानता था कि स्वर्गीय प्रधान ने मि० चर्चिल और मार्शल स्टालिन से कई वार भेट की थी। परन्तु इन सम्मेलनो मे कौनसी समस्याओ और क्या-क्या विपयो पर वार्ता हुई, और क्या निर्माण किए गए इसका मुझे कुछ भी पता नही था। मै इन चिन्ताओ का सामना करने मे स्वय को विल्कुल असमर्थ पा रहा था। अतः मैं चिंताओं मे डूवने की वजाय सीधा अपने घर चला गया। सगीत से आनन्दित होता रहा। फिर अपने परिवार के साथ खाना खाया और सो गया।

यही कार्य-विधि मि० ट्रूमैन की समस्या का सही हल थी।

इसकी उपयोगिता की आप कभी न उपेक्षा कीजिए। विश्राम और मनोरजन मानसिक उलझनों का सर्वोत्तम उपचार है। ये नवीन और उत्कृष्ट विचारों के आगमन के लिए उपयुक्त वातावरण की सृष्टि करते है। शायद ही किसी वैज्ञानिक को कोई नया विचार अथवा नवीन सिद्धान्त उस समय सूझा हो, जब वह अपनी प्रयोगशाला में कार्यरत हो। सभी बड़े आविष्कार विश्राम के समय हुए है, अथवा किसी दूसरे कार्य में संलग्न होने की अवस्था में। न्यूटन द्वारा गुरुत्वाकर्षण और प्राचीन यूनानी दार्शनिक अर्शमिदश द्वारा जल में वस्तुओं का भार घटने के सिद्धांत का आविष्कार इसके दो प्रकट उदाहरण है। विश्व के महान विचारकों, दार्शनिकों और महाकवियों का सर्वसम्मत निर्णय है कि जव नवीन विचारों का आगमन रुक जाए, तो सोचना छोड़ कर वगीचे में टहलना चाहिए।

हमारे राष्ट्रीय नेताओं मे महात्मा गाँधी से लेकर वर्तमान प्रधान मत्री पं० नेहरू तक सभी इस नियम का पालन करते रहे है। गाँधीजी अपनी जिस शक्ति को 'आन्तरिक ध्वनि! कहते थे, वह वास्तव में उनका अचेतन मन ही था। वह समस्या पर विचार करने के बाद अपने अंतःकरण पर छोड़ देते थे। और शीघ्र ही उन्हें अपने प्रश्न का उत्तर मिल जाता था। पं० नेहरू का यह नियम सा था कि उन्हें जब कभी गहन सोच-विचार करना होता, वह अपने नित्य कार्य से अवकाश ले लेते थे, पहाड़ पर चले जाते या किसी एकान्त स्थान पर जा बैठते। चन्द दिनो तक वह खूब सोचते है, और जो कुछ करना है, उसका निर्धारण करते। उसके बाद वह किसी पाठशाला या आश्रम में जाकर बच्ची के साथ खेल-कूद में मग्न हो जाते। किसी जँगली क्षेत्र में हों, तो आदिवासियों के साथ नाचते-गाते, और इस प्रकार स्वयं को नई शक्ति और स्फूर्ति से प्रेरित करके गम्भीर कार्य

की ओर प्रवृत्त होते। तव उन्हे सही दिशा मे कदम उठाते किसी प्रकार के सकोच या अनिश्चितता का अनुभव नही होता था। उनका अचेतन स्वयमेव ही उन्हे सही दिशा का ज्ञान उपलब्ध कराता था।

क्लाति के अतिरिक्त व्यग्रता और शोक-क्रोध भी सफल विचार मे वाधक होते है। आप उद्विग्नता की दशा मे किसी गम्भीर समस्या पर विचार नही कर सकते, न कोई योजना सगठित कर सकते है। ऐसी अवस्था मे सोचना न सोचने से भी ज्यादा अहितकर है, क्योकि जव अस्थिर मन के साथ किसी समस्या पर विचार करने के वाद उपयोगी परिणाम नही निकलते, तो मनुष्य भयभीत हो जाता है, और वह अनुभव करने लगता है कि वह कठिन समस्याओ पर सोच-विचार करने की योग्यता ही नही रखता। इस प्रकार वह अपनी उन्नति की सब सम्भावनाओ का अत कर देता है।

दुश्चिताओ को वर्तमान युग का सव से घातक रोग समझा जाता है। इसमे सदेह नही कि आज का समुन्नत मनुष्य सुख और शान्ति की खोज मे मारा-मारा फिरता है; परन्तु चितायें उसका पीछा नही छोडती। अमरीका के एक अरव पति के सबध मे वतलाया जाता है कि वह अपना आधा धन ऐसे व्यक्ति को देने पर तैयार था, जो उसे रात के समय मीठी नीद सुला सके। एक और अरवपति भूख न लगने के शोक मे रो-रो कर मर गया। इनका इलाज किसी चिकित्सक के वस का रोग नही था। क्योकि दुश्चितायो के कारण उन्होने जो बीमारियाँ स्वय को लगा ली थी, उनको औषधी किसी डाक्टर के पास नही, स्वय उन्ही के पास थी, परतु वे उसका सेवन करने मे असमर्थ थे। वर्तमान युग मे आत्महत्या की घटनाये भी पहले की अपेक्षा इसी कारण ज्यादा होती है, कि आज का मनुष्य अधिक चिता-

ग्रस्त और अशॉत है। इस मानसिक अशाँति और व्यग्रता के कारण वह ठीक से सोच नही सकता कि उसे क्या करना है। परेशानी की हालत मे सोचना बिल्कुल फजूल है। विश्वास न हो, तो किसी मित्र के पास जाइये, जो परेशान हो, आर उससे कहिए कि किसी जटिल समस्या को सुलझाने मे सहायता करे। वह तुरत उत्तर देगा कि इस समय मै परेशान हूँ, इसलिए क्षमा चाहता हूँ। फिर किसी वक्त आइये। जब मेरा दिमाग ठिकाने हो।' आपका दोस्त गलत नही कहेगा। वास्तव मे वह उस समय आपकी कुछ भी सहायता नही कर सकता।

गरज परेशानी इन्सान की योग्यता पर बहुत बुरा प्रभाव डालती है। यही दशा उस समय होती है, जब मनुष्य उत्तेजित या क्रोधित हो। आये दिन हत्याकाड होते है जो मुख्यत. उत्तेजना का दुष्परिणाम है। हत्यारा हत्या कर बैठता है और उसके बाद पछताने बैठता है। क्रोध और उत्तेजना से बुद्धि का लोप होता है। अब आप स्वय ही विचार कीजिए कि जब क्रोधावेश में हत्या जैसे घोर अपराध घटित हो सकते है, तो इस अवस्था में सदविचार का प्रश्न ही कहाँ उठता है। इसलिए यह कहना अनुचित नही कि सोच-विचार के सुपरिणाम तभी निकल सकते है, जब आप आवेश और उत्तेजना को अपने निकट न आने दे। व्यग्रता चूँकि एक मानसिक दशा है, इसलिए उससे बचने का सर्वोतम उपाय यही है कि आप तत्काल किसी दूसरे काम मे व्यस्त हो जाइए। परेशानी मे अधिकतर अभावात्मक विचार उत्पन्न होते है। इसलिए उन पर काबू पाने के लिए भावात्मक विचारों का सहारा लीजिए। अर्थात कोई आनन्ददायक या हास्यरस-युक्त बात सोचिए। हँसिये और खुश होइये, अथवा किसी ऐसी क्रीडा में तन्मय हो जाइए, जो आपको किसी दूसरी उलझन में डाल दे, जैसे शतरंज की बाजी कैसे जीती जाए, या

टूटी हुई मेज़ को ठीक कैसे किया जाए।

यदि आपकी दुश्चिताओं का सम्बन्ध आर्थिक स्थिति या किसी ऐसी जटिलता से है, जो तात्कालिक हल चाहती है, तो अपनी कठिनाई का तटस्थ होकर निरीक्षण कीजिए, और यों सोचिए कि यह समस्या आप की नही, किसी दूसरे की है, और वह आप से इसे हल करने में सहायता चाहता है। इस तरह आप फौरन ही मूल समस्या को देख सकेंगे। बहुधा हम जिस समस्या या कठिनाई के कारण परेशान हो जाते हैं, वास्तव में वही हमारी समस्या नही होती, बल्कि समस्या कुछ और ही होती है, और अकारण ही गौण बातों पर पड कर अपना समय और शक्ति नष्ट करते हैं। उदाहरण के लिए आपको तीन दिन के अन्दर मकान का किराया अदा करना है। अब आप यदि यों सोचने बैठें कि "यह तो बडी मुसीबत है। भला तीन दिन में किराया कैसे अदा किया जा सकता है। यह मालिक मकान कितना दुष्ट है। अब देखो, यदि मैं किराया न दे सका तो मुझे मकान खाली करना होगा। भला यह भी कोई इन्साफ है। मुझे बाल-बच्चों समेत सडक पर बैठना होगा। भगवान जाने मेरी क्या दशा होने वाली है, इत्यादि। अब आप ही बताइए, इस प्रकार के विचारो का क्या फायदा! जरा तटस्थ होकर सोचे, तो आप पर सहज ही मे प्रकट हो जायेगा कि असल समस्या किराए को मांग या मालिक मकान की दुष्टता नही है, बल्कि समस्या कुछ रुपयों की है, अर्थात आपको तीन दिन के अन्दर एक निश्चित रक़म का प्रबन्ध करना है, तो फिर यो क्यो नहीं सोचते कि इतनी रकम इस समय के भीतर किन-किन उपायो से उपलब्ध की जा सकती है। कहने का मतलब यह है कि आप मालिक मकान की नीचता सम्ब[illegible] व्यर्थ के विचारो को छोड कर मतलब की बात सोचिए, एक दिन खूब सोचिए। और रुपया हासिल करने के सब

सम्मिलित उपायों की छानबीन कर लीजिए। दूसरे दिन इस समस्या पर जरा भी ध्यान न दीजिए और अपने काम में मस्त रहिए। तीसरे दिन आपको या तो रुपया मिल जाएगा, या फिर मालिक मकान से दो-दो हाथ करने की तरकीब सूझ जाएगी। याद रखिए, अचेत मन मनुष्य को कभी धोखा नही देता।

कुछ लोग निर्मूल अंशकाओं के कारण आतंकित और चिंता-ग्रस्त रहते है। इस प्रकार की दुश्चिताओं से बचने की संभावना निर्भर करती है इस बात पर कि व्यक्ति कितना यथार्थवादी है। जब हम जानते है कि हमें एक न एक दिन मरना है और मृत्यु अटल है, तो फिर मरने से सौ बार मरने की क्या जरूरत। युद्ध दुर्भिक्ष महामारी कोई भी कारण हो, मरना एक ही बार है। फिर एटम् बम् और हाइड्रोजन बम के नाम सुन-सुन कर भय-भीत होने से क्या लाभ ? यदि ऐसी अवस्था में कल्पना शक्ति का सहारा लिया और अतीत और वर्तमान की सुखद घटनाओं को स्मरण किया जाए, तो ऐसी कल्पित आशंकाएँ बड़ी हद तक कम हो जाती है।

कुछ भी हो इस बात को हमेशा याद रखना चाहिए कि जहाँ तक सोच-विचार का सम्बन्ध है, भय और आशका भी वही काम करते हैं, जो व्यग्रता के विषय में बतलाया गया है, अर्थात वे सही विचार में बाधक होते है। और सोच-विचार के बिना उन्नति असम्भव है।

पुरानी डगर पर चलने वाले और पक्षांध व्यक्ति न कोई उच्च-विचार प्रस्तुत कर सकते है और न कोई नया आविष्कार कर सकते है। लकीर की फकीरी हमें कभो कोई बड़ा काम करने का अवसर नही दे सकती। वैज्ञानिक, विचारक और आविष्कारक बनने का सौभाग्य उन्ही लोगों को प्राप्त होता है, जो स्वतंत्र और विद्रोही होते है। रूस आज अन्य समुन्नत

देशो से आगे निकल गया है, तो इसका एकमात्र कारण यह है कि वहाँ हर प्रकार की रूढ़ियो के विरुद्ध संघर्ष जारी रहता है। वहाँ किसी नए विचार अथवा पद्धति की केवल इसलिए निन्दा नही की जाती कि उससे किसी पुरानी धारणा या प्रथा का खंडन होता है। वहाँ हर क्षेत्र से नवीन विचार वालो का आदर सम्मान किया जाता है। यही कारण है कि आज दुनिया भर में जितने वैज्ञानिक और विचारक है, उनसे ज्यादा अकेले रूस मे हैं।

परन्तु दुनिया के बहुत बडे भाग में अभी मनुष्य संकीर्ण विचारो और अंधविश्वास पर विजय प्राप्त नही कर सकता। मानवता का बहुत बड़ा अंग अभी तक पुरानी परम्पराओ और कुप्रथाओ की शृङ्खलाओ में जकड़ा हुआ है। आज जरूरत इस बात है कि हम श्री नेहरू के शब्दो मे अपने दिमागो के पट खोल दे, और जैसे हम राज-नीतिक अर्थो मे स्वतंत्र हुए है, वैसे ही अपने विचारो और भावनाओ मे भी स्वतंत्र हो।

इसका अर्थ यह नही कि हमारे बडो ने हमारे कल्याण और पथप्रदर्शन के लिए जो काम किए है, उन्हें हम भुला दे अथवा उनका आदर न करे। नि:सन्देह हमे अपने पूर्वजो का सम्मान करना चाहिए, और उन्हे मान देना चाहिए। परन्तु वे जो कुछ कह गए या हमारे शास्त्रो मे लिख गए, वह आज भी सही है, ऐसा समझने की गलती हमे नही करनी चाहिए। सच तो यह है कि नए ढंग से सोचना और नए विचारों को अपनाना एक प्रकार से अपने पूर्वजो का अनुसरण करना ही है, क्योंकि उन्होंने भी अपने पूर्वजो के विचारों में ऐसा ही संशोधन किया था। उनकी तरह हमें भी पुराने विचारों का अध्ययन आलोचक की दृष्टि से करना चाहिए। उनकी अच्छाई-बुराई और उपयोगिता-अनोपयोगिता का निश्चय करना चाहिए। और फिर स्वयं अपने

स्वतंत्र विचार प्रस्तुत करने में संकोच नही करना चाहिए। याद रखिए, सफलता का द्वार प्रत्येक व्यक्ति को स्वय बनाना पड़ता है, यहाँ तक कि उसके बनाए हुए द्वार में से उसकी अपनी सतान भी नही गुजर सकती। इसलिए आप निश्चित होकर स्वतन्त्र सोच-विचार का मार्ग अपनाइए, और इस बात को कोई महत्व न दीजिए कि आपके विचार पुराने ग्रथो मे लिखे अथवा आपके समकालीन लोगों द्वारा व्यक्त किए जाने वाले विचारो से नहीं मिलते। शायद यही भिन्नता आप की महानता का कारण बन जाए।

सोच-विचार की आदत से मनुष्य को केवल यही लाभ नहीं होता कि वह अपनी समस्याओं का हाल मालूम करने के योग्य हो जाता है, और अपनी कठिनाइयों को दूरकर सकता है। बल्कि सबसे बड़ा फ़ायदा यह होता है कि इस योग्यता के बल पर उसे अपने पर विश्वास हो जाता है। जब वह अनुभव करता है कि वह हर समस्या का हल निकालता है और कठिनाई पर विजय पा लेता है, तो उसे अपनी शक्ति और श्रेष्ठता का विश्वास हो जाता है। और जैसा कि बतलाया गया, यही आत्मविश्वास सफलता की कुँजी है।

जीवन का संगठन

जीवन के व्यापार से इस तरह निपटना कि जीवन-यात्रा पूरे विश्वास और सफलता के साथ जारी रखी जा सके, आसान काम नही है। जब मनुष्य युवावस्था मे पदार्पण करता है तो अगणित जिम्मेदारियाँ उसके कंधों पर आ पड़ती है। उसे अपने लिए जीविका का साधन या व्यवसाए चुनना पड़ता है। इसका केवल मनोवांछित होना ही काफी नही, वह लाभ-प्रद भी होना चाहिए। जीवन सगिनी का चुनाव भी कम महत्व की बात नहीं, इसमे जरा सी ग़लती या असावधानी भविष्य को असुखद बना सकती है। इसी स्थल पर अपनी व्यस्तताओं, क्रीड़ाओं और साथी सम्बन्धियो का चुनाव भी करना पड़ता है। सारांश यह है कि जीवन-निर्वाह के लिए एक निश्चित कार्यक्रम अथवा नित्य व्यवहार को अपनाना पड़ता है। वे विषय और समस्याएँ इसके अलावा हैं, जो अकस्मात उपस्थित हो सकती हैं। इन्ही दिनों में इनका हल मालूम करना और नाना प्रकार की गुत्थियों को भी सुलझानापड़ता है। प्रकट है कि इस व्यापार मे सफलता नही मिल सकती, यदि मनुष्य जीने का सलीका न रखता हो। परन्तु तथ्य यह है कि शायद यही एक ऐसी कला या व्यवसाए है, जिसके सीखने सिखाने की तरफ़ सब से कम ध्यान दिया जाता है।

एक शिक्षा विशारद ने उचित ही कहा है कि लोग उन घोड़ों के प्रशिक्षण पर तो बहुत ध्यान देते है, जो घुड़दौड़ में भाग लेते है, परन्तु अपनी सन्तान को जीवन की दौड में भाग लेने के योग्य बनाने का कोई प्रबन्ध नही करते। इसके उत्तर में कहा जायगा कि मछली को तैरना कौन सिखाता है। जिस तरह वह बडी मछलियो को तैरते देख कर तैरना सीख लेती है, इसी तरह हमारे बच्चे भी हमे देखकर जीने का ढंग मालूम कर सकते है। फिर उन्हें विभिन्न कलाओं की शिक्षा भी तो दी जाती है इसके बावजूद यदि वे जीने की कला से अनभिज्ञ रह जाएँ, तो दोष हमा·ा नही, स्वय उनका है। कुछ लोग इस प्रकार के तर्क 'उपस्थित करके भले– ही सतुष्ट हो जाएँ, परन्तु इस सिद्धांत को केवल उसी अवस्था मे युक्तिसगत समझा जा सकता था, जब हम जीवन को इतना जटिल न बनाते। गुफाओ मे जीवन व्यतीत करते, दरख्तो की छाल से देह ढाँपते और जानवरों के माँस और जंगली फलों पर गुजारा करते।

मछलियाँ सृष्टि के प्रथम दिन से तैरने और अपना पेट भरने की जो कला जानती है, उसमें इन अरबों वर्षों में ज़रा भी परिवर्तन नही हुआ, न उन्नति हुई। मछलियों ने गगनचुम्बी भवन नही बनाए, एटम् बम् का निर्माण नहीं किया। उन्होने 'थल पर जीवित रह सकने की कला आविष्कृत नही की, न हवा के समुद्र में उड़ने की। परन्तु मनु की सतान ने किसी एक अवस्था में रहने पर संतोष नही किया। उसके उद्योग से नित्य नए आविश्कार हो रहे हैं, जो जीवन को जटिल बना रहे है। इतना जटिल कि एक पत्रकार के शब्दों में 'आज बहुत से नवयु ‌क केवल इस लिए समय से पहले बूढे हो रहे है कि वे चौबीसो घन्टे क्या होगा' की चिंता में घुलते रहते हैं। ऐसी अवस्था में जोने की कला का महत्व सहज ही में समझा जा सकता है।

जीवन के व्यापार में कुछ लाग केवल इस लिए असफल रहते हैं कि उन्हें वचपन और किशोरवस्था में जीवन-निर्वाह का तरीका सिखाया ही नही जाता। वे प्रवल बोध-शक्ति रखते हैं। परिस्थितियो को समझने की योग्यता रखते हैं। उन्हे जो काम सौंपा जाए, उसे कुशलतापूर्वक सम्पन्न कर सक्ते है। उनमे सफल व्यवसायी, योग्य राजनीतिज्ञ या कुशल कलाकार बनने के सभी गुण होते है, परन्तु उन्हे अपने लक्ष्य तक पहुचने में पग-पग पर कठिनाइयो का सामना करना पड़ता है, क्योंकि वे जीवन-निर्वाह की कला का ज्ञान नही रखते।

वे वड़े साहसी होते है, कठिनाइयों को कोई महत्व नही देते। परन्तु वे कठिनाइयो पर कावू नही पा सकते, क्योकि वे उन्हें अपने मार्ग से हटाने का हुनर नही जानते। उन से प्रायः कोई ऐसी गलती हो जाती है कि उनकी सव कोशिशे मिट्टी मे मिल जाती हैं। उन्हे केवल जीवन का रहस्य न जानने के का'ण असफलता का मुँह देखना पड़ता है। निरंतर असफलताएँ उन्हें हताश और भयभीत कर देती है, यहाँ तक कि वे निराश और दुर्भाग्य की मूर्ति वनकर रह जाते है।

ये लोग जीवन-क्षेत्र मे ऊँचे सिद्धांतो के साथ प्रवेश करते हैं। ये सत्यपरता निर्भयता, उदारहृदयता और देश सेवा के ऊँचे आदर्शों को अपनाने की शपथ लेते हैं। परन्तु उनका सही उपयोग नही कर सकते। इसलिए शीघ्र ही अनुभव करने लगते है कि दुनिया के वाजार मे उनके माल की मांग नही है। इस तरह सदेह और दुविधा उनके मार्ग का भारी पत्थर सिद्ध होते है।

उनकी यह धारणा कि अव ये उच्च मूल्य अनावश्यक हो गए है, सही नही होती। ससार में आज भी इनके ग्राहक मौजूद है। दुनियां आज भी उन व्यक्तियो को सिर आँखो पर विठाती है, जो सत्य भाषी हो, सत्य निष्टा हो और उदारहृदय हों।

इन गुणों वाले व्यक्तियों को आज भी सफलता-प्राप्ति में कोई विशेष कठिनाई नहीं होती। दुनिया के अधिकतर सफल लोग ऐसे ही गुण-सम्पन्न थे। सच तो यह है कि वास्तविक महत्ता के अधिकारी आज भी वही लोग समझे जाते है, जिनका लक्ष्य लाभ-उपलब्धि और मान-प्रतिष्ठा प्राप्ति से ज्यादा जन-सेवा और देश कल्याण होता है। परन्तु ये लोग जीवन-यापन की कला से अनभिज्ञ होने के कारण इन गुणो से लाभ नही उठा सकते, इसलिए साहस छोड़ बैठते है।

इनकी एक मुश्किल यह भी होती है कि ये अपने लिए कोई लाभदायक कार्य-क्षेत्र नहीं चुन सकते। वे जीवन पर्यन्त अपने कार्य विभाग बदलते रहते है। यह पथभ्रष्टता और घुमक्कड़पन, संभव है, शुरू-शुरू मे इतना हानिकार न हो। परन्तु इसे स्थायी रूप से अपनी प्रवृत्ति ही बना ली जाए, तो यह जीवन के अतिम दिनों में एक भयंकर प्रकोप का रूप धारण कर जाती है।

जो लोग युवावस्था को पार करने के बाद भी अपने लिए उपयुक्त काम की खोज में रहते है, वे कभी, सुखी-सम्पन्न नही हो सकते। उनका बहुमूल्य समय इसी खोज में व्यय हो जाता है। ये लोग किसी एक काम से सम्बन्ध रखें, तो उल्लेखनीय उन्नति कर सकते है। वे नहीं जानते कि सहयोगियों के साथ किस प्रकार का बर्ताव रखना चाहिए। वे शिष्टाचार से भी परिचित नही होते। वे मित्रों का चुनाव नही कर सकते। वे भरी सभा में भी अकेले ही होते हैं। वे चूकि कल्पना जगत में बसते है, इसलिए व्यवहारिक दुनिया के समान्य विषय भी उनके लिए कठिन समस्याएँ हैं। वे न तो स्वय को वातावरण मे डाल सकते है और न वातावरण को अपने अनुकूल बना सकते है। इसलिए उन्हे अपने प्रयत्नो का फल परेशानी के रूप मे मिलता है।

यिद आप इन्ही लोगो मे है, यदि माता-पिता के अनुचित

लाड-प्यार के कारण आप जीने की कला नही सीख सके, और अब स्वय को जीवन क्षेत्र मे अकेला और असहाय पाते है, यदि आप सुशिक्षित और बुद्धिमान होने के बावजूद अभी तक अपने कार्य क्षेत्र का चुनाव नही कर सके, और अपने प्रयत्नों को सफल न होते देख हताश हो चुके है और सघर्ष को व्यर्थ समझने लगे हैं, तो हथियार डालने की बजाए यह मालूम करने की चेष्टा कीजिए कि आपकी असफलता के कारण क्या है । इस अनुसंधान के बाद यदि आप इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि आप की असफलता का कारण जीने की कला से अनभिज्ञता है, तो आपको निराश होने की जरूरत नही, आप चाहे और अपने सुधार के लिए तत्पर हो जाएँ तो अब भी इस कला को सीख सकते है।

इस तथ्य को कभी न भुलाइए कि जीवन सकटों के इस युग मे भी अपने अन्दर मनोरजन की काफी सामग्री रखता है । उसे प्राप्त करने के लिए जीवन के पुर्नसंगठन पर तत्पर हो जाइये । दृढ सकल्प से काम लीजिए और इस विश्वास के साथ आगे बढिए कि विजय आप की है ।

जीवन के पुनर्संगठन के लिये सर्वप्रथम अतीत का अध्ययन आवश्यक होता है । उसका निरीक्षण कीजिये । अतीत में आपसे जो गलतियाँ हुई है, उनकी एक सूची ब ाएये । अपनी अब तक की सफलताओं की भी एक सूची बनाएये दोनों की तुलना कीजिए । आप पर प्रकट होगा कि आपका अतीत इतना निराशजनक नही है, जितना कि आपको अपने अन्दर कई कमियाँ और कमजोरियाँ दिखाई देगी, तो अच्छाइयाँ और गुण भी नजर आएँगे । तब आप महसूस करेगे कि वास्तव मे आप असफल नही है, आपने जीवन के शिक्षालय से बहुत कुछ उपलब्ध किया है । आप के पास धन सम्पत्ति का अभाव सही, पर उस दौलत की

कमी नहीं जो मानवता का आभूषण समझी जाती है।

अतीत के महान व्यक्तियों पर दृष्टि डालिए, उनमें कितने करोड़पतियों के नाम है ? शायद बहुत कम, क्या इससे सिद्ध नही होता कि मनुष्य की वास्तविक महानता धन-ऐश्वर्य में निहित नही है ' तो फिर आप धन न होने पर निराश क्यों हो ? यदि आप विद्या-भूषण से सज्जित है, आपका चरित्र निष्कलंक और आचरण आदर्श है, और इतना काफी कमा लेते है कि आपको किसी के आगे हाथ फैलाने की अलश्वकता न हो, तो आप स्वय की कमी तुच्छ न समझे। आप मनुष्य है, उच्च पद रखने वाले मनुष्य; जिस पर सारी मानवता गर्व कर सकती है।

मैं यह नही कहता कि आप धन-सम्पत्ति को प्राप्त करने की चेष्टा न करे, अथवा मान-प्रतिष्ठा के लिये प्रयत्नशील होने को पाप समझे, परन्तु मै यह अवश्य चाहता हूँ कि धन और पदैश्वर्य को इतना महत्व व दिया जाये कि उन पर सिद्धात भी निछावर कर दिए जाएँ और उचित-अनुचित हर साधन से केवल धनोपार्जन को ही अपना लक्ष्य बना लिया जाये। और यदि इन तरीकों से भी उद्देश्य सिद्ध न हो, तो फिर किस्मत् को रोया जाए।

धन-दौलत, मान-प्रतिष्ठा और प्रसिद्धि के लिए प्रयास करते हुए कुछ लोग उन कर्त्तव्यों की अवहेलना करते है, जो उन पर परिवार के पालन-पोषण और संतान की शिक्षा-दीक्षा के रूप मे लागू होते है। वे धनवान बनने को अत्याधिक लालसा में बच्चों की उचित अवश्यकताओं पर भी कुछ व्यय करना पाप समझते है। अपने काम में इतने व्यस्त रहने है कि बच्चो को प्यार करने तक का अवकाश नही निकाल पाते। वे अपने मित्रो के भी किसी काम नही आते, उन्हें हर वक्त अपनी ही पड़ी रहती है, वे जागते सोते हर दम इसी विचार में विमग्न रहते

हैं कि धन कैसे प्राप्त किया जाये, अथवा उच्च पद को कैसे पहुँचा जाए।

जो लोग अपने आप मे तल्लीन रहते है, वे निष्ठ बन्धुओं के अभाव का प्रायः रोना रोते है। इसका दोष वे उन लोगों को देते है, जिन्हे वे अपना मित्र वनाना चाहते है, परन्तु वास्तव मे दोप इनका अपना होता है। असल में वे अत्यंत ही स्वार्थी और अहमान्य होते हैं, और चाहते हैं कि उनके मित्रगण भी केवल उन्ही की भलाई और उन्नति के लिए सोचा करे, इस अवस्था में कौन उनका मित्र वनना पसंद करेगा। इन लोगो के दृष्टिकोण मे यह त्रुटि इसलिए होती है कि वे धन और प्रसिद्धि को लालसा मे सफलता के वास्तविक मर्म को नही समझते। उनके विचार मे सफलता का अर्थ केवल धन ऐश्वर्य है। इसलिए वे उनकी प्राप्ति की चेष्टा में सारी दुनियाँ को भुला देते हैं, सबसे अलग-अलग रहते हैं, और उनकी समस्त अभिरुचियाँ केवल स्वयं तक सीमित रह जाती हैं।

जीवन के सम्वन्ध मे यह दृष्टिकोण स्वस्थ नही है। सफलता के लिए सघर्प अवश्य कीजिए। आगे—और आगे आपका अभीष्ट लक्ष्य जरूर होना चाहिए। परन्तु सफलता की लालसा में जीवन की सामान्य खुशियो से स्वय को वंचित न कीजिए। भाई-वन्धुओ और दुनियाँ को भुला न दीजिए। उनकी उपेक्षा करके सम्भव है, आप कोई पद प्राप्त कर ले, या कुछ धन एकत्रित कर लें। परन्तु इसका जो मूल्य आप चुका रहे है, वह इतना अधिक है कि आपकी कई असफलतायें उस पर निछावर की जासकती है।

इसके विपरीत यदि आप उन्नति के लिए प्रयत्न करते हुए अपने परिवार का भी ध्यान रखे, और मित्रो के प्रेम और निष्ठा का जवाब वैसे ही प्रेम और निष्ठा से दे, तो आपके यही घर वाले और मित्र आपके सवल सहायक सिद्ध होगे, और आपकी

बहुत सी कठिनाइयाँ दूर करने में आपका हाथ बटायेंगे। इस प्रकार आप सफलता के शिखर पर अपेक्षा अधिक शीघ्रता से पहुँचेंगे।

अपनी योग्यता का अनुमान लगाने मे कभी भ्रम में न पड़िए कुछ लोग केवल इसलिए सुखी जीवन व्यतीत नही कर सकते और सफलता के दर्शन नही करते, कि वे माध्यम कोटि की योग्यता रखने के बावजूद स्वयं को बुद्धि और प्रतिभा की मूर्ति समझते है। इस भ्रम के कारण उन्हें जीवनमें बहुत हानिउठानी पड़ती है। यह लोग यानि थोड़ा धैर्य से काम ले,और प्रारम्भ मे छोटे व्यवसाय को भी कुशलता-पूर्वक सम्पन्न करे तो वे शीघ्र ही उच्च पद प्राप्त कर सकते है। परन्तु यह लोग अपने उतावले और चंचल वृत्ति के कारण क्रमश: उन्नति करने मे विश्वास नहीं रखते। वे पहले ही पग पर उच्चतम पद प्राप्त करना चाहते है। और जब उसे हासिल करने मे सफल नही होते क्रोध और सताप के वशीभूत होकर अपने जावन को दुखमय उपाय बना लेते हैं। इस विपत्ति से बचने का उत्तम उपाय यह है कि अपनी योग्यता का अनुमान लगाने में यथार्थवाद से काम लिया जाये।

अपने पर विश्वास के अलावा जीवन और उसकी उपयोगिता पर विश्वास, मनुष्य मात्र के उज्जवल भविष्य पर विश्वास और मित्रों व सहयोगियों पर विश्वास, जिससे नित्य सम्बन्ध रहता है, सफलता के दर्शन करने तथा संतुष्ट और प्रसन्न जीवन व्यतीत करने के लिए आवश्यक है। आत्मविश्वास का शाब्दिक अर्थ यद्यपि स्वयं पर विश्वास है,परन्तु मनुष्य स्वयं पर विश्वास तभी कर सकता है, जब उसे अपने अलावा कुछ और लोगों और सहयोगियों पर विश्वास हो।

जीवन की लम्बी यात्रा में मनुष्य को अगणित अन्य लोगों

के सहयोग की आवश्यकता होती है। पारीवारिक जीवन का सुख-सन्तोष इस बात पर निर्भर करता है कि घर के सब सदस्य परस्पर प्रेम करते हो, एक-दूसरे का सम्मान करते हों, और एक-दूसरे पर विश्वास करते हो। वह घर जिसके सदस्यों में पारस्परिक विश्वास नही होता, वे धन-धान्यपूर्ण होने पर भी जीवन के आधे सुखो से वचित होता है।

आपको अपने ,र विश्वास है। आप समझते है कि नौकरी की बजाय व्यापार मे पैसा लगाएँ, कपड़े की दुकान खोल ले तो आय मे पर्याप्त वृद्धि हो सकती है। परन्तु आप इस योजना में बड़े भाई को विश्वास मे नही लेते, बल्कि उसे परामर्श देने के योग्य ही नहीं समझते अथवा पहले ही फैसला कर लेते हैं कि वह तो हर अवस्था मे आपकी योजना का विरोध ही करेगा। इसलिए उसे सूचित किए बिना पिता से रुपया लेकर कारोबार मे लगाना चाहेंगे, तो उसका परिणाम क्या निकलेगा! यही न कि यदि पिता ने पैसा दे भी दिया, तो भाइयो मे ठन जायेगी भ्रात-भाव के स्थान पर शत्रुता का सूत्रपात होगा, और सभव है नौबत मुकदमेबाजी तक पहुँच जाये। दोनो भाइयो के मतभेद का कुप्रभाव सारे परिवार पर पडेगा और इस प्रकार आपका बड़े भाई पर अविश्वस सारे घर के सुख-चैन का अत करने का कारण बन जायेगा।

घर के बाद मोहल्ले को लीजिए। यदि आप पडोसियो पर विश्वास नही करेंगे तो वे भी आपको सदेह की दृष्टि से देखेंगे। आपके अविश्वास का उत्तर अविश्वास से दिया जायेगा, जिससे अकारण ही खिचाव पैदा होगा। और न केवल अपना जीवन कटु और कष्टपूर्ण हो जाएगा, बल्कि आपका अविश्वास दूसरों की खुशियो के लिए भी घातक सिद्ध होगा। यदि इस क्षेत्र को कुछ और विस्तृत किया जाए, तो आप देखेंगे कि आपका रवैया

सारे समाज को प्रभावित कर सकता है। जिसका अनिवार्य परिणाम यह होगा कि समाज आपको मुँह नही लगाएगा, और आपको अकेलेपन पर सन्तोष करना पडेगा। प्रकट है कि जो व्यक्ति सांसारिक गतिविधियों में भाग लेकर ऊपर उठना चाहता है. उसे अकेलापन कितना हानिकारक हो सकता है।

मनुष्य एक सामाजिक जीव है। वह स्वभावत. मेल-जोल को पसन्द करता है। वर्तमान जनतंत्रीय युग में तो कोई व्यक्ति सफल हो ही नही सकता, जब तक वह दूसरों का सहयोग प्राप्त न करे। इन परिस्थितियों में दूसरों पर विश्वास करके अपने परिचय-प्रभाव के क्षेत्र को सीमित बनाने की मूर्खता वही कर सकता है जो अपने लिए गढा खोदने पर कटिबद्ध हो।

नौकरी या व्यवसाय के क्षेत्र में भी पारस्परिक विश्वास के बिना काम चल नही सकता। आप किसी व्यापारिक सस्था के व्यवस्थापक है, आपके आधीनस्थ कई छोटे अधिकारी और क्लर्क काम करते है। यदि आप उनपर विश्वास न करें तो आप को हर छोटे अफसर और क्लर्क के काम पर हर वक्त नजर रखनी पड़ेगी, हर चिट्ठी का स्वय जवाब देना होगा। प्रकट है कि ये सारे काम आप अकेले नही कर सकते। यदि कर सकते, तो इतने बडे कार्यालय की आवश्यकता ही क्या थी, अब यदि आप अविश्वास के कारण एक-एक खत का जवाब लिखने बैठ जाएँ, तो आपका जो असली काम है, वह तो धरा ही रह जायेगा। साराश यह है कि व्यवहारिक दुनियाँ में आपको दूसरों पर विश्वास करना ही पड़ता है।

कुछ लोग केवल इसलिए सफल नही होते कि वे अपने पर तो दूसरो का विश्वास चाहते है, पर स्वय दूसरों पर विश्वास नही करते। उन्हें दूसरों की कोई बात, कोई सुझाव ईमानदारी पर आधारित दिखाई नही देती। इस प्रकार जब वे एक दीर्घ

काल अविश्वास को अपना नियम बनाए रखते है, तो वे जीवन के सौन्दर्य और उपयोगिता पर भी विश्वास गँवा बठते है और अतत: स्वय अपने आप पर सन्देह करने लगते हैं। जब उन्हें व्यक्ति बेईमान, स्वार्थी और अयोग्य दिखाई देता है,तो वे जीवन को ही एक धोखा और मारीचिका समझने लगते है। मानवी जीवन चूँकि विचारो का प्रतिबिम्ब होता है, इसलिए व्यक्ति जब चौबीसो घटे चारों ओर छल-कपट और झूठ का साम्राज्य देखेगा, तो उसे अंततः अपने भीतर भी उसी की छाप दिखाई देगी। इस प्रकार वह न स्वयं अपने उद्देश्यों की सत्यता पर विश्वास कर सकेगा, और न उनकी पूर्ति के लिए दूसरों का सहयोग प्राप्त कर सकेगा अब चाहे वह कितना ही योग्य और प्रतिभाशाली क्यों न हो वे न तो अपने कारोबार को उन्नत कर सकेगा और न किसी संस्था या विभाग का कुशल व्यवस्थापक सिद्ध होगा। ऐसे व्यक्ति को पग-पग पर असफलताओ का सामना करना पड़ेगा। और यह सफलता उसके आत्म-विश्वास पर आक्रमण करेगी। वह अनुभव करने लगेगा कि जब एक संस्था का संचालन नही कर सकता तो इसका अर्थ यही है कि उसकी योग्यता का कोई अस्तित्व नही है। यदि वह कोई योजना तैयार करेगा तो उसे विश्वास न होगा कि वह त्रुटिविहीन है। ऐसी स्थिति में उसकी योजना के सफल होने की क्या संभावना हो सकती है इस प्रकार अविश्वास का शिकार होकर अपनी योग्यताओ के पुरस्कार से वंचित रह जायेगा।

जीवन के संगठन के लिए कुछ और नियम भी आवश्यक हैं। एक यह कि अपनी जानकारी की सदैव वृद्धि करते रहना चाहिए। समय बड़ी तेजी से बदल रहा है, कल की जानकारी आज पुरानी हो जाती है, कल के विचार आज की आवश्यकताओं पर पूरे नही उतरते। इसलिए आपको हमेशा समय के

साथ कदम मिलाकर चलना चाहिए।

इसके लिए उत्तम उपाय नई-नई पुस्तकों, पत्रिकाओं तथा समाचार-पत्रों का अध्ययन है, परन्तु पुस्तकों और पत्र पत्रिकाओं के अध्ययन से समुचित लाभ तभी हो सकता है, जब आप उनका चुनाव बड़ी सावधानी से करें। एक पाश्चात्य विद्वान ने ठीक ही कहा है कि कुछ पुस्तकों को केवल देख लेना ही पर्याप्त होता है; कुछ पुस्तकों को एक बार पढ़ लेना चाहिए। लेकिन कुछ पुस्तकें ऐसी है जिन्हें बार-बार पढ़ने और आत्मसात करने की आवश्यकता होती है।

अंतिम शब्द

हम बड़ी चेष्टाओ के बाद इस तथ्य से अवगत हुए हैं कि आत्मविश्वास का तात्पर्य क्या है, और जीवन के निर्माण में उसका क्या महत्व है ? हमने महापुरुषो के जीवन से यह शिक्षा ग्रहण की है कि यदि अपने पर विश्वास किया जाए, तो बड़े से बड़े अभियान मे सफलता प्राप्त की जा सकती है, और महान कार्य किए जा सकते हैं। हम पर यह रहस्य भी खुल चुका है कि हम मनुष्य-सचमुच महान शक्ति रखते है, हमे विधाता ने अक्षय विभूतियाँ प्रदान की हैं। यदि हम उन्हे विकसित करने और उनसे काम लेने पर तैयार हो जाएँ, तो निश्चय ही सफलता के रगमहल मे प्रवेश कर सकते है, अपने देश और राष्ट्र की सेवा कर सकते हैं, ओर मनुष्य मात्र की उन्नति में भाग ले सकते है।

हमें शायद पहली बार उन सिद्धांतो, नियमो और उपायों से परिचय प्राप्त हुआ है, जिन्हे कार्यान्वित करने से हम आत्म-विश्वासी बन सकते हैं, और वह शक्ति अपने अन्दर पैदा कर सकते है, जो पहाडो को भी रास्ता देने पर बाध्य कर देती है। अब हम उस स्थल पर पहुँच चुके है, जिसे जीवन निर्माण का पहला चरण कहा जाता है। यह यात्रा यह सघर्ष हमारे लिए कितना हितकर होगा, यह निर्भर करता है इस बात पर कि हम

आत्मविश्वास के महत्व और उसकी स्थापना के नियमों से परिचित होने के अलावा उनके प्रकाश में अपने जीवन के पुन.संगठन के लिए तत्पर भी है या नहीं तो फिर क्या यह हमारा मनुष्योचित् कर्त्तव्य नहीं है कि इस ज्ञान से जो हमें इतने उद्योग के बाद प्राप्त हुआ है, भरपूर लाभ उठाने के लिए कर्म-मार्ग पर अग्रसर हो जाएँ ?

छोटा आदमी	[कुमार कश्यप]	३·७५
यह बस्ती यह लोग	[हरिदत्तशर्मा]	३·५०
राख की परतें	[कमल शुक्ल]	३ २५
तूलिका	[सॉमरसेट मॉम]	५ २५
प्रेम पुजारिन	[प० सुदर्शन]	२.२५
कौन किसी का ?	[रवीन्द्रनाथ टैगोर]	२.२५
नीरजा	[रवीन्द्रनाथ टैगोर]	२.२५
समाज का अत्याचार	[शरत् चन्द्र चटर्जी]	२·७५
पंछी, पिंजरा और उडान	[शरण]	३ ५०
डाल का पंछी	[शरण]	४ ७५
३० लाख के हीरे	[तीर्थराम फिरोज़पुरी]	२·५०
उमराव जान 'अदा'	[अनु० गुलशन नन्दा]	४ ५०

कालिदास साहित्य :

कुमार सम्भव	[अनु० शरण]	१·२५
मालविकाग्निमित्र	[अनु० शरण]	१·२५
नलोदय	[अनु० शरण]	१·२५

मनोविज्ञान :

बच्चे कब क्या सीखते हैं	[अ० अ० "अनन्त"]	३·५०

यौन-विज्ञान :

बर्थ कन्ट्रोल, क्या, क्यों, कैसे ?	[डा० केवलधीर]	३·२५

स्पोर्ट्स तथा खेल कूद

खेले कैसे ? (सचित्र)	[पी० एन० अग्रवाल]	५ २५
क्रिकेट (सचित्र)	[पी० एन० अग्रवाल]	१ ७५
हाकी, फुटबॉल (सचित्र)	[पी० एन० अग्रवाल]	१ ५०